ISSN No. 0970-9398

राजभाषा भारती

वर्ष : 46 अंक 167 जून, 2024

भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग

सिलीगुड़ी में पूर्व एवं पूर्वोत्तर क्षेत्रों के लिए आयोजित संयुक्त क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन में महिला सशक्तीकरण पर आधारित 'राजभाषा भारती' अंक 166 का विमोचन करते हुए तत्कालीन माननीय गृह राज्य मंत्री श्री निशिथ प्रामाणिक जी।

सिलीगुड़ी में पूर्व एवं पूर्वोत्तर क्षेत्रों के लिए आयोजित संयुक्त क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन में पुरस्कार प्रदान करते हुए तत्कालीन माननीय गृह राज्य मंत्री श्री निशिथ प्रामाणिक जी तथा अन्य मंचासिन अतिथिगढ।

राजभाषा भारती

वर्ष : 46 अंक : 167 जून, 2024

> भाषा की सरलता, सहजता और शालीनता अभिव्यक्ति को सार्थकता प्रदान करती है, हिंदी ने इन पहलुओं को खूबसूरती से समाहित किया है।
>
> -नरेन्द्र मोदी, प्रधानमंत्री

संरक्षक

अंशुली आर्या

सचिव, राजभाषा विभाग

प्रधान संपादक

डॉ. मीनाक्षी जौली

संयुक्त सचिव, राजभाषा विभाग

उप सचिव (पत्रिका)

अनिल कुमार

उप संपादक

डॉ. धनेश द्विवेदी

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। सरकार अथवा राजभाषा विभाग का उससे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

पत्र-व्यवहार का पताः

उप संपादक (पत्रिका)

राजभाषा विभाग

एनडीसीसी-II भवन, चौथा तल,

बी विंग, जय सिंह रोड,

नई दिल्ली-110001

ईमेल-patrika-ol@nic.in

वेबसाइट-rajbhasha.nic.in

❖ सचिव, राजभाषा विभाग का संदेश

❖ संयुक्त सचिव, राजभाषा विभाग का संदेश

लेख :

क्र. सं.	शीर्षक	लेखक का नाम	पृष्ठ सं.
1.	मातृभाषा में शिक्षा की आवश्यकता	राम सुधि	05
2.	वर्तमान समय में हिंदी शिक्षण में बदलाव की आवश्यकता है	डॉ. दिनेश कुमार गुप्ता	11
3.	राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के आलोक में जनजातीय शिक्षा	योगेश कुमार मिश्र	15
4.	शिक्षा में बहुविषयक परिप्रेक्ष्य : एक दृष्टिकोण	डॉ. रविता पाठक	17
5.	समकालीन हिंदी कविता में जन पक्षधरता और वर्गीय चेतना	मुकेश कुमार	22
6.	साहित्यिक, सांस्कृतिक विरासत और देशभक्ति के स्वरों में हिंदी	पद्मा मिश्र	27
7.	घुमंतू बंजारा समुदाय के विविध संस्कारः साहित्य और संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में	प्रो. शैलेन्द्र कुमार शर्मा	30
8.	पर्यटन उद्योग में एक नया संयोजनः भू–पर्यटन	डॉ. बासव नन्दन महन्त	40
9.	हिन्दी की प्रमुख वेब पत्रिका 'हिंदी समय' का विश्लेषणात्मक अध्ययन	डॉ. शैलेश शुक्ला	42
10.	तकनीकी क्षेत्र में हिंदी भाषा का विकास	लेफ्टिनेंट डॉ. शबाना हबीब	50

ISSN No. : 0970-9398

रा
ज
भा
षा
भा
र
ती

क्र. सं.	शीर्षक	लेखक का नाम	पृष्ठ सं.
11.	21वीं सदी की रोजगारोन्मुखी हिंदी	प्रवीण कुमार सहगल	54
12.	विश्व की भाषाई विविधता का व्यापक अवलोकन	शेर सिंह	59
13.	प्रेमचंद की पत्रकारिता और 'हंस' के योगदान की पड़ताल	प्रो. वीरेन्द्र सिंह यादव	63
14.	देश में प्रचलित विविध भाषाएँ एवं बोलियाँ और उनके समक्ष चुनौतियाँ	डॉ. विमलेश शर्मा	67
15.	स्वाधीनता संग्राम में महिला पत्रकारों की भूमिका	डॉ. अनु चौहान	74
16.	बोलियों से समृद्ध होती हिंदी	विकास कुमार बघेल	79
17.	जंग–ए–आजादी, हिंदी साहित्य और राष्ट्रीयता	निशा सहगल	81
18.	स्वदेशी तकनीकी से विकसित भारत की ओर	डॉ. शंकर सुवन सिंह	87
19.	फ्रेडरिक पिन्काट–विदेशी धरती के महान हिंदी साधक व उन्नायक	अखिलेश आर्येन्दु	91
20.	बैंकों में बढ़ते साइबर अपराध और उनकी रोकथाम के उपाय	राजीव कुमार	94
21.	हिंदी भारत की राजभाषा से विश्व भाषा की ओर	सुजीत कुमार मेहता	100
22.	यूरेशिया और भारत में हिंदी का वर्तमान और भविष्य	प्रोफेसर सुधीर प्रताप सिंह	104
23.	लोक कथा में लोकमन– संदर्भ : भोजपुरी लोक कथाएँ	डॉ. साक्षी	115

अंशुली आर्या, आई.ए.एस.
सचिव
ANSHULI ARYA, I.A.S.
Seceretary

सत्यमेव जयते

भारत सरकार
राजभाषा विभाग
गृह मंत्रालय
GOVERNMENT OF INDIA
DEPARTMENT OF OFFICIAL LANGUAGE
MINISTER OF HOME AFFAIRS

दिनांक : 04 जून, 2024

संदेश

यह अत्यंत प्रसन्नता का विषय है कि राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय की पत्रिका **'राजभाषा भारती'** के अंक 167 का प्रकाशन किया जा रहा है।

राजभाषा विभाग विगत 48 वर्षों से राजभाषा हिंदी के प्रचार–प्रसार की दिशा में कार्य कर रहा है। विभाग ने समय की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए हिंदी के अनेक ई–टूल्स विकसित किए हैं ताकि तकनीकी और हिंदी का समन्वय स्थापित करते हुए हिंदी भाषा के विकास की गति को तीव्र किया जा सके। विभाग द्वारा विकसित 'कंठस्थ' अनुवाद टूल आज विश्व स्तरीय होने के साथ–साथ अपनी स्मृति में 1.5 करोड़ वाक्यों को समाहित करते हुए अत्यंत विश्वसनीय बन गया है। भारत सरकार के अनेक मंत्रालय/संस्थान 'कंठस्थ' की मदद से गुणवत्तापूर्ण अनुवाद करने में सक्षम हो रहे हैं। इसी प्रकार विभाग द्वारा 'हिंदी शब्द सिंधु' नामक बृहत एवं सर्वसमावेशी शब्दकोश का भी निर्माण किया जा रहा है, जिसमें साहित्य के शब्दों के साथ तकनीकी, विज्ञान, मीडिया आदि के शब्द भी शामिल किये गये हैं। आठवीं अनुसूची में शामिल भारतीय भाषाओं के प्रचलित शब्दों को भी इस शब्दकोश में समाहित किया गया है।

'राजभाषा भारती' के माध्यम से मैं यह आह्वान करती हूं कि विभाग द्वारा विकसित तकनीकी टूल्स का ज्यादा से ज्यादा उपयोग कर राजभाषा कार्यान्वयन की गति को तीव्र करें।

हार्दिक शुभकामनाओं सहित।

(अंशुली आर्या)

डॉ० मीनाक्षी जौली
संयुक्त सचिव
DR. MEENAKSHI JOLLY
JOINT SECRETARY

सत्यमेव जयते

भारत सरकार
GOVERNMENT OF INDIA
गृह मंत्रालय
MINISTRY OF HOME AFFAIRS
राजभाषा विभाग
DEPARTMENT OF OFFICIAL LANGUAGE
चतुर्थ तल, एन. डी. सी. सी.-II भवन,
4th FLOOR, N.D.C.C.-II BHAWAN,
जय सिंह रोड, नई दिल्ली–110001
JAI SINGH ROAD, NEW DELHI-110001

दिनांक : 04 जून, 2024

संदेश

'राजभाषा भारती' का अंक 167 आपके सम्मुख लाते हुए अपार हर्ष का अनुभव हो रहा है।

विभाग द्वारा प्रकाशित पत्रिका **'राजभाषा भारती'** नित नये सोपान चढ़ रही है। इसके पिछले अंक को महिलाओं पर केन्द्रित कर प्रकाशित किया गया था, जिसमें अपने–अपने क्षेत्र की शीर्ष महिलाओं के साक्षात्कार सहित अत्यंत रोचक एवं प्रेरणादायी लेख प्रकाशित किये गये थे। इस अंक का विमोचन माननीय गृह राज्य मंत्री श्री निशिथ प्रामाणिक जी के कर–कमलों से पूर्व एवं पूर्वोत्तर क्षेत्रों के संयुक्त क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन में किया गया।

राजभाषा भारती का अंक 167 राजभाषा के क्रमिक विकास, मातृभाषा में शिक्षा की आवश्यकता, बैंकों में बढ़ते साइबर अपराध और उनकी रोकथाम के उपाय, पर्यटन उद्योग पर आधारित लेख तथा ई माध्यम में हिंदी की वर्तमान स्थिति जैसे समसामयिक विषयों पर आधारित है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि पूर्व की तरह यह अंक भी पाठकों की अपेक्षाओं पर खरा उतरेगा। आपके सुझावों की प्रतीक्षा रहेगी।

अशेष शुभकामनाएं।

मीनाक्षी जौली
(डॉ. मीनाक्षी जौली)

ISSN No. : 0970-9398

मातृभाषा में शिक्षा की आवश्यकता

–राम सुधि

शोध सार :

जीवन के सर्वांश–अधिगम और अभिव्यक्ति–का महत्वपूर्ण हिस्सा माध्यम रूप में भाषा के चयन का है। सर्वोत्कृष्ट उन्नति और उत्पादन हेतु भाषा के किस रूप अर्थात् राजभाषा, राष्ट्रभाषा, मानक भाषा, मातृभाषा आदि का चयन उपयुक्त होगा यह विषय विवाद का विषय है। असमंजस इस बात का बना रहता है कि राजभाषा जहाँ राजकीय प्रयोजनों में प्रयुक्त शुष्क तथा जनता की भावनाओं से दूर की भाषा हो सकती है, तो वहीं मानक भाषा व्याकरणिक क्लिष्टताओं और सैद्धांतिक अवधारणाओं से पुष्ट, जबकि राष्ट्रभाषा और मातृभाषा जनता की भाषा होती है, समाज की भाषा होती है, जिससे जनता के हृदय के तार जुड़े होते हैं। स्पष्ट है कि हृदयंगम अधिगम की अभिव्यक्ति के साथ ही काल्पनिकता, सर्जनात्मकता, मौलिकता और संज्ञानात्मक विकास की अवधारणा तभी अच्छी तरह फलीभूत हो सकती है जब उसे अभिव्यक्ति का कोई ऐसा माध्यम भी मिले जिसमें सहृदय की सुरुचि हो तथा माध्यम भी सहज–सरल–बोधगम्य हो। यह अधिकांश संभावनाएँ मातृभाषा में मिलती हैं। ऐसे में संस्कृति के संरक्षण और विकास से प्रारम्भ होकर, सर्वसुलभ, सहज–सरल–बोधगम्य, मनोरंजनात्मक, सृजनात्मक, प्रायोगिक भाषा के साथ ही अधिकारों की संरक्षक, क्षेत्रीयता की संवाहक, बुनियादी कौशल की प्रेरक भाषा के रूप में मातृभाषा समादृत है। यह न केवल जनता में आत्मविश्वास की भावना को प्रबल करती है बल्कि आपसी जुड़ाव के भाव से लबरेज हो उन्नति की राह प्रशस्त करती है। ऐसी मातृभाषा किसी भी समूह या क्षेत्र की कोई भी पारिवारिक–सामाजिक, मातृक भाषा हो सकती है, आवश्यक नहीं कि यह हिंदी जैसी कोई राष्ट्रीय भाषा ही हो। यह तमिल, तेलगू, कन्नड़, मलयालम, मराठी, गुजराती जैसी कोई क्षेत्रीय भाषा भी हो सकती है और खोरठा, मणिपुरी, नागपुरी जैसी उपभाषा या बोली भी हो सकती है। अध्ययन के मूल 'अधिगम' की प्रक्रिया में मातृभाषा की आवश्यकता के महत्त्व को रेखांकित करते हुए सारगर्भित रूप में तो कवि मनीषियों ने यहाँ तक कहा है–

"मातृभाषायां परित्यज्य येन्यभाषामुपासते,
तत्र यान्ति हि ते यत्र सूर्यो न भासते।"

(अर्थात 'जो मातृभाषा का त्याग कर अन्य भाषा अपनाते हैं, वहाँ ज्ञानरूपी सूर्य का उदय नहीं होता'।)

बीज शब्द :

मातृभाषा, राष्ट्र भाषा, राजभाषा, मानक भाषा, अधिगम, सृजनात्मकता, कल्पनाशीलता, संवेगात्मकता, संस्कृति, संज्ञानात्मक विकास, बुनियादी कौशल, अनुच्छेद 120, 210, 350(क)।

मुख्य आलेख :

मातृभाषा का प्रश्न समाज और भाषा में अपने विस्तार तथा मानकता का प्रशस्ति गान नहीं, न ही संकुचित क्षेत्र एवं अर्थ संकोच की हीन भावना की उद्घोषणा है। सुभाषितों में मनीषियों की उक्ति है कि 'सा विद्या या विमुक्तये' अर्थात् विद्या वही जो हमें बन्धनों से मुक्त करे, सहज–सरल–सौम्य रूप को अंगीकार कर जीवन के गहनतम् पहलुओं को मानवीय चेतना के अभीष्ट हिस्सों के रूप में संजोए। मातृभाषा के मूल में अंतर्निहित शब्दांश 'मातृ' मां सी उदारता, सरलता, ममत्व के बोध रूप में अधिगम हेतु प्रमुख उपादान प्रदान करता है। उपादान भी ऐसा जिसमें खुशबू है अपनेपन की, लगन की, संलिप्तता की, कल्पनाशीलता की आदि आदि। आधुनिक युग में वैश्वीकरण की छाया तले मातृभाषा का प्रश्न एक नए दायरे का संवाहक बना, जो संस्कृति की जड़ों को सहेजने के साथ ही मानव में आत्मविश्वास जगाता है।

ISSN No. : 0970-9398

मातृभाषा शब्द की शाब्दिक व्याख्या "वह भाषा जो बालक माता की गोद में रहते हुए सीखता है। माँ से ग्रहण की हुई भाषा"[1], "अपने घर में बोली जाने वाली भाषा"[2] के रूप में भले ही की जाती रही हो किन्तु यह शब्द इतना संकुचित अर्थ वाला नहीं है। वास्तव में मातृभाषा मां की भाषा के साथ ही उस परिवार, समाज, परिवेश की भाषा है, जिसमें कोई बच्चा अपनी आँख खोलने के साथ ही सीखना प्रारम्भ करता है अर्थात् परिवार या समुदाय की वह भाषा जिसे कोई बच्चा अपने जीवन के प्रारम्भिक विकास के समय से ही माँ, परिवार, समाज आदि से विशिष्ट प्रयासों तथा व्याकरणिक संगतियों के बिना अनौपचारिक रूप से जीवन की मूलभूत क्रियाओं के संपादन के माध्यम रूप में सीखता है। इस भाषा में माँ या परिवार से प्राप्त भाषा के साथ ही समाज, परिवेश की भाषा भी शामिल होती है। "इस भाषा से ही बच्चा अपने रोज बढ़ते, विस्तृत होते संसार के बारे में ज्ञान प्राप्त करता है, उससे संबंध स्थापित करता है। ये संबंध केवल बौद्धिक जानकारी के ही नहीं स्थानीय, सामाजिक, सांस्कृतिक, भावनात्मक तथा संवेगात्मक भी होते हैं। अपने भौतिक तथा मनोवैज्ञानिक ज्ञान तथा सहज जिज्ञासा से बच्चा अवचेतन स्तर पर ही संसार की खोज करता जाता है और इस तरह अपने आपको उसमें स्थापित भी करता जाता है।"[3] हालाँकि इस भाषा में एक समाज के अंदर परंपरागत विकास के क्रम में एक अर्द्धमानकता सी आ जाती है और वही उस भाषा की कसौटी होती है; जिस पर भाषा की संगति–असंगति, उपयुक्तता– अनुपयुक्तता, शलीलता–अश्लीलता की तार्किकता का परीक्षण किया जाता है।

मानव जीवन ताउम्र शिक्षार्थी का जीवन है। वह सृष्टि में जन्मते ही सीखना प्रारम्भ कर मृत्युशैय्या पर अंतिम साँसों को गिन मृत्यु का इंतजार करते हुए भी सीखता रहता है। सीखने की इस प्रक्रिया में भाषा एक मध्यस्थ की भूमिका का निर्वहन करती है जो कि निस्संदेह मातृभाषा से प्रारम्भ होकर अग्रिम यात्रा का अनुसरण करती है। गौरतलब है कि शिक्षा की इस व्यवस्था में कोई भी भाषा दो रूपों में हमारे समक्ष आती है– एक विषय के रूप में अतल गहराइयों में उतरने के रूप में। दूसरे, माध्यम के रूप में अन्य सभी विषयों को अपने अनुकूल समायोजित करने में। स्पष्ट है मातृभाषा भी इन्हीं दो रूपों में हमारे समक्ष अनावृत्त होती है।

विषय रूप में मातृभाषा का अध्ययन भाषा की साहित्यिक और व्याकरणिक विशेषताओं के जटिलतम से जटिलतम तथा सरलतम से सरलतम सिद्धांतों को जानने–समझने की क्रिया है। ऐसे अध्ययन द्वारा किसी भाषा की गूढ़तम बातों, उपलब्धियों, सीमाओं को व्यक्त किया जाता है जिससे उसकी समृद्धि, प्राचीनता आदि का पता चलता है। विषय रूप में मातृभाषा का अध्ययन मातृभाषा के साहित्य के माध्यम से संस्कृति का संवाहक हो सकता है तो वहीं व्याकरण माध्यम से अन्य भाषाओं की संभावनाओं का विकल्प। जहाँ तक मातृभाषा के विषय रूप में अध्ययन की बात है तो इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि 'क्षेत्रीय भाषाओं का अध्ययन' के अंतर्गत अधिकांश व्यक्तियों की मातृभाषा की अतल गहराइयों की थाह लेने की भरपूर कोशिश की जा रही है और इसके समर्थन में राष्ट्रीय पाठ्यचर्चा की रूपरेखा 2005 (फ्रेमवर्क दस्तावेज), नई शिक्षा नीति 2020 तथा राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2022 में स्पष्ट प्रावधान भी किए गए हैं तथा इन पर कमोवेश अमल भी हो रहा है।

शिक्षा में मातृभाषा की विशिष्ट आवश्यकता तो शिक्षा के माध्यम रूप में मातृभाषा के अंगीकरण की है। जहाँ पर भाषा की कसौटी का निर्धारण, परीक्षण नहीं बल्कि प्रयोगों द्वारा पुष्टि की जाती है तथा जटिलतम, दुरूहतम तथा पारिभाषिक विषयों का माध्यम भी मातृभाषा को बनाया जाता है।

मातृभाषा में प्रदत्त शिक्षा का सर्वप्रमुख प्रदेय तो उस भाषा के साहित्य विशेष से सम्बद्ध तथा भाषा रूप में स्वयं संस्कृति के संरक्षण तथा भावी विकास में समाहित होता है। कोई भी भाषा समाज की अभिव्यक्तियों के साथ ही समाज का उपादान भी होती है तथा वह कुछ लोक–गीतों, लोक–कथाओं, मूल्यों, संस्कारों, तीज–त्योहारों, रीति–रिवाजों,

शिष्टाचारों से प्रगाढ़ रूप में बंधी होती है; जिसे उसकी मूल भावना के साथ ही उसी मधुरता, लयता के साथ अन्य भाषा स्वीकार नहीं कर पाती। ऐसे में मातृभाषा में शिक्षा की आवश्यकता इस अतुल्य–अमूल्य धरोहर के संरक्षण के साथ ही इसके साथ जुड़े समाज की भावनाओं के सम्मान हेतु भी है। मातृभाषा संस्कृति के उन विशिष्ट उपादानों–जैसे संस्कृति विशेष के शब्द, पहनावा, खानपान, लोकगीत, लोककथाएं, नृत्य, मानवीय मूल्य आदि– की संरक्षक के साथ ही उस जीवंत परंपरा की संवाहक भी है जो विशिष्ट अवसरों, त्योहारों आदि पर गाने, बाजे, अस्त्रों–शस्त्रों के साथ दिखाई देती है। चूंकि मातृभाषा के साथ लोगों का जुड़ाव बहुत अधिक होता है, फलतः इनके संरक्षक, ग्राहक, संवाहक भी उसी समूह के सदस्य अधिक होते हैं जिसकी वह विशेषता होती है। मसलन "भाषा संस्कृति के निर्माण में सहायक होती है, भाषा द्वारा हम अपनी संस्कृति व्यक्त करते हैं, भाषा स्वयं भी संस्कृति का महत्त्वपूर्ण अंग है.....संस्कृति सामाजिक और प्राकृतिक परिवेश पर विजय पाने का एक साधन है। उसमें मनुष्य के भाव, विचार, संस्कार, संवेदनाएँ सभी शामिल हैं। भाषा भी ऐसी ही संस्कृति है।"[4]

सृजनात्मकता, कल्पनाशीलता और मौलिकता किसी भी विकासशील समाज की प्राथमिकता होती है, जिसके द्वारा संज्ञानात्मक विकास और बुनियादी कौशल की अनिवार्यताओं की पूर्ति होती है। वस्तुतः कल्पना के मूल से ही सृजन क्षमता विकसित होती है और कल्पना की व्यावृत्ति की जड़ उन्हीं तत्त्वों से पोषित होती हुई पुष्पित–पल्लवित होती है जो हमारे अन्तरतम अवचेतन में गहरे रचे–बसे होते हैं। मातृभाषा इन सभी के लिए आवश्यक पूर्ति कर रही होती है। जिससे बच्चों के साथ ही वयस्कों में भी अधिगम की प्रक्रिया आसान हो जाती है और उनमें रटने की जगह अपने आस–पास के पर्यावरण में घटित हो रही क्रियाओं पर लागू कर उन्हें समझने की प्रवृत्ति का विकास होता है। वस्तुतः प्रयोग करने के मूल में स्थित व्यावहारिकता तथा लागू करने का कौशल विकसित होते ही किताबों का निरा–कोरा सैद्धांतिक ज्ञान व्यवहार में उतर कर आम–जीवन के क्रियाकलापों को सम्पन्न करने में सहायक होने लगता है, किसी भी शिक्षा का मूल उद्देश्य भी यही होता है। "शोधों ने सिद्ध किया है कि जीवन के आरंभिक वर्षों और प्राथमिक शिक्षा में मातृभाषा माध्यम में पढ़ने वाले बच्चों में सर्वश्रेष्ठ संवेगात्मक विकास के साथ–साथ सभी विषयों की समझ और अधिगम भी बेहतर होते हैं, उन बच्चों की तुलना में जिन्हें अपनी मातृभाषा/परिवेश भाषा से अलग किसी भाषा में पढ़ना पड़ता है।"[5]

बाल विकास के क्रम में मस्तिष्क विकास की सर्वोत्कृष्ट उम्र 2 से 8 वर्ष की मानी जाती है और कमोवेश यही उम्र भी किसी बच्चे की प्रारम्भिक शिक्षा की भी होती है तथा इस अर्द्ध विकसित बाल मस्तिष्क को निखारने का कार्य इसी उम्र में किया जाता है। यह समय मस्तिष्क लिखावट का वह सुयोग होता है जब की गई लिखावट सामान्यतः उम्र भर बनी रहती है और आचरण तथा व्यवहार को नियंत्रित करती है। ऐसे में घर पर किसी अन्य भाषा तथा विद्यालयी परिवेश में अन्य भाषा का प्रयोग कर बच्चे के मस्तिष्क की अधिकांश रचनात्मकता इस द्वैध में लगा दी जाती है कि किसका अनुसरण किया जाए मां का या शिक्षक का, कौन सा सही है घर वाला या विद्यालय वाला आदि आदि। समस्या तब और गंभीर हो जाती है जब विद्यालय में पढ़ाने वाले शिक्षक उसके ही परिवेश के हों और विद्यालय इतर परिवेश में मातृभाषा में व्यवहार करते हैं। इस पशोपेश से बचकर बच्चे की रचनात्मकता को निखारने का उत्तम तरीका उसी की भाषा में उसी के तरीके से शिक्षा देना हो सकता है, जिसमें भाषा द्वैत न हो। भारतीय भाषाओं का आधार पत्र फोकस समूह एनसीएफ–2005 में इस संदर्भ में लिखा है– "मातृभाषा में शिक्षा से कक्षा में पढ़ाई को समृद्ध करने में सुविधा होगी, शिक्षार्थियों की अधिकाधिक प्रतिभागिता होगी और बेहतर परिणाम निकलेंगे। इस उद्देश्य के लिए पर्याप्त सुविधाएँ उपलब्ध करवाई जाएँ। सभी में मातृभाषा में शिक्षा के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण सुनिश्चित किया जाए ताकि शिक्षार्थी वह माध्यम अपनाने में संकोच ना करें जिसमें वह आसानी से समझ सके।"[6]

सामान्यतः ग्रामीण परिवेश में देखा जाता है कि बच्चों से वयस्क तक अपनी बात को किसी औपचारिक स्थान जैसे विद्यालय, मंच, प्रतियोगिता में अभिव्यक्त कर पाने में स्वयं को असहज पाते हैं तथा हिचकिचाहट महसूस करते रहते हैं। जिससे वे अपने शहरी प्रतियोगी से निरंतर पिछड़ते जाते हैं और विकास की, शिक्षा की शहरी–ग्रामीण खाई बढ़ती जाती है। इस पिछड़ेपन का कारण सामान्यतः उनमें ज्ञान की कमी नहीं होती बल्कि अभिव्यक्ति कौशल की कमी होती है, भावाभिव्यक्ति की असहजता होती है। वरना क्या आवश्यकता पड़ती दिन–रात खेतों में कार्य करने वाले फटी बिवाई वाले पैर लिए किसान के हालात बताने के लिए शीशमहलों और वातानुकुलित कमरों में बैठे लोगों की।

समाज में शिक्षा के अनेक प्रकारों के मध्य किसी भी प्रकार का सार्थक लक्ष्य उसका जीवनोपयोगी होना तथा मानवीय हित, समाज हित ही होता है। ऐसे में इस प्रकार की शिक्षा को असंगत न कहना बेहूदगी ही होगा जो जनोन्मुखी न हो। चिकित्सा क्षेत्र में उस भाषा में शिक्षा की प्रासंगिकता अपने आप में ही संदेहास्पद है जिसमें मरीज और डॉक्टर के मध्य आपसी संवाद न हो सके और बीमारी, निदान, इलाज की जटिलता जाने बिना ही पूरा इलाज किया जाए तथा चिकित्सा की इस पूर्ण प्रक्रिया के दौरान मरीज इस धोखे में किसी भी योग्य या अयोग्य चिकित्सक को विद्वान मानता रहे कि उसने दो–चार जटिल वाक्य अंग्रेजी भाषा में बोल दिए हों। कानून की भाषा भी कोई बहुत अच्छी छवि नहीं रखती जिसमें अपराधी यह समझ ही नहीं पाता कि उसने अपराध क्या किया, उसकी सजा क्या हो सकती है और वकील, वकील प्रतिपक्ष की आपसी बहस से निर्णय हो जाता है तथा न्यायाधीश द्वारा सजा सुना दी जाती है। किंतु इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में व्यक्ति की संलिप्तता पूरी–पूरी गायब रहती है जो कि मुख्य आरोपी है। इस प्रकार की स्थिति का कारण इन क्रियाओं का निष्पादन मातृभाषा/जनभाषा इतर किसी अन्य भाषा में होना है जो इस समूह की शिक्षा का माध्यम होती है तथा उसी विशेष भाषा में सम्पूर्ण प्रक्रिया का निष्पादन होना है। मातृभाषा की व्यावृत्ति होते ही ये क्रियाएं उपभोक्ता की अपनी हो जाएँगी और वह उनमें संलिप्त हो सकेगा। इससे लोकतांत्रिक देश की अवधारणा की अभिपुष्टि के साथ ही अधिकारों की सुरक्षा–संरक्षा हो सकेगी।

ग्रामीण अंचल के साथ ही शहरी निम्नवर्गीय तबके की उच्च शिक्षा में तकनीक, इंजीनियरिंग, कम्प्यूटर, चिकित्सा, विज्ञान, गणित आदि के प्रति नकारात्मक उत्साह का एक प्रमुख कारण उनमें मातृभाषा को माध्यम के रूप में स्वीकार न किया जाना है। चूंकि यह समूह उस शिष्ट भाषा में उतना तेज नहीं होता है जितना कि अन्य समूह फलतः एक मनोवैज्ञानिक डर के चलते वह इससे उदासीनता दिखाता है। वस्तुतः भाषा अधिगम और अभिव्यक्ति का माध्यम मात्र होती है तब मातृभाषा में इनकी शिक्षा देने से नुकसान की जगह लाभ ही अधिक होगा। इस डर महसूस करने वाले समूह के प्रवेश से शिक्षा का दायरा तो बढ़ेगा ही साथ ही अध्यापकों को अधिक उपलब्धता होने से पहुँच भी सुगम और सर्व–सुलभ हो सकेगी। विश्व के अधिकांश विकसित देश अपने यहाँ अपनी मातृभाषा में ही इन पारिभाषिक विषयों की भी शिक्षा देते हैं। जैसे रूस रशियन भाषा में, कोरिया कोरियाई भाषा में, हालैण्ड डेनिस भाषा में, जर्मनी जर्मन भाषा में, जापान जापानी भाषा में आदि। बल्कि इन देशों में से अधिकांश में तो ऐसा नियम है कि पाठ्यक्रम के प्रथम वर्ष में माध्यम भाषा की आवश्यक शिक्षा दी जाती है तथा अग्रिम वर्षों में पाठ्यक्रम की जटिल अवधारणाओं या सिद्धांतों की शिक्षा।

क्षेत्रीयता, अंचल विशेष की विशिष्टता होती है सदैव यह संभव नहीं होता है कि वह अन्य सभी में प्राप्त ही हो। यह विशिष्टता कोई उपलब्धि भी हो सकती है और समस्या भी। साथ ही कई बार सम्पूर्णता में यह इतना अल्पांश रखती है कि महत्वहीन सी प्रतीत होती है; किन्तु अपेक्षा गहन शोध, जानकारी की रखती है। ऐसा गुणवत्तापूर्ण तरीके से तभी संभव हो सकता है जब उससे जुड़ा कोई व्यक्ति ही सहभागी हो।

मातृभाषा में शिक्षा स्थानीय या क्षेत्रीय समस्याओं की इस प्रकार की जटिलताओं को समझने में ही नहीं उनका उपचार करने में भी अधिक प्रासंगिक हो सकती है। भाषा का जुड़ाव अपने अंतरतम से अपनी उन विशिष्टताओं को ही अधिक द्योतित करता है जो उसके क्षेत्र विशेष की होती हैं, अतः मातृभाषा में शिक्षा वहाँ की पर्यावरणीय, सामाजिक–सांस्कृतिक, राजनीतिक असंगतियों की संशोधक/परिमार्जक कभी हो सकती है।

गौरतलब है कि उपर्युक्त अधिकांश लाभ परोक्ष तरीके से अपना परिणाम अभिव्यक्त करते हैं तथा स्थाई प्रकृति के और दीर्घकालिक होते हैं। जिससे अल्प समय में इन्हें चिंतातुर लोग अल्प या शून्य बताते हुए महत्वहीन घोषित कर सकते हैं किन्तु इनके साथ ही मातृभाषा में शिक्षा के कुछ विशिष्ट प्रत्यक्ष लाभ भी प्रदान करती है जैसे–

1. मनोरंजन के क्षेत्र में तो मातृभाषा का कोई शानी नहीं हो सकता। वस्तुतः मनोरंजन कोई भी व्यक्ति अपनी मातृभाषा में ही पसंद करता है।
2. क्षेत्र विशेष में स्थित पर्यटन स्थलों पर क्षेत्रीय संस्कृति के निर्देशक के तौर पर विदेशी या इतर भाषा पर्यटकों हेतु अनुवादक के रूप में।
3. उत्कृष्ट साहित्यिक, पारिभाषिक जैसे दर्शन, विज्ञान, तकनीक, गणित, चिकित्सा, कम्प्यूटर आदि की उच्च स्तरीय पुस्तकों के अनुवाद द्वारा। इससे मातृभाषिक लोगों को शिक्षा की सुलभता भी होगी साथ ही इनका स्तर भी उच्च होगा।

अंततोगत्वा यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि मातृभाषा में अध्ययन की प्राप्ति तथा भावी सुलभता की निश्चितता होते ही मातृभाषा के प्रति बने आत्मविश्वास और रचनात्मकता की शक्ति तथा रोजगार की उपलब्धता के त्रिक बंध इस बंधन की जड़ता को तोड़ फेकेंगे कि किसी विशिष्ट प्रकार की शिक्षा पर किसी विशिष्ट भाषी समूह का ही अधिकार होगा। इसीलिए प्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक भोलानाथ तिवारी के वक्तव्य में "शिक्षार्थियों में स्वाभिमान, राष्ट्रीयता और संस्कार विकसित करने और साहित्य के साथ ज्ञान विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में गतिशीलता पाने के लिए मातृभाषा को ही माध्यम भाषा के रूप में अपनाना होगा।"[7] तो वहीं मातृभाषा में शिक्षा न दिए जाने के दुष्प्रभाव का वर्णन करते हुए डॉ. एनीबेसेंट इंगित करती हैं कि "मातृभाषा द्वारा शिक्षा न देने की स्थिति में निश्चित रूप से भारत देश को विश्व के सभी देशों में अति अज्ञानी बना दिया है।"[8]

हाँ इस असंगति से इंकार नहीं किया जा सकता है कि मातृभाषा में शिक्षा के द्वारा क्षेत्रीय भाषाओं के प्रति उत्पन्न गर्व की भावना, 'हम' की भावना आदि से आपसी भाषिक संघर्ष प्रारम्भ होगा जिसका परिणाम भी दुःखद हो सकता है। साथ ही मातृभाषा में अध्ययन की सुलभता से अन्य राष्ट्रीय या अंतर्राष्ट्रीय भाषा में अध्ययन की माँग कम हो जाएगी। फलतः अध्येताओं के बाह्य विकास में कमी आएगी और कूप मंडूकता का विकास होगा। जिससे देश का बाह्य सम्पर्क कम होगा और अन्तर्राष्ट्रीय वृत्तियों में कमी होगी। खारिज इस समस्या को भी नहीं किया जा सकता है कि किसी एक ही कक्षा में एक से अधिक मातृभाषाओं वाले अध्येताओं की उपस्थिति में किस भाषा को मातृभाषा मानकर शिक्षा दी जाए। तो वहीं कम महत्वपूर्ण यह भी नहीं है कि प्रवास के समय में अन्य भाषा–भाषी क्षेत्र में प्रवास कर रहे व्यक्ति की मातृभाषा कौन सी मानी जाए, मूल स्थान की भाषा या प्रवास स्थान की भाषा।

वस्तुतः असंगतियों का होना तथा चुनौतियों के आगमन का परिणाम ही समाधान होता है। अतः इन समस्याओं का कारगर समाधान मातृभाषा के माध्यम के साथ ही अन्य भाषाओं के अध्ययन तथा सर्वभाषाओं के अध्ययन किन्तु माध्यम मातृभाषा, सदृश कोई भी हो सकता है। मातृभाषा के विकल्प के साथ राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय भाषाओं में अध्ययन भी एक प्रासंगिक परिणाम प्रदान कर सकेगा।

हालांकि भारतीय संविधान में "राज्य सभा का सभापति या लोक सभा का अध्यक्ष अथवा उस रूप में कार्य करने वाला व्यक्ति किसी सदस्य को, जो

हिंदी में या अंग्रेजी में अपनी पर्याप्त अभिव्यक्ति नहीं कर सकता है, अपनी मातृ–भाषा में सदन को संबोधित करने की अनुज्ञा दे सकेगा"[9], "यथास्थिति, विधान सभा का अध्यक्ष या विधान परिषद का सभापति अथवा उस रूप में कार्य करने वाला व्यक्ति किसी सदस्य को, जो पूर्वोक्त भाषाओं में से किसी भाषा में अपनी पर्याप्त अभिव्यक्ति नहीं कर सकता है, अपनी मातृभाषा में सदन को संबोधित करने की अनुज्ञा दे सकेगा"[10] तथा "प्रत्येक राज्य और राज्य के भीतर प्रत्येक स्थानीय प्राधिकारी भाषाई अल्पसंख्यक–वर्गों के बालकों को शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की पर्याप्त सुविधाओं की व्यवस्था करने का प्रयास करेगा और राष्ट्रपति किसी राज्य को ऐसे निदेश दे सकेगा जो वह ऐसी सुविधाओं का उपबंध सुनिश्चित कराने के लिए आवश्यक या उचित समझता है"[11] सदृश कुछ महत्वपूर्ण प्रावधान जनता के अधिकारों की प्राप्ति हेतु किए गए हैं तथा कानूनी प्रावधानों जैसे राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा, 2005 (फ्रेमवर्क दस्तावेज); नई शिक्षा नीति, 2020; राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा, 2022 द्वारा इनकी अभिपुष्टि की गई है और कमोबेश एक विषय के रूप में मातृभाषा का अध्ययन एक दुरुस्त राह का अनुसरण भी कर रहा है। बस आवश्यकता है भाषिक माध्यम के रूप में मातृभाषा के चयन की स्वतंत्रता की।

निष्कर्षतः कहा जाना प्रासंगिक होगा कि मातृभाषा में संलिप्त शब्दांश मातृ अर्थात माता सदृश मातृभाषा का कोई विकल्प नहीं होता और भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के शब्दों में–

"अंग्रेजी पढ़ि के जद्यपि सब गुन होत प्रवीन,
पै निज भाषा ज्ञान बिनु रहत हीन के हीन।"

साथ ही महत्वपूर्ण यह भी है कि भाषा–भाषा के इस द्वैत के बीच भाषा के कर्तव्य को जनोन्मुखीयता और जनकल्याण की भावना के साथ ही समाज, संस्कृति, पर्यावरण आदि के संवाहक के रूप में देखा जाए, न कि भाषाई संघर्ष का रूप बनाकर। वस्तुतः पक्ष–विपक्ष को सुनते हुए किसी भी तर्कपूर्ण निष्कर्ष पर पहुंचने से पहले इस बात को नजरंदाज नहीं करना चाहिए कि मातृभाषा को स्वीकार कर उसमें अध्ययन की व्यवस्था करना कदापि अन्य भाषाओं को शत्रु मानकर अस्वीकार करना नहीं है।

–शोध छात्र, हिंदी विभाग
शोध केंद्र– डी.ए.वी. कॉलेज, कानपुर

संदर्भ सूची :

1. संक्षिप्त हिंदी शब्द सागर, संपा. रामचंद्र वर्मा, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, चौदहवां संस्करण, 2008, पृष्ठ संख्या– 794
2. संक्षिप्त हिंदी शब्दकोश, संपा. डॉ. हरदेव बाहरी, राजपाल एंड संस, दिल्ली, संस्करण 2011, पृष्ठ संख्या– 370
3. मातृभाषा और बच्चों की प्रारंभिक शिक्षा में भारतीय भाषाओं का महत्व, राहुल देव, 21 जनवरी 2021, 'प्रवक्ताडॉट कॉम' से
4. भाषा और समाज, रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, ग्यारहवां संस्करण, 2011, पृष्ठ संख्या–406
5. मातृभाषा और बच्चों की प्रारंभिक शिक्षा में भारतीय भाषाओं का महत्व, राहुल देव, 21 जनवरी 2021, 'प्रवक्ताडॉट कॉम' से
6. भारतीय भाषाओं का आधार पत्र फोकस समूह, एन. सी. एफ.–2005 एनसीईआरटी नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या– 41
7. अंतरराष्ट्रीय मातृभाषा दिवस पर विशेष : मातृभाषा में प्राथमिक शिक्षा का महत्व, विजय सिंह माली, 21 फरवरी 2023, 'पाञ्चजन्य' से
8. वही
9. भारतीय संविधान (हिंदी संस्करण), अनुच्छेद 120 का परंतुक
10. भारतीय संविधान (हिंदी संस्करण), अनुच्छेद 210 का परंतुक
11. भारतीय संविधान (हिंदी संस्करण), अनुच्छेद 350(क)

ISSN No. : 0970-9398

वर्तमान समय में हिंदी शिक्षण में बदलाव की आवश्यकता है

–डॉ. दिनेश कुमार गुप्ता

"निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति कै मूल
बिन निज भाषा ज्ञान के मिटै न हिय कै सूल।।"

वर्तमान समय में अंग्रेजी भाषा की लोकप्रियता काफ़ी बढ़ चुकी है और ज्यादातर लोगों का झुकाव भी अंग्रेजी भाषा की ओर हो रहा है। ऐसे में अगर हम हिंदी शिक्षण की स्थिति की बात करते हैं, तो पाते हैं कि हिंदी शिक्षण की स्थिति दिन प्रतिदिन बदलती जा रही है। हिंदी भारत के 9 राज्यों की मातृभाषा और भारत में सबसे अधिक लोगों द्वारा बोली जाने वाली भाषा है, इसके बावजूद वह अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए अंग्रेज़ी के साथ लगातार संघर्ष कर रही है। वर्तमान समय में हिंदी के प्रति लोगों का नज़रिया भी बदल रहा है। हिंदी विषय को सिर्फ़ नाटक, उपन्यास और कहानी तक सीमित माना जाता था और हिंदी पढ़ने वाले पाठकों के प्रति लोगों का नज़रिया भी दूसरा होता था। हिंदी के विद्यार्थी भी हिंदी बोलने में हिचकिचाने की स्थिति में होते थे। लेकिन आज तकनीकी के साथ जुड़कर भाषा का नया रूप सामने आ रहा है। हिंदी के प्रति शिक्षकों का झुकाव कम होता जा रहा है। वर्तमान समय में ज़्यादातर हिंदी शिक्षक अपनी कक्षा के दौरान कुछ नयापन नहीं करना चाहते हैं। वे अध्ययन अध्यापन के लिए व्यवहारवादी पद्धति का ही प्रयोग करते हैं। वे अपनी कक्षा को रोचक तथा विद्यार्थियों को परिवेश से जोड़ पाने में असफल हैं, क्योंकि वे पुरानी परंपरा को छोड़कर नई परंपरा को अपना नहीं पा रहे हैं। अन्य विषयों के शिक्षण के लिए जिस प्रकार से तरह तरह की शिक्षण सहायक सामग्री का प्रयोग हो रहा है उस तरह की सामग्री का हिंदी शिक्षण में उपयोग नहीं हो रहा है। इसका सीधा असर विद्यार्थियों पर पड़ता है जिसके कारण उन्हें पाठ्यवस्तु समझने में दिक्कत आती है। हिंदी शिक्षण की व्याख्यान विधि का ही बोलबाला होने के कारण हिंदी शिक्षण का स्वरूप नीरस है। वर्तमान समय में हिंदी के बहुत ही कम शिक्षक हैं जो निर्माणात्मक पद्धति से कक्षा में अध्यापन करते हैं। ज्यादातर शिक्षक तो अपना पाठ्यक्रम पूरा करने में ही अपना दायित्व समझते हैं। प्राथमिक, माध्यमिक व उच्च माध्यमिक कक्षाओं की बात करें तो पाते हैं कि आज भी हिंदी शिक्षण के बहुत ही कम शिक्षक हैं जो अपनी कक्षाओं को रोचक बनाने में तथा विद्यार्थियों को समझाने हेतु शिक्षण सहायक सामग्री का प्रयोग करते हैं। उदाहरण के लिए फ्लैश बोर्ड, रेखाचित्र, चार्ट, डायग्राम, कटआउट्स, पोस्टर, नक्शे और डायोरमा आदि। इन शिक्षण सहायक सामग्रियों का प्रयोग बहुत ही कम देखने को मिलता है। अगर हिंदी शिक्षण को और समृद्ध करना है, तो उसके शिक्षण में बदलाव लाना होगा। परंपरावादी सीमाओं को तोड़कर आगे बढ़ना होगा। अगर ऐसा कर पाने में हम सफल होते हैं तो निश्चित तौर पर हिंदी शिक्षण को नया रूप दे पाएँगे। अगर हम ऐसा कर पाए तो राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में जो भाषा शिक्षण के लिए अनुभवात्मक अधिगम शिक्षण शास्त्र की बात की गई है, उसे पूर्णरूपेण लागू कर पाएंगे और नीति भी सफल होगी। इसके अलावा राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में शिक्षा तथा शिक्षण में जिस विषयवस्तु को बाहरी वातावरण से जोड़ने की बात की गई, उसे भी हम कर पाएँगे। कोई भी नीति या रूपरेखा तभी सफल हो पाएगी जब हम मिलकर उसके अनुसार कार्य करेंगे। अगर मिलकर कार्य करेंगे तो निश्चित रूप से राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भी सफल होगी और पूरे भारत के हिंदी के विद्यार्थियों को इसका लाभ मिलेगा। महान शिक्षाशास्त्री जे. कृष्णमूर्ति के अनुसार, "एक सिस्टम

आदमी को नहीं बदल सकता है, बल्कि आदमी सिस्टम को बदलते हैं।" ठीक उसी प्रकार सिस्टम को भी बदला जा सकता है जब हम उससे बाहर निकलकर कुछ अलग सोचें और जो परंपरावादी शिक्षण विधियों तक ही सीमित हैं, उससे बाहर निकलें। अगर हमें हिंदी में कुछ अलग करना है तो सिर्फ़ हिंदी के बारे में बातें करने से नहीं होगा, बल्कि उसके लिए आगे बढ़कर कार्य भी करना होगा, क्योंकि आज तक हम उन समस्याओं पर सिर्फ बातें करते आ रहे हैं। अपनी इस आदत को हमें बदलना होगा। हिंदी शिक्षण की वर्तमान स्थिति को सुधारना है तो हमें प्राथमिक स्तर से बदलाव शुरू करना होगा। अगर हमारी नींव मज़बूत होगी तो निश्चित ही हम आगे और अच्छे तरीके से कार्य कर सकते हैं। हिंदी शिक्षण में ये बदलाव तभी संभव हैं जब हम उसके अनुसार पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रम बनाएँ तथा परीक्षा प्रणाली और मूल्यांकन प्रणाली को भी बनाएँ। पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम, परीक्षा प्रणाली और मूल्यांकन प्रणाली में सुधार करने की बात रा.शै.अ.प्र.प. के फोकस समूह के आधार पत्र 'परीक्षा प्रणाली में सुधार' में किया गया है। वर्तमान समय में जो परीक्षा प्रणाली है उसमें काफ़ी बदलाव करने की ज़रूरत है। अगर परीक्षा प्रणाली में बदलाव करना है तो निश्चित तौर पर शिक्षण विधियों में भी बदलाव करना होगा। आज की परीक्षा प्रणाली 21वीं सदी के अनुसार न होकर परंपरावादी और रटंत विद्या पर आधारित है। परीक्षा का अर्थ 'परितः इक्षणम' अर्थात छात्रों को चारों ओर से देखना, आंतरिक और बाह्य दोनों रूपों में कक्षा में छात्रों ने क्या सीखा है और कितना सीखा है? इसकी जाँच करने की प्रणाली का नाम परीक्षा प्रणाली है, लेकिन आज की परीक्षा प्रणाली के प्रश्न बिना समझे रटने की आदत डालते हैं। वर्तमान परीक्षा प्रणाली केवल स्मरण शक्ति के कौशल की जाँच करती है। वर्तमान स्वरूप में परीक्षाएँ– परीक्षा पूर्व तथा परीक्षा पश्चात दोनों ही परिस्थिति में विद्यार्थियों में दबाव एवं दुश्चिंता उत्पन्न करती हैं। इसलिए परीक्षा प्रणाली में सुधार की आवश्यकता है। परीक्षा प्रणाली में सुधार की आवश्यकता क्यों है इसे विस्तार से जानने के लिए निम्नलिखित बिन्दुओं को देखा जा सकता है–

भारत में विद्यालय बोर्ड की परीक्षाएँ 21वीं सदी के ज्ञान समाज और इसके नवाचारी समस्या समाधानकर्ताओं की आवश्यकता के अत्यंत अनुपयुक्त है।

- यह सामाजिक न्याय की ज़रूरतों को पूरा नहीं करती।
- प्रश्नपत्रों की गुणवत्ता काफ़ी कम होती है।
- इसमें लचीलापन नहीं है। एक नीति सबके लिए उपयुक्त के सिद्धांत पर आधारित है।
- ये परीक्षाएँ अत्यधिक तनाव एवं चिन्ता उत्पन्न करती हैं। परीक्षाजनित आत्महत्याएँ एवं नर्वस ब्रेकडाउन की घटनाएँ बढ़ रही है।
- यहाँ ग्रेड देने और ग्रेड/अंक रिपोर्ट में अक्सर पूर्ण प्रकटीकरण और पारदर्शिता का अभाव है। जिसके संबंध में राष्ट्रीय सलाहकार समिति ने 'शिक्षा बिना बोझ के' (1993) में सुझाया है कि कक्षा 10वीं और 12वीं के अन्त में ली गई बोर्ड परीक्षाएँ नौकरशाही सिद्धांतों पर आधारित है।

इसके अलावा अगर हम बोर्ड परीक्षाओं की बात करें तो पाते हैं कि बोर्ड परीक्षाएँ भी विद्यार्थियों में रटने पर ज़ोर देती हैं। वहीं अगर हम भाषा मूल्यांकन की बात करें, तो पाते हैं कि भाषा मूल्यांकन के समय भाषा अधिगम की प्रकृति पर ध्यान नहीं दिया जाता है। हम किन तथ्यों का परीक्षण करें और किस प्रविधि से करें, उस पर भी ध्यान नहीं दिया जाता है। साहित्य के परीक्षण में प्रायः भाषा के सभी कौशलों को किसी न किसी प्रकार साधन के रूप में स्वीकार किया जाता है, जैसे– किसी कविता या कहानी को सुना जा सकता है, लेकिन इन सभी बातों पर ध्यान न देकर सिर्फ़ बोर्ड परीक्षाओं में ज्ञानात्मक प्रश्नों की बहुलता होती है। बोधात्मक और क्रियात्मक प्रश्नों की संख्या भी काफ़ी कम

होती है। इसकी वजह से विद्यार्थियों में रचनात्मक क्षमता का विकास न होकर सिर्फ रटने की आदत लग जाती है। इसके अलावा मूल्यांकन में भी सिर्फ़ परीक्षा प्रणाली का प्रयोग किया जाता है। मौखिक परीक्षा एवं सामूहिक कार्य मूल्यांकन बहुत कम कराया जाता है। मूल्यांकन करते समय भी ध्यान सिर्फ़ प्रश्नों के उत्तर की ओर होता है। विद्यार्थी क्या समझा, क्या नहीं और उसमें क्या सुधार करने की आवश्यकता है? इस तरफ मूल्यांकनकर्ता का ध्यान बहुत ही कम जाता है। विद्यार्थियों की सोच तथा विचार से उनका कोई लेना देना नहीं होता है। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि अगर विद्यार्थियों को उनकी विचारधारा लिखने की इजाज़त दी जाए तो उन्हें प्रश्न पत्र जाँच करते वक्त् काफ़ी समय लगेगा, क्योंकि सबकी अपनी अलग अलग विचारधारा होगी। वहीं ज्ञानात्मक प्रश्नों में इस प्रकार की समस्या नहीं होती है, इसलिए ज़्यादातर प्रश्नन ज्ञानात्मक होते हैं जो कि उचित नहीं है। अगर हमें इस समस्या से निकलना है तो इसमें परीक्षा प्रणाली में निश्चित रूप से बदलाव करना होगा और परंपरावादी विचारधारा से बाहर निकलना होगा। परंपरावादी विचारधारा से निकलने में अगर सफल हो गए, तो निश्चित रूप से हिंदी शिक्षण की स्थिति में सुधार कर पाने में सफल हो सकेंगे। यह सुधार प्राथमिक स्तर से करना होगा। प्राथमिक, माध्यमिक व उच्च माध्यमिक स्तर पर हिंदी की कक्षाओं का उद्देश्य निर्धारण करना होगा। उदाहरण के लिए, कौनसी कक्षा में क्या पढ़ाया जाए और कैसे पढ़ाया जाए तथा उसे पढ़ाने का उद्देश्य क्या है? इन बातों का मूल्यांकन भी आवश्यक है। जो उद्देश्य निर्धारित किया गया था वह कितना सफल हुआ है और उसे पूरा कैसे किया जा सकता है अगर इन सब उद्देश्यों को ध्यान में रखकर कार्य किया जाए तो हिंदी का भविष्य निश्चित रूप से सुनहरा होगा। इसके लिए पाठ योजना में भी सुधार करना होगा। यह सब तभी संभव होगा जब हम कुछ अलग करने की सोच रखेंगे तथा उसके अनुसार कार्य करने को तैयार रहेंगे तथा उसमें आने वाली चुनौतियों से लड़ने के लिए भी तैयार रहेंगे। वर्तमान समय में हिंदी शिक्षण की तकनीकी को लेकर कम चर्चा होती है अगर होती भी है तो उसे पूर्णरूपेण लागू नहीं किया जाता है। तकनीकी को लेकर की गई चर्चाएँ व्याख्यान तक ही सीमित रह जाती हैं अगर किसी तकनीकी के उपयोग का कोई प्रयास किया भी जाता है तो वह सफल नहीं हो पाता। उसका सबसे बड़ा कारण यह है कि हिंदी शिक्षकों को उसके लिए तैयार नहीं किया जाता है अगर हिंदी शिक्षक स्वयं तकनीकी का प्रयोग करना नहीं जानते तो वह अपनी कक्षा में तकनीकी का प्रयोग नहीं कर पाएँगे। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने कहा है "एक दीपक दूसरे दीपक को तब तक प्रज्वलित नहीं कर सकता जब तक कि वह स्वयं प्रज्वलित ना रहे" इसी प्रकार एक शिक्षक भी तब तक अध्यापन नहीं कर सकता जब तक वह स्वयं उस विषय के बारे में ज्ञान न रखता हो। अगर वेदों की बात करें तो अथर्ववेद में कहा गया है कि 'गुरुवर आप ऐसे खेल–खेल में पढ़ाइए कि जो कुछ भी मैं सुनूं वह मुझमें ही रहे' इसके अलावा राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 भी अधिगम प्रक्रिया के माध्यम से विद्यार्थियों को रटने की प्रणाली से मुक्त कराने की बात करती है वह इस बात पर ज़ोर देती है कि पाठ्यचर्या पाठ्यपुस्तक केंद्रित न रह जाए। वहीं अगर राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की बात करें तो राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भी इस बात पर ज़ोर दिया गया है कि रटकर सीखने के बजाय रचनावादी तरीके से सीखने पर ज़ोर दिया जाना चाहिए। इसके साथ.साथ स्कूल की पाठ्यचर्या में भी बदलाव होना चाहिए। यह सब तभी लागू होगा जब शिक्षकों को भी उसी के अनुरूप प्रशिक्षित किया जाएगा, क्योंकि शिक्षकों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रम या फिर तकनीकी का प्रयोग किया जाना चाहिए। ये सब ठीक तरह से तभी कार्य कर पाएँगे जब शिक्षक उसके अनुसार ही प्रशिक्षित होंगे। कार्य शिक्षक को ही करना है इसलिए शिक्षकों का प्रशिक्षण भी समय की माँग को देखकर करना होगा। इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षकों को समय की माँग के अनुसार प्रशिक्षित किया जाए। इसके अलावा हिंदी में होने वाले शोधों में

भाषा शिक्षण शोध पर ज़ोर देना चाहिए। अगर वर्तमान समय की बात करें तो पाते हैं कि हिंदी में होने वाले अनुसन्धान का 90 फीसदी साहित्य केंद्रित होता है और भाषा, जनसंचार आदि पर मुश्किल से 10 फीसदी काम होता है। इसमें बढ़ोतरी करनी होगी। अगर भाषा पर ज़्यादा से ज़्यादा शोध होंगे तो निश्चित तौर पर नई–नई बातें निकल कर सामने आएँगी। इससे हिंदी शिक्षण को आगे बढ़ने में काफ़ी मदद मिलेगी। इसके अलावा रा.शै.अ.प्र.प. के दस्तावेज 'परीक्षा प्रणाली में सुधार' में परीक्षा प्रणाली की बात की गई है या विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा 2019 में प्रकाशित रिपोर्ट 'उच्चत्तर शिक्षा संस्थानों में मूल्यांकन सुधार' में तथ्य दिया गया है कि सार्थक सीखने को क्रियान्वित करने के लिए मूल्यांकन को सीखने के परिणामों और संस्थागत लक्ष्यों से जोड़ा जाना चाहिए। दोनों ही दस्तावेजों द्वारा सुझाई गई बात लागू कर पाएँगे और दोषपूर्ण परीक्षा प्रणाली को ठीक कर पाएँगे जिसकी ज़रूरत भारतीय शिक्षा जगत को वर्षों से है।

निष्कर्ष– निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि वर्तमान समय में हिंदी शिक्षण की जो दशा एवं दिशा है उसमें समय की माँग को देखते हुए काफ़ी कुछ बदलाव करने की ज़रूरत है जैसे– परीक्षा प्रणाली में सुधार, मूल्यांकन के तरीकों में सुधार, शिक्षण विधियों में सुधार, शिक्षण सहायक सामग्री में बढ़ोतरी आदि। इसकी वकालत राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 भी करती है। अगर राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को सफल बनाना है और अनुभवात्मक अधिगम शिक्षणशास्त्र को पूर्णरूपेण लागू करना है तो इसके लिए किस प्रकार का बदलाव लाना होगा इस पर विचार किया जाना चाहिए और सबको मिलकर उसके अनुसार प्रयास करना होगा। किस प्रकार हिंदी शिक्षण को एक नई दिशा प्रदान कर सकते हैं और हिंदी के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं इन सभी बातों की ओर ध्यान आकृष्ट करना होगा।

–प्रवक्ता, अग्रवाल महिला शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय,
गंगापुर सिटी– 322201(राजस्थान)

संदर्भ सूची–

1. पारख, जवरीमल्ल–2008. हिंदी शोध की दशा और दिशा. भारतीय हिंदी शिक्षण सम्मेलन 2008 के लेख और वक्तव्य. केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा. पृ. 170
2. यू..जी.सी. 2019. उच्च शिक्षा संस्थानों में मूल्यांकन सुधार. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग. पृ.सं. 1–13.
3. रा.शै.अ.प्र.प. 2005. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005. सार संक्षेप. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली
4. रा.शै.अ.प्र.प. 2008. परीक्षा प्रणाली में सुधार– आधार पत्र. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली. पृ.सं. 1–14
5. शर्मा, किशोरीलाल. भाषा में मूल्यांकन तथा परीक्षण. केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा. पृ.सं. 1–71
6. शिक्षा मंत्रालय–2020. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020. शिक्षा मंत्रालय. भारत सरकार, नई दिल्ली. पृ.सं. 21–22
7. शुक्ला, भारती–2008. हिंदी शिक्षणः वर्तमान दशा. दिशाः अवधारणात्मक विमर्श. भारतीय हिंदी शिक्षण सम्मेलन– 2008 के लेख और वक्तव्य. केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा. पृ.सं. 136–37

ISSN No. : 0970-9398

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के आलोक में जनजातीय शिक्षा

—योगेश कुमार मिश्र

शिक्षा मनुष्य की बुनियादी आवश्यकताओं में से एक है, सफल राष्ट्र की आधारशीला उसके सभ्य, सुशिक्षित, सुसंस्कृत नागरिक ही हो सकते हैं। ऐसे में राष्ट्रीय शिक्षा नीति का आधार ऐसा होना चाहिए जिससे शिक्षा की पहुँच उन आम जनों तक हो जहाँ शिक्षा का प्रकाश अभी तक नहीं फैला है। जनजातीय शिक्षा में आज देश बहुत पीछे है, निर्धनता और अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता का नहीं होना जनजातीय शिक्षा की मूल समस्या है। जिस प्रकार से देह के किसी भी विशेष अंग का अगर विकास न हो तो व्यक्ति दिव्यांग की श्रेणी में आ जाता है उसी तरह से समाज का कोई हिस्सा अगर पीछे या हाशिये पर रह जाता है तब पुरे समाज को विकास की ग्रेडिंग पर अच्छा अंक तो नहीं ही दिया जा सकता है।

भारत की राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (एनईपी 2020), जिसे 29 जुलाई 2020 को भारत के केंद्रीय मंत्रिमंडल द्वारा शुरू किया गया था, भारत की नई शिक्षाप्रणाली के दृष्टिकोण को रेखांकित करती है। नई नीति ने पिछली राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 का स्थान लिया है। यह नीति ग्रामीण और शहरी दोनों में प्रारंभिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण तक के लिए एक व्यापक रूपरेखा है। इस नीति का लक्ष्य 2030 तक भारत की शिक्षा प्रणाली को बदलना है। नीति जारी होने के तुरंत बाद, सरकार ने स्पष्ट किया कि किसी को भी किसी विशेष भाषा का अध्ययन करने के लिए मजबूर नहीं किया जाएगा और शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी से किसी क्षेत्रीय भाषा में स्थानांतरित नहीं किया जाएगा। एनईपी में भाषा नीति प्रकृति में एक व्यापक दिशानिर्देश और सलाह है; और कार्यान्वयन पर निर्णय लेना राज्यों, संस्थानों और स्कूलों पर निर्भर है। भारत में शिक्षा एक समवर्ती सूची का विषय है।

1 अगस्त 2022 को, प्रेस सूचना ब्यूरो ने सूचित किया कि "शिक्षा के लिए एकीकृत जिला सूचना प्रणाली प्लस" (UDISE+) 2020–21 के अनुसार, ग्रेड (1–5) में शिक्षण और सीखने में 28 से अधिक भाषाओं का उपयोग किया जाना है। भाषाएँ असमिया, बंगाली, गुजराती, हिंदी, कन्नड़, कोंकणी, मलयालम, मैतेई (मणिपुरी), मराठी, नेपाली, मैथिली, उड़िया, पंजाबी, संस्कृत, सिंधी, तमिल, तेलुगु, उर्दू, अंग्रेजी, बोडो, खासी, गारो हैं। मिज़ो, फ्रेंच, हमार, कार्बी, संथाली, भोडी और पुर्गी। नई शिक्षा नीति सामान्य फार्मूले (5+3+3+4) पर आधारित है। यह छात्र पर आधारित है और अपना खुद का व्यवसाय शुरू करने के लिए सरकारी नौकरियों पर निर्भर नहीं है। आठवीं कक्षा के बाद छात्र का बड़ा बदलाव एक विदेशी भाषा सीखना और अलग स्ट्रीम चुनना है।

पहुंच, समानता, गुणवत्ता, सामर्थ्य और जवाबदेही के पांच मार्गदर्शक स्तंभों पर एनईपी 2020 आधारित है। यह हमारे युवाओं को वर्तमान और भविष्य की विविध राष्ट्रीय और वैश्विक चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार करेगा। शिक्षा जनजातीय विकास की कुंजी है। आदिवासी बच्चों में इसका स्तर बहुत कम होता है। यद्यपि भारत में जनजातियों का विकास हो रहा है, परन्तु जिस गति से विकास हो रहा है यह विकास अपेक्षाकृत धीमा रहा है। आदिवासी बच्चों की शैक्षिक आवश्यकताओं को मुख्य रूप से आवासीय विद्यालयों के माध्यम से संबोधित किया जाता है जिन्हें आश्रम विद्यालय कहा जाता है। देश भर में 892 केंद्र–स्वीकृत आश्रम विद्यालय फैले हुए हैं। ये आदिवासी क्षेत्रों में बच्चों को उनकी माध्यमिक शिक्षा पूरी होने तक भोजन और आवास की सुविधाएं प्रदान करते हैं।

एनईपी 2020 का लक्ष्य शिक्षा तक पहुंच सहित स्कूली शिक्षा और उच्च शिक्षा के सभी स्तरों पर समावेशी और समान गुणवत्ता वाली शिक्षा सुनिश्चित करना है। चूंकि शिक्षा एक समवर्ती विषय है, इसलिए राज्य/केंद्र शासित प्रदेश सरकारें राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के कार्यान्वयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इसके अलावा, इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि कोई भी बच्चा जन्म या पृष्ठभूमि की परिस्थितियों के कारण सीखने और उत्कृष्टता हासिल करने का कोई अवसर न खोए। इसमें सामाजिक और आर्थिक रूप से वंचित समूहों (एसईडीजी) पर विशेष जोर देने का प्रस्ताव है। एनईपी 2020 इस बात की पुष्टि करता है कि स्कूल और उच्च शिक्षा दोनों में पहुंच, भागीदारी और सीखने के परिणामों में सामाजिक श्रेणी के अंतर को पाटना सभी शिक्षा क्षेत्र के विकास कार्यक्रमों के प्रमुख लक्ष्यों में से एक बना रहेगा।

स्कूली शिक्षा और साक्षरता विभाग (DoSEL), शिक्षा मंत्रालय 2018–19 से प्रभावी, समग्र शिक्षा योजना लागू कर रहा है। स्कूली शिक्षा के सभी स्तरों पर लिंग और

सामाजिक श्रेणी के अंतर को पाटना योजना के प्रमुख उद्देश्यों में से एक है। यह योजना लड़कियों और एससी, एसटी, अल्पसंख्यक समुदायों और ट्रांसजेंडर से संबंधित बच्चों तक पहुंचती है। यह योजना नामांकन, प्रतिधारण और लिंग समानता के विभिन्न संकेतकों के साथ–साथ एससी, एसटी और अल्पसंख्यक समुदायों की एकाग्रता पर प्रतिकूल प्रदर्शन के आधार पर पहचाने गए विशेष फोकस जिलों (एसएफडी) पर भी ध्यान केंद्रित करती है। समग्र शिक्षा के प्रमुख हस्तक्षेपों में आरटीई अधिकार शामिल हैं जिसके तहत सरकारी स्कूलों में आठवीं कक्षा तक की सभी लड़कियों और एससी/एसटी/बीपीएल परिवारों के बच्चों के लिए दो सेट वर्दी प्रदान की जाती है और सभी बच्चों के लिए पाठ्यपुस्तकों का भी प्रावधान किया गया है। समग्र शिक्षा के तहत कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों (केजीबीवी) का प्रावधान है। केजीबीवी एससी, एसटी, ओबीसी, अल्पसंख्यक और गरीबी रेखा से नीचे (बीपीएल) जैसे वंचित समूहों की लड़कियों के लिए कक्षा VI से XII तक के आवासीय विद्यालय हैं।

समग्र शिक्षा के तहत नेताजी सुभाष चंद्र बोस (एनएससीबी) आवासीय विद्यालय और छात्रावास, कम आबादी वाले, या कठिन भौगोलिक इलाके और सीमावर्ती क्षेत्रों वाले पहाड़ी और घने जंगलों वाले इलाकों में बच्चों तक पहुंचने में सहायता करते हैं जहां एक नया प्राथमिक या उच्च प्राथमिक विद्यालय और माध्यमिक विद्यालय खोला जाता है। वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय व्यवहार्य नहीं हो सकते हैं। शैक्षिक रूप से पिछड़े ब्लॉक (ईबीबी), वामपंथी उग्रवाद, विशेष फोकस जिले (एसएफडी) और 115 आकांक्षी जिलों को प्राथमिकता दी जाती है।

सभी केन्द्रीय विद्यालयों में सभी नए प्रवेशों में अनुसूचित जाति के लिए 15% सीटें और अनुसूचित जनजाति के लिए 7.5% सीटें आरक्षित हैं। जो एससी/एसटी छात्र आरटीई कोटा के तहत प्रवेश लेते हैं, उन्हें शुल्क के भुगतान से छूट दी जाती है और उन्हें मुफ्त किताबें, वर्दी, स्टेशनरी और परिवहन भी प्रदान किया जाता है। साथ ही, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के बच्चों के पक्ष में जवाहर नवोदय विद्यालय में सीटों के आरक्षण का प्रावधान है।

केंद्रीय क्षेत्र की योजना 'राष्ट्रीय साधन–सह–योग्यता छात्रवृत्ति योजना' का उद्देश्य आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के मेधावी छात्रों को आठवीं कक्षा में पढ़ाई छोड़ने से रोकने और उन्हें माध्यमिक स्तर पर अध्ययन जारी रखने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए छात्रवृत्ति प्रदान करना है। केंद्रीय क्षेत्र की योजना 'राष्ट्रीय साधन–सह–योग्यता छात्रवृत्ति योजना' का उद्देश्य आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के मेधावी छात्रों को आठवीं कक्षा में पढ़ाई छोड़ने से रोकने और उन्हें माध्यमिक स्तर पर अध्ययन जारी रखने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए छात्रवृत्ति प्रदान करना है।

उच्च शिक्षा विभाग उच्च शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों को वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए तीन योजनाएं लागू कर रहा है; कॉलेज और विश्वविद्यालय के छात्रों के लिए छात्रवृत्ति की केंद्रीय क्षेत्र योजना (सीएसएसएस), जम्मू–कश्मीर के लिए विशेष छात्रवृत्ति योजना (जम्मू–कश्मीर के लिए एसएसएस) और केंद्रीय क्षेत्र ब्याज सब्सिडी योजना (सीएसआईएस)। इसके अलावा, यूजीसी गुजरात के आदिवासियों सहित देश भर के आदिवासियों के लाभ के लिए पीजी छात्रवृत्ति, व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के लिए पीजी छात्रवृत्ति और एसटी उम्मीदवारों के लिए पोस्ट–डॉक्टरल फैलोशिप भी प्रदान करता है।

एनईपी 2020 में कहा गया है कि जबकि आदिवासी समुदायों के बच्चों के उत्थान के लिए कई कार्यक्रम संबंधी हस्तक्षेप वर्तमान में मौजूद हैं, यह सुनिश्चित करने के लिए विशेष तंत्र बनाए जाने की आवश्यकता है कि आदिवासी समुदायों के बच्चों को इन हस्तक्षेपों का लाभ मिले। इसके अलावा, रक्षा मंत्रालय के तत्वावधान में, राज्य सरकारें आदिवासी बहुल क्षेत्रों सहित अपने माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में एनसीसी विंग खोलने को प्रोत्साहित कर सकती हैं।

निष्कर्ष : शिक्षा का प्रचार और प्रसार व्यापक रूप से हो इसके लिए नियत और नीति दोनों की आवश्यकता है। सरकार से ले कर स्वयंसेवी संस्था और समाजसेवियों का यह दायित्व है कि वे समाज के हाशिये पर रह रहे लोगों की शिक्षा तथा जनजागरूकता पर ध्यान दें। किसी भी राष्ट्र के भविष्य और धरोहर के रूप में उनकी आने वाली पीढ़ी को ही सर्वोच्च स्थान दिया जाता है। इस प्रसंग में शिक्षाविदों और दार्शनिकों का एक ही मत है कि समाज शिक्षित हो और यही सशक्त होने का बहुत महत्वपूर्ण साधन है। इसी कारण से हमें इसकी और विशेष ध्यान देने की जरुरत है।

–हिंदी अधिकारी
प्रधान महालेखाकार (लेखा एवं हक़) असम का कार्यालय,
गुवाहाटी

संदर्भ ग्रन्थ :

1. शिक्षा और आदिवासी समाज, लेखिका–वंदना ठाकुर
2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 प्रस्तावना
3. आदिवासी शिक्षा–लेखक विनय कुमार शर्मा
4. दैनिक जागरण : शिक्षा अंक

ISSN No. : 0970-9398

शिक्षा में बहुविषयक परिप्रेक्ष्य : एक दृष्टिकोण

–डॉ. रविता पाठक

शिक्षा :

शिक्षा शब्द संस्कृत भाषा की 'शिक्ष्' धातु में 'अ' प्रत्यय लगाने से बना है। 'शिक्ष्' का अर्थ है सीखना और सिखाना। 'शिक्षा' शब्द का अर्थ हुआ सीखने–सिखाने की क्रिया। शिक्षा से ज्ञान, सदाचार, उचित आचरण, तकनीकी शिक्षा, तकनीकी दक्षता, विद्या आदि को प्राप्त करते हैं जो व्यक्ति की अंतर्निहित क्षमता तथा उसके व्यक्तित्व को विकसित करने वाली प्रक्रिया है। यही प्रक्रिया उसे समाज में एक वयस्क की भूमिका निभाने के लिए समाजीकृत करती है तथा समाज के सदस्य एवं एक जिम्मेदार नागरिक बनने के लिए व्यक्ति को आवश्यक ज्ञान तथा कौशल उपलब्ध कराती है। शिक्षा में ज्ञान, उचित आचरण और तकनीकी दक्षता, शिक्षण और विद्या प्राप्ति आदि समादिष्ट है।

बहुविषयक :

शिक्षा में बहुविषयक दृष्टिकोण एक नई पद्धति है जो छात्रों को विभिन्न क्षेत्रों के विशिष्ट विषयों या पाठ्यक्रम का पता लगाने और अध्ययन करने की अनुमति देती है। बहु–विषयक परियोजना एक शिक्षण उपकरण या उपलब्धियाँ हैं, जो एक विशिष्ट विषय के भीतर, ज्ञान के कई क्षेत्रों को एक साथ लाती हैं, जहाँ सब कुछ आपस में जुड़ा हुआ है।

बहुविषयक पाठ्यक्रम का अर्थ है एक ही विषय का एक से अधिक विषयों के दृष्टिकोण से अध्ययन करना। इसे क्रॉस–डिसिप्लिनरी भी कहा जाता है जो विषयों के बीच सीमाओं को पार करने के उद्देश्य को इंगित करता है। बहु–विषयक शिक्षा को एक अद्वितीय दृष्टिकोण के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो छात्रों को विभिन्न विषयों से अलग–अलग विषयों या पाठ्यक्रम को सीखने और तलाशने में मदद करता है।

बहुविषयक (या अंतःविषय) पाठ्यक्रम एक टीम–सिखाया जाने वाला पाठ्यक्रम है जिसमें छात्रों को एक ही विषय को समझने के लिए कहा जाता है जैसा कि दो या दो से अधिक पारंपरिक विषयों द्वारा देखा जाता है। बहुविषयक शिक्षा विद्यार्थियों को उनके खुद के परिवेश से जोड़ते हुए विभिन्न विषयों को एकीकृत करेगी जिससे शिक्षण–अधिगम के दौरान उत्पन्न होने वाली नीरसता भी समाप्त होगी और विद्यार्थियों में अनेक कौशलों का विकास होगा। ऐसे पाठ्यक्रम में एक ही विषय के अंतर्गत कई विषयों का अध्ययन किया जा सकता है। आज हम जिस अति–प्रतिस्पर्धी दुनिया में रह रहे हैं, उसके कारण 21वीं सदी में बहु–विषयक शिक्षा का महत्व लगातार बढ़ रहा है।

विशेषताएं :

बहुवषयक शिक्षा विद्यार्थियों को एकीकृत रूप से विषयों को समझने के अवसर देती है। छात्रों को विषय चुनने का लचीलापन प्रदान करती है। आलोचनात्मक चिंतन और सर्जनात्मक चिंतन और समस्या समाधान के कौशलों का विकास होता है। छात्रों को मुख्यधारा की शिक्षा के साथ–साथ अपने जुनून को आगे बढ़ाने में मदद करता है। सहयोगी शिक्षक–छात्र संबंध विकसित करने में मदद करता है। एक बहु–विषयक शिक्षण छात्रों की आंखें किसी विषय के विभिन्न विचारों के प्रति खोल सकता है जिस पर उन्होंने पहले कभी विचार नहीं किया था।

भारतीय शिक्षा नीति

स्वतन्त्र भारत में पहली राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1968 कोठारी आयोग (1964–66) की सिफारिशों पर आधारित थी। इसमें शिक्षा को राष्ट्रीय महत्त्व का विषय घोषित किया गया। 14 वर्ष की आयु तक के सभी बच्चों के लिये अनिवार्य शिक्षा का लक्ष्य और शिक्षकों का बेहतर प्रशिक्षण और योग्यता पर फोकस किया गया। नीति ने प्राचीन संस्कृत भाषा के शिक्षण को भी प्रोत्साहित किया, जिसे भारत की संस्कृति और विरासत का एक अनिवार्य हिस्सा माना जाता था। शिक्षा पर केन्द्रीय बजट का 6 प्रतिशत व्यय करने का लक्ष्य

रखा। माध्यमिक स्तर पर 'त्रिभाषा सूत्र' लागू करने का आह्वान किया गया।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 की इस नीति का उद्देश्य असमानताओं को दूर करने विशेष रूप से भारतीय महिलाओं, अनुसूचित जनजातियों और अनुसूचित जाति समुदायों के लिये शैक्षिक अवसर की बराबरी करने पर विशेष ज़ोर देना था। इस नीति ने प्राथमिक स्कूलों को बेहतर बनाने के लिये "ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड" लॉन्च किया। इस नीति ने इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के साथ 'ओपन यूनिवर्सिटी' प्रणाली का विस्तार किया। ग्रामीण भारत में जमीनी स्तर पर आर्थिक और सामाजिक विकास को बढ़ावा देने के लिए महात्मा गांधी के दर्शन पर आधारित "ग्रामीण विश्वविद्यालय" मॉडल के निर्माण के लिये नीति का आह्वान किया गया।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में संशोधनः 1992 में संशोधन का उद्देश्य देश में व्यावसायिक और तकनीकी कार्यक्रमों में प्रवेश के लिये अखिल भारतीय आधार पर एक आम प्रवेश परीक्षा आयोजित करना था। इंजीनियरिंग और आर्किटेक्चर कार्यक्रमों में प्रवेश के लिये सरकार ने राष्ट्रीय स्तर पर संयुक्त प्रवेश परीक्षा (Joint Entrance Examination-JEE) और अखिल भारतीय इंजीनियरिंग प्रवेश परीक्षा (All India Engineering Entrance Examination-AIEEE) तथा राज्य स्तर के संस्थानों के लिये राज्य स्तरीय इंजीनियरिंग प्रवेश परीक्षा (SLEEE) निर्धारित की। इसने प्रवेश परीक्षाओं की बहुलता के कारण छात्रों और उनके अभिभावकों पर शारीरिक, मानसिक और वित्तीय बोझ को कम करने की समस्याओं को हल किया।

बदलते वैश्विक परिदृश्य में ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिये मौजूदा शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन की आवश्यकता थी। शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ाने, नवाचार और अनुसंधान को बढ़ावा देने के लिये नई शिक्षा नीति की आवश्यकता थी। भारतीय शिक्षण व्यवस्था की वैश्विक स्तर पर पहुँच सुनिश्चित करने के लिये शिक्षा के वैश्विक मानकों को अपनाने के लिये शिक्षा नीति में परिवर्तन की आवश्यकता थी।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP) 2020 : राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP)–2020 में शिक्षा की पहुँच, समता, गुणवत्ता, वहनीयता और उत्तरदायित्व जैसे मुद्दों पर विशेष ध्यान दिया गया है। नई शिक्षा नीति के तहत केंद्र व राज्य सरकार के सहयोग से शिक्षा क्षेत्र पर देश की जीडीपी के 6% हिस्से के बराबर निवेश का लक्ष्य रखा गया है। नई शिक्षा नीति के अंतर्गत ही 'मानव संसाधन विकास मंत्रालय' (Ministry of Human Resource Development) का नाम बदल कर 'शिक्षा मंत्रालय' (Education Ministry) करने को भी मंजूरी दी गई है।

एनईपी–2020 में परिकल्पित बहु–विषयक शिक्षा का उद्देश्य मानव की सामाजिक, शारीरिक, बौद्धिक, भावनात्मक और नैतिक क्षमताओं को एकीकृत तरीके से विकसित करना है। एक लचीला पाठ्यक्रम विभिन्न विषयों के रचनात्मक संयोजन की सुविधा प्रदान करेगा। बहुविषयक अधिगम एक अभिनव माध्यम है जिसके माध्यम से छात्र सभी विषयों को एक साथ सीख सकते हैं। इस नीति का देश की प्राथमिक से माध्यमिक शिक्षा प्रणाली के सकल नामांकन में वृद्धि करने का एक महत्वपूर्ण शैक्षिक लक्ष्य है। इस नीति में प्रस्तावित सुधारों के अनुसार, कला और विज्ञान, व्यावसायिक तथा शैक्षणिक विषयों एवं पाठ्यक्रम व पाठ्येतर गतिविधियों के बीच बहुत अधिक अंतर नहीं होगा।

शिक्षार्थी भाषाओं और साथ ही एप्लाइड साइंसेज, गणित और बिजनेस स्टडीज जैसे क्षेत्रों में से चयन करने में सक्षम होंगे। इसका उद्देश्य शिक्षार्थियों में आलोचनात्मक सोच, बहुमुखी प्रतिभा, अनुकूलनशीलता, समस्या समाधान, लचीलापन और विश्लेषणात्मक और संचार कौशल विकसित करना है। समग्र और बहु–विषयक दृष्टिकोण के माध्यम से अनुसंधान करने के अवसरों को बढ़ाया और बेहतर बनाया जाता है।

इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP) 2020 के अनुसार 2030 तक हर जिले में कई बृहत बहुविषयक शैक्षिक संस्थान होंगे। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (एनईपी 2020) संस्थानों को इस पर ध्यान देने के लिए कहा है।

बहुविषयक दृष्टिकोण :

बहुविषयक शिक्षा सीखने का एक रूप है जिसमें विभिन्न विषयों या अध्ययन के क्षेत्रों से ज्ञान, कौशल और दृष्टिकोण को एकीकृत करना शामिल है। बहुविषयक

दृष्टिकोण पाठ्यक्रम एकीकरण की एक विधि है जो विविध दृष्टिकोणों को उजागर करती है जो विभिन्न विषय या मुद्दे को चित्रित करने के लिए ला सकते हैं। बहुविषयक पाठ्यक्रम में, एक ही विषय का अध्ययन करने के लिए कई विषयों का उपयोग किया जाता है।

शिक्षा में बहु–विषयक दृष्टिकोण सीखने का एक तरीका है जो किसी विषय, अवधारणा या किसी मुद्दे को चित्रित करने के लिए सीखने के विविध दृष्टिकोणों और विभिन्न विषयों पर प्रमुख ध्यान केंद्रित करता है। यह वह है जिसमें एक ही अवधारणा को एक से अधिक विषयों के कई दृष्टिकोणों के माध्यम से सीखा जाता है। यह छात्रों को विभिन्न तरीकों से दृष्टिकोण और ज्ञान प्राप्त करने में मदद करता है।

यह छात्रों को नए विचारों की शक्ति को समझने में मदद करता है, और व्यावहारिक दृष्टिकोण विकसित करने में मदद करता है। यह निरंतर सीखने वालों की एक पीढ़ी विकसित करता है। सीमाओं के बिना सीखना अधिक प्रासंगिक और प्रासंगिक शिक्षार्थी बनाने में मदद करता है। विषयों और अवधारणाओं की गहरी समझ भविष्य के लिए सूचित विकल्पों की ओर ले जाती है।

आज की अति–प्रतिस्पर्धी दुनिया, असीमित शिक्षा में, एक अनूठी शैक्षिक प्रणाली जो छात्रों को उनके जुनून का पालन करने में मदद करने के लिए बहु–विषयक दृष्टिकोण को बढ़ावा देती है, महत्वपूर्ण है। बहु–विषयक दृष्टिकोण का उपयोग अक्सर स्वास्थ्य देखभाल और सामाजिक कार्यों में भी किया जाता है, जहां रोगियों की नैदानिक और स्वास्थ्य देखभाल आवश्यकताओं को एक बहु–विषयक टीम द्वारा पूरा किया जाता है। बहु–विषयक टीमें (एमडीटी) पेशेवरों के बीच सहयोग को सुविधाजनक बनाने और लोगों और समुदायों के लिए परिणामों में सुधार करने के लिए एक प्रभावी उपकरण हो सकती हैं।

कॉलेजों में बहुविषयक शिक्षा से छात्रों को अपना पसंदीदा विषय चुनने का अधिकार मिलता है, जिस विषय को वे सीखना चाहते हैं। ऐसे विषय जो उनके ज्ञान में कुछ मूल्य जोड़ सकते हैं। ऐसे विषय जो शिक्षा का स्तर बढ़ा सकते हैं। अंततः, यह अधिक सहयोगात्मक शिक्षक–छात्र संबंध स्थापित करने में मदद करेगा।

एक तरफ, एक संकाय के रूप में, छात्रों के पास सामान्य शिक्षण–सीखने की प्रक्रियाओं को नया करने की शक्ति होगी। और दूसरी ओर, छात्र विशाल ई–सामग्री तक पहुंचने में सक्षम होंगे जो उन्हें उनके जुनून या सच्चे उद्देश्य को साकार करने में मदद कर सकता है। वे जितनी अधिक ई–सामग्री का उपभोग करेंगे, उन्हें अपनी गहरी रुचियों के बारे में उतनी ही अधिक जानकारी मिलेगी!

कभी–कभी, छात्र विभिन्न विषयों और पाठ्यक्रमों की ओर बढ़ते हुए थोड़ा खोया हुआ महसूस करते हैं। यहां तक कि जब आपके छात्रों को शुरू में अपने जुनून के बारे में पता नहीं होता है, तब भी वे शिक्षण–सीखने की यात्रा के दौरान इसे खोज सकते हैं। इस प्रकार, बहु–विषयक दृष्टिकोण के साथ कॉलेज ईआरपी सॉफ्टवेयर के भीतर एकीकृत शिक्षण प्रबंधन प्रणाली (एल एम एस) जैसे ऑनलाइन शिक्षा उपकरणों का संयोजन छात्रों में व्यक्तिगत विकास को बढ़ावा दे सकता है।

छात्रों को ज्ञान स्थानांतरित करने और एक साथ कई विषयों को सीखने में मदद करता है। सीधे शब्दों में कहें तोः शिक्षा के लिए बहु–विषयक दृष्टिकोण यही है। यह छात्रों को आलोचनात्मक सोच, समय–प्रबंधन, उनके संचार कौशल को बढ़ाने और उनके शोध तरीकों को बेहतर बनाने में मदद करता है।

व्यावहारिक दृष्टिकोण

बहुविषयक शिक्षा व्यावहारिक दृष्टिकोण विकसित करने में मदद करता है। छात्रों को यह तय करने की अनुमति देकर व्यवहारिक दृष्टिकोण विकसित करने में मदद करता है कि वे कौन से विषय चुनेंगे और उनके संभावित लाभ क्या हो सकते हैं। उन्हें जोखिमों और लाभों की गणना करके निर्णय लेने का समय मिलता है। इस प्रकार, एक बहु–विषयक कार्यक्रम व्यावहारिकता और लचीलापन लाता है। यह आपके छात्रों को उनकी दिमागी शक्ति और एडटेक उपकरणों का उपयोग करके अपना रास्ता बनाने में सक्षम बनाता है और उन्हें शैक्षिक प्रणाली द्वारा पूर्व–निर्धारित पथ पर नहीं चलने देता है।

यदि किसी छात्र ने हर चीज़ का ज्ञान प्राप्त कर लिया है, लेकिन एक ऐसे कौशल में विशेषज्ञता हासिल नहीं की है जो सबसे अधिक मायने रखता है, तो अन्य कौशल का भी कोई फायदा नहीं है। छात्रों के पास

ISSN No. : 0970-9398

एक ऐसे क्षेत्र में विशेषता होनी चाहिए जो उन्हें पसंद हो। बहु–विषयक कॉलेज शिक्षा के साथ, छात्रों के प्रदर्शन का मूल्यांकन करते समय संकायों को अतिरिक्त सावधानी बरतनी पड़ती है। उन्हें यह सुनिश्चित करने की ज़रूरत है कि उनके छात्र कम से कम एक क्षेत्र में महारत हासिल करें।

बहुविषयक शिक्षा की आवश्यकता

दुनिया अलग–अलग दिशाओं में तेजी से बदल रही है। बहुत सारे विषय आवश्यकता के कारण पैदा हो रहे हैं और समय के साथ यह बढ़ता ही जा रहा है। ऐसी स्थिति में, सबसे अच्छा तरीका एक बहु–विषयक शिक्षा होगी जहां लोग विभिन्न विषयों का अध्ययन करेंगे, जिससे उन्हें अपने उपकरणों को बहुत अलग धाराओं में डुबोने के परिणामस्वरूप नौकरी प्राप्त करना आसान हो जाएगा।

बहुविषयक शिक्षा को बढ़ावा देने की एक और आवश्यकता यह है कि इसमें रोजगारपरकता पर अधिक जोर दिया जाता है। ऐसे बहुत से छात्र हैं जो काफी अच्छे सीजीपीए के साथ कॉलेज से स्नातक होते हैं लेकिन उनके पास किसी कंपनी में रोजगार पाने के लिए आवश्यक कौशल नहीं होते हैं। रोजगार योग्यता सीधे उस ज्ञान से जुड़ी होती है जो एक छात्र के पास किसी विशेष विषय के बारे में होता है। किसी व्यक्ति के किसी विशेष विषय में ज्ञान बढ़ाने से उसमें कोई कमी नहीं आएगी क्योंकि आज अधिकांश कंपनियों के नौकरी विवरण बहुआयामी हैं। यहीं पर बहुविषयक शिक्षा आती है।

शैक्षणिक स्वायत्तता देना

छात्रों को उनकी रुचि के अनुसार अध्ययन करने की आजादी देना छात्रों में रचनात्मकता को बढ़ावा देने और उन्हें रचनात्मक विचारों को सामने लाने में मदद करने के लिए बेहद महत्वपूर्ण है जो भविष्य को आकार दे सकते हैं। बहु–विषयक शिक्षा के साथ, छात्र अपने पसंदीदा विषय चुन सकते हैं, जिससे वे उन विषयों पर अत्यधिक विद्वान हो जाते हैं, जो बदले में उन्हें बेहतर शिक्षार्थी बनने में मदद करेगा।

निरंतर सीखने वाले छात्र

छात्रों द्वारा निरंतर सीखना सीखे गए विषय में रुचि बनाए रखने का एक परिणाम है जो केवल तभी हो सकता है जब वे वास्तव में उसी में निवेशित हों। एक बहु–विषयक पाठ्यक्रम यह सुनिश्चित करेगा कि छात्रों को केवल वही पढ़ना होगा जो उन्हें पसंद है, जिससे वे कॉलेज से स्नातक होने के बाद भी इसके बारे में अधिक से अधिक सीखना चाहेंगे। यह संभावित रूप से लोगों के एक समूह को आजीवन सीखने वाला बना सकता है जो 21वीं सदी में बेहद महत्वपूर्ण है।

व्यावहारिक मानसिकता का विकास

बहुविषयक शिक्षा छात्रों को नए विचारों की शक्ति को समझने में मदद कर सकती है। यह सीखने के प्रति व्यावहारिक दृष्टिकोण विकसित करने में मदद कर सकता है क्योंकि उन्हें यह चुनने की स्वतंत्रता दी जाती है कि वे कौन से विषय चुनना चाहते हैं और उनके संभावित लाभ क्या हैं। इससे उन्हें जोखिम की गणना और इससे मिलने वाले फायदों के आधार पर निर्णय लेने का समय मिलेगा। इसलिए, यह छात्रों को अपना रास्ता खुद बनाने और अपनी मानसिक शक्तियों का पूरा उपयोग करने में सक्षम बनाता है।

कौशल का विविध सेट

बहु–विषयक शिक्षा प्राप्त करने से आपको अध्ययन के विभिन्न क्षेत्रों का पता चलता है, जो आपको विविध प्रकार के कौशल विकसित करने में मदद करता है। आलोचनात्मक ढंग से सोचना, प्रभावी ढंग से शोध करना और अपने विचारों को स्पष्टता के साथ संप्रेषित करना सीखते हैं। बहुविषयक शिक्षा आपकी विश्लेषणात्मकता को भी बढ़ाती है।

अनुकूलता

आज की तेजी से बदलती दुनिया में अनुकूलनशीलता आवश्यक है। एक बहुविषयक शिक्षा आपको विभिन्न विषयों की व्यापक समझ प्रदान करती है, जो आपको नई स्थितियों और वातावरण के अनुकूल ढलने में मदद करती है।.

समस्या–समाधान

बहुविषयक शिक्षा समस्या–समाधान को प्रोत्साहित करती है। छात्र समस्याओं को कई दृष्टिकोणों से देखना और विकास करना सीखते हैं।

रचनात्मकता

बहुविषयक शिक्षा आपको कला, साहित्य, विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विभिन्न रूपों से परिचित कराकर रचनात्मकता को बढ़ावा देती है। यह कौशल न केवल कला में बल्कि विज्ञान और व्यवसाय में भी मूल्यवान है।

कैरियर के अवसर

एक बहु–विषयक शिक्षा विभिन्न प्रकार की नौकरियों के लिए योग्य बनाती है। नियोक्ता बहु–विषयक शिक्षा वाले व्यक्तियों को महत्व देते हैं क्योंकि उनके पास विविध प्रकार के कौशल होते हैं और वे विभिन्न कार्य वातावरणों के लिए अनुकूल हो सकते हैं।

निष्कर्ष

औद्योगिक क्रांति 20वीं सदी की शुरुआत में शुरू हुई, और अब समय आ गया है कि हम न केवल पाठ्यक्रम के मामले में, बल्कि शिक्षा के क्षेत्र में भी खुद को अपडेट करें। अब समय आ गया है कि छात्रों को यह तय करने दिया जाए कि उनके लिए सबसे अच्छा क्या है क्योंकि उनके पास अपनी उंगलियों पर इसका पता लगाने के लिए आवश्यक सभी संसाधन हैं।

बहु–विषयक शिक्षा प्राप्त करने से छात्रों को अध्ययन के विभिन्न क्षेत्रों का पता चलता है, जो विविध प्रकार के कौशल विकसित करने में मदद करता है। छात्र आलोचनात्मक ढंग से सोचना, प्रभावी ढंग से शोध करना और अपने विचारों को स्पष्टता के साथ संप्रेषित करना सीखते हैं। यह विभिन्न विषयों की व्यापक समझ प्रदान करती है, जो नई स्थितियों और वातावरण के अनुकूल ढलने में मदद करती है। और समस्या–समाधान को प्रोत्साहित करती है। छात्र समस्याओं को कई दृष्टिकोणों से देखना और विकास करना सीखते हैं। कला, साहित्य, विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विभिन्न रूपों से परिचित कराकर रचनात्मकता को बढ़ावा देती है।

नियोक्ता बहु–विषयक शिक्षा वाले व्यक्तियों को महत्व देते हैं क्योंकि उनके पास विविध प्रकार के कौशल होते हैं और वे विभिन्न कार्य वातावरणों के लिए अनुकूल हो सकते हैं। अनुकूलनशीलता को बढ़ावा मिलता है, समस्या–समाधान को प्रोत्साहित किया जाता है, रचनात्मकता बढ़ती है और कैरियर के अवसरों की दुनिया खुलती है। अतः बहु–विषयक शिक्षा विभिन्न प्रकार की नौकरियों के लिए योग्य बनाता है।समाज को ऐसी दिशा में आगे बढ़ाने के लिए जो समावेशी और प्रगतिशील दोनों हो, बहु–विषयक शिक्षा महत्वपूर्ण है।

बहु–विषयक शिक्षा उन व्यक्तियों के लिए अत्यधिक फायदेमंद है जो विभिन्न विषयों के बारे में सीखने का आनंद लेते हैं। आज की तेजी से बदलती दुनिया में बहुविषयक शिक्षा का होना जरूरी है।

–सहायक प्रोफ़ेसर,
ओड़िशा केंद्रीय विश्वविद्यालय, कोरापुट

संदर्भ

1 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986

2 नई शिक्षा नीति 2020

3 नई शिक्षा नीति 2020 : भारत में विकास की कुंजी भारत : नोशन प्रेस

4 शिक्षकों के लिए एक नजर में : उत्कृष्टता की ओर भारत : नोशन प्रेस

5 भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ–पी. डी. पाठक

6 शिक्षा का सामाजिक आधार–डॉ. सीताराम जायसवाल

7 बहुविषयक शिक्षण अधिगम योजनाएं–राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् नई दिल्ली

8 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 : बहुविषयक दृष्टिकोण और उसकी प्रासंगिकता–डॉ सावित्री तडागी, हिन्दू पी.जी कालेज लखनऊ

9 भारतीय शिक्षा का इतिहास–बी. पी. जौहरी एवं पी. डी. पाठक

10 भारतीय शिक्षा का विकास एवं सामयिक प्रवृतियाँ–डॉ. एल. बी. बाजपेयी

11 भारत में शैक्षिक प्रणाली का विकास–डॉ. मालती सारस्वत और प्रो. एस. एल. गौतम

12 स्वतन्त्र भारत में शिक्षा की प्रगति

13 उच्च शिक्षा में नई शिक्षा नीति के विविध आयाम–डॉ. मणिमाला शर्मा

14 शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम में बहु–शिषर्क दृशिकोणः एक अध्ययन – डॉ.राजेश ढाका

ISSN No. : 0970-9398

समकालीन हिंदी कविता में जन पक्षधरता और वर्गीय चेतना

–मुकेश कुमार

शोध सारांश

समकालीन हिंदी कविता में जन पक्षधरता और वर्गीय चेतना का लैंडस्केप कई दृष्टि से उभरता है और वर्तमान समय की गति व भविष्य की चुनौती से मुठभेड़ करता है। वर्तमान का परिदृश्य बेहद खतरनाक है, जिसके कई पैमाने हैं जहाँ आदमी नित नवीन परिवर्तित समय से प्रभावित, प्रेरित व अभिशापित होता जा रहा है और समाज व सत्ता के साथ उसके अंतर्संबंध पेचीदे होने लगे हैं जिसमें कई तरह की तकलीफें व मुश्किलें पैदा हो रही हैं और कई तरह की क्षमताएँ व शक्तियाँ संलग्न हो रही हैं। समकालीन हिंदी कविता में जन पक्षधरता और वर्गीय चेतना के कई पक्षों को गूढ़ संप्रेषण से अपनी स्थिति व संघर्ष के कई सच व कई सैक्रिफाइज और कई संकट व कई सवाल एक साथ प्रत्यक्ष व प्रस्तुत करता है, इसलिए उसमें समय–तत्त्व व समाज–सापेक्षता का प्रत्यक्षीकरण है, जिसमें आदमी का एक हिस्सा नहीं बल्कि पूरी शक्ल का एक्सरे होता है। समकालीन कविता वर्तमान का ताजा दृष्टिबोध ही नहीं है, बल्कि काल का अतिक्रमण करती हुई वास्तविक व व्यवहारिक दीर्घजीवी संवेद्य–तत्त्व की जाँच–पड़ताल करने की प्रतिबद्ध पक्षधरता है।

बीज शब्द : जन पक्षधरता, वर्गीय चेतना, जन बोध, जनसंपृक्ति, विसंगति, संवेदना, जनसरोकार, मध्यवर्गीय समाज।

किसी भी समय की कविता की संवेदना, बोध और अभिव्यक्ति व संप्रेषणीयता पर राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पक्ष का प्रभाव व दबाव होता है और कविता इसी केंद्रीय तत्त्व से अपने लिए अंतर्वस्तु की तलाश व तराश करती है। कविता समय की गति व समाज की गतिविधि की शिनाख्त करती और उसका केंद्रीय पक्ष जनसरोकार से निर्मित होना चाहिए। जिस कविता का कंटेंट, कमिटमेंट और कम्युनिकेट एलिमेंट जनचित्त से संबद्ध होगा उसमें समय व समाज के डिस्क्रिप्शन की गवेषणा व परीक्षण के विविध पक्ष व प्रश्न विद्यमान होते हैं। प्रस्तुत शोधपत्र में समकालीन हिंदी कविता में जन पक्षधरता और वर्गीय चेतना के विविध पक्ष व प्रतिपक्ष और बिंब व बिंदु का विवेचन–विश्लेषण किया गया है।

'पहचान' कविता में जिस पक्ष को कवि संदर्भित कर रहा है उसका प्रतिपक्ष भी प्रस्तुत कर रहा है अर्थात् ये आइडेंटिफिकेशन एकीकृत मध्यवर्गीय समाज का ही सूत्रधारक हैं; इसलिए आम जनता का खून सूंघकर न तो ये बताया जा सकता हैं कि वे हिंदू का है और न ही ये दावा किया जा सकता है कि वह किसी मुसलमान, सिख, ईसाई का है या किसी स्त्री अथवा पुरुष का। वस्तुतः ये खून और कुछ नहीं मध्यवर्ग की प्रतिबद्धता का सिग्नेचर है, क्योंकि यह खून उस आदमी का है–

"जो घर और दफ्तर के बीच
साइकिल चलाती है
और जिसके सपनों की उम्र
फाइलों में बीत जाती है"[1]

ये 'घर से दफ्तर के बीच' की दूरी मध्यवर्ग की चिंता ही हैं, जिसमें उसकी उम्र फाइलों के स्ट्रगल में बीत जाती है। वस्तुतः ये लोग बहुत बड़ी आकांक्षा के साथ नहीं जीते हैं, बल्कि उनकी चिंताएँ और चुनौतियाँ किसी को न तो समझ आती हैं और न ही उन्हें कोई समझना चाहता है, इसलिए–

"ये रक्त सने कपड़े
उस आदमी के हैं
जिसके हाथ
मिलों में कपड़ा बुनते हैं
कारखानों में जूते बनाते हैं
खेतों में बीज डालते हैं"[2]

ये जो आदमी के कार्यों का जिक्र हैं, उससे मध्यवर्गीय सोसायटी की वास्तविकता का अंदाजा लगाया जा सकता है। वस्तुतः फिर भी ये तमाम प्रासंगिक व महत्त्वपूर्ण कार्य करने वाले लोग उपेक्षित, शोषित और पीड़ित जीवन जीने पर मजबूर हैं अर्थात् उनका जीवन इस विसंगतिपूर्ण संतप्तता से मुठभेड़ करता है, लेकिन अभी भी उन्हें अधिक शक्ति व क्षमता की आवश्यकता है।

अरुण कमल की महात्मा गाँधी सेतु और मजदूर कविता पुल बनाने वाले ऐसे मजदूरों की यातना को दर्शाती है, जिसका पता नहीं रहता है कि वे मजदूर कहाँ से आए थे, कहाँ चले गए और कहाँ फिर मिलेंगे? क्योंकि–

"पत्थर डूबे तो आवाज होती है
आदमी इस दुनिया में बेआवाज डूब जाता है"[3]

अर्थात् इस पत्थर में छपाक की डिप साउंड तो होती है, लेकिन आदमी का बेआवाज डूब जाना संवेदनात्मक–तत्त्व का गहरा आघात है और इस 'बेआवाज' में बहुत कुछ भारी दबाव है जिसके कारण बहुत कुछ उखड़ जाता है, खत्म हो जाता है, टूट जाता है और एक प्रश्न अंत तक बना रहता है कि–

"पुल बन गया
और देखते ही देखते उखड़ गया तम्बुओं का नगर
श्रम गयीं चूल्हों की ईंटें
मिट्टी और कालिख में लिपटीं
खूँटों के छेद यहाँ से वहाँ तक
कहाँ गये वे हजारों मजदूर?"[4]

ये 'मिट्टी और कालिख में लिपटीं' चूल्हे की ईंटें संवेदनात्मक–तत्त्व को संतुलित, संगत, सार्थक व सुष्ठु तरीके से प्रस्तुत करता हैं, जहाँ पुल बनाने वाले मजबूर मजदूर वर्ग की गृहस्थी की कालिख लगी अनिश्चितता भी है और लाइफस्टाइल के कुछ नमूने व चिह्न भी मौजूद हैं, चिंता भी निरंतर बरकरार है और रोजी–रोटी कमाने की तकलीफ भी लगातार बनी हुई है।

'बच्चे काम पर जा रहे हैं' कविता बाल श्रम के यथार्थ पक्ष के संकट व संवेदना का संदर्भीकरण है, जहाँ वर्तमान की भी यथादशा का संकेत है और भविष्य की भावी चुनौती व जन सरोकार की प्रतिबद्धता का सवाल भी विद्यमान है, जो सत्ता पक्ष से भी टकराते हैं और मूलभूत आवश्यकता व प्राथमिकता के लिए भी संघर्षशील रहते हैं। "बाल मजदूरों की विडंबना पर लिखी गयी यह कविता ऊपरी तौर पर एक सरल सी करुणा की कविता लगती है कि कोहरे से ढकी सड़क पर बच्चों को सुबह सुबह आखिर काम पर क्यों जाना पड़ रहा है? इस तरह की कविता में एक औसत कवि अपनी रुमानी ताकत का इस्तेमाल अपनी भावुकता को फैलाते जाने पर खर्च करेगा और इस तरह प्रकारान्तर से वह यथास्थितिवाद के समर्थन में शामिल हो जायेगा। पर राजेश तुरन्त इस सवाल की ओर आते हैं कि आखिर बच्चों को काम पर क्यों जाना पड़ रहा है? एक सर्वस्वीकृत और सामान्य मान ली गयी स्थिति को कवि पूरी ताकत से ध्वस्त कर देना चाहता है। वह अन्याय को लेजिटिमेट बनाने वाली दृष्टि के खिलाफ एक सवाल खड़ा करता है।"[5] राजेश जोशी उन बच्चों का विवरण भी देते हैं और उनकी दशा और समाज की लापरवाही पर भी टिप्पणी करते हैं, जो किसी होटलों में, कारखानों में और मीलों आदि में काम करने के लिए मजबूर हैं अथवा काम करने के लिए विवश होकर जाते हैं। 'बच्चे काम पर जा रहे हैं' कविता समय की क्रूरता और समाज की भयानक त्रासदी का एक जीवंत इंटरव्यू है, जो अपने जटिल प्रश्नों से उतना ही टकराता है जितना अपने प्रसंगों व संदर्भों के दृश्य–परिदृश्य से जद्दोजहद करता है, जहाँ जन समाज के पक्षधर दृष्टिबोध का भी संकेतित विवरण है, लेकिन फिर भी–

"कोहरे से ढकी सड़क पर बच्चे काम पर जा रहे हैं सुबह सुबह
बच्चे काम पर जा रहे हैं
हमारे समय की सबसे भयानक पंक्ति है यह
भयानक है इसे विवरण की तरह लिखा जाना
लिखा जाना चाहिए इसे सवाल की तरह तरह
काम पर क्यों जा रहे हैं बच्चे?"[6]

'दरजिन' कविता औरत की आत्मनिर्भरता की पक्षधरता को साबित करती है जिसका प्रमुख तत्त्व टेलेंट नहीं बल्कि 'रोजी–रोटी' की समस्या है। सवाल है कि आत्मनिर्भर स्त्री होना तो ठीक है, लेकिन उसकी 'रोजी–रोटी' की तकलीफ अथवा स्त्री समाज में जो आर्थिक विसंगति बरकरार है उसे कौन और कब पूरा करेगा? आखिरकार स्त्री आर्थिक पक्ष से कब तक जूझती रहेगी या ये 'दरजिन' कब तक आर्थिक रूप से मजबूत होगी? और कब तक स्त्री समाज तर्क, विवेक, बोध, निर्णय और ज्ञान से आगे बढ़कर चेतना सम्पन्न दृष्टि विकसित करेगा और कब तक स्त्री संवेदना के पक्ष व प्रतिपक्ष को बेहतर तरीके से समझा जाएगा?

"अब तो यही काम हो गया है
शौकिया शुरू किया था और अब तो
यही रोजी–रोटी है"[7]

उदय प्रकाश की 'इमारत' कविता कारीगर की उम्र के साथ श्रम व परिश्रम की संबद्धता की वकालत

करती है और इंजीनियर की भाषा से सख्त अंतर्विरोध रखती है! कहने की आवश्यकता नहीं है कि ये कारीगर मध्यवर्गीय समाज का मजदूर अथवा मिस्त्री हैं, जो न इंजीनियर की भाषा जानता हैं न ही उसके डिजाइन और ग्राफ को समझने की क्षमता रखता है, लेकिन फिर भी उम्र के साथ इमारत की संवेदनात्मक शक्ति व संबंध है जिसे न तो इंजीनियर समझ सकता है और न ही कोई दूसरा, क्योंकि–

"कारीगर नहीं है
लेकिन इमारत में
कारीगर का चेहरा पसीने में
लथपथ है"[8]

ये 'लथपथ' पसीने से ज्यादा बेचैनी, संतप्तता, संघर्ष और संवेदनात्मकता का ही प्रतिरूप है, जिसकी वजह से–

"इमारत की दीवालें सीलन से भर गई है"[9]

और ये 'सीलन' दूसरी तरफ उम्र के बढ़ते हाशिए और दुश्चिंता को संकेतित कर रही हैं, जिसकी वास्तविक नींव कारीगर की अंतिम साँस पर निर्भर है–

"कारीगर के शरीर में
ज़गह–ज़गह जख़्म पक रहे हैं
इसलिए इमारत की दीवालों में
दरारें पड़ गई हैं"[10]

ये 'दरारें' एक तरफ उम्र की दहलीज पर खड़ी हैं और दूसरी तरफ साफ्ट कॉर्नर की यात्रा भी कर रही है, जिसके चेहरे की झुर्रियां इमारत को डेंजरजोन की शक्ल में लगातार बदलता जा रही है। यह 'कारीगर' और 'इमारत' का भावबोध व संवेदना पक्ष बेहद सजीव, सरस, संगत, सटीक, सहज, संयमित व सुंदर है, जिसे–

"नहीं जानता इंजीनियर
या जानता है
कि इमारत हिल रही है
ज़ोर–ज़ोर से
क्योंकि तीन सौ मील दूर
गाँव में अपनी झिलंगी खटिया पर
पड़ा हुआ कारीगर
खांस रहा है ज़ोर–ज़ोर से"[11]

और ये खांसी जैसे–जैसे बढ़ती जाएगी वैसे–वैसे इमारत का ढाँचा डिस्ट्रॉय होता जाएगा! वस्तुतः पूरी कविता कारीगर के साफ्ट रिलेशन के साथ इमारत की उम्र की निश्चितता को एक पैमाने से मापता है।

'साठ बरस का आदमी' कविता के दो केंद्रीय पक्ष हैं– समयाभाव व व्यस्तता और नेगलेक्टिड एस्पेक्ट व एकाकीपन। ये साठ बरस का आदमी तमाम तरह की उपेक्षा को झेलता है और कभी कोई उससे न तो यह पूछता है कि वे कितनी बार नींद में अपने तख्ती–सलेट वाले बस्ते से मिला है और न ही कोई यह पूछता है कि बीते जमाने में जो लालटेन की लौ में उसने चिट्ठियाँ लिखी थीं वे किस पते पर और कहाँ भेजी गई थीं? यह यथार्थ है कि जैसे–जैसे उम्र बढ़ती जाती है, वैसे–वैसे नींद कम आने लगती है और दुश्चिंताएँ ज्यादा सताने लगती हैं। खैर, वह आदमी दिखाना चाहता है–

"पिकनिक की तस्वीरें
गुनगुनाना चाहता है झूले का गीत
सुनाना चाहता है. नौका विहार
हम जल्दी से पी लेना चाहते हैं
उसकी गर्म–गर्म चाय"[12]

ये 'जल्दी' में जो समयाभाव की तीव्र गतिशीलता और व्यस्तता का संकट हैं, वह 'चाय' के साथ सटीक ढंग से जुड़ता है जिसमें 'गर्म–गर्म' की पूर्णता निहित है। साठ बरस का आदमी एक ऐसी छत के पास जाना चाहता है, जहाँ पर–

"वह छुपा लेना चाहता है अनगिनत रोटियाँ
किसी मजबूत दरवाजे के अन्दर
वह लौट जाना चाहता है उस आग के पास
जो सिर्फ उसकी अपनी हो"[13]

निश्चित तौर पर यह 'रोटियाँ' और 'आग' उसे एनर्जी देंगी! वह आज के इस व्यस्त और उपेक्षित–असहाय जीवन शैली व ढाँचे से हर समय बीते जमाने की टोह को महसूस करना चाहता है, जिससे वह बना है और जिसमें वह रहा है; लेकिन–

"हम नहीं पूछते उस आदमी से
उन छोटे–छोटे रिश्तों के बारे में
जिनको उठाकर बिता दिए उसने
पहाड़ जैसे साठ बरस"[4]

कुछ लोग यह फतवा जारी कर सकते हैं कि रिश्ते निभाए जाते हैं 'उठाकर' उनका क्या करना है? लेकिन 'उठाकर' में जो वजन 'पहाड़ जैसे साठ बरस'

के रिश्ते पर पड़ता है, वह कविता की अंतर्वस्तु का मुख्य प्रतिपक्ष है। यह साठ बरस का आदमी वर्तमान समय, समाज व रिश्ते से मुठभेड़ जरूर करता है, लेकिन फिर भी–

"जब तमाम लोग सो रहे होते हैं
अपने घरों में चुपचाप
साठ बरस का आदमी
घुप्प अँधेरे में घूम आता है.
कई गाँव और शहर"[15]

इस 'घुप्प अँधेरे' में 'घुप्प' मन को जितना सालता है, उतना ही उसे कचोटता व व्यथित करता है, जोकि उपेक्षित व एकाकी जीवन–दृष्टि की पक्षधरता को दर्ज करता है; जहाँ कई गाँव और शहर के चक्कर लगाकर आना उसका परिवेश व मनोविज्ञान अंकित करता है, इसलिए यह घूमना शारीरिक कसरत कम और अंतर्मन का द्वंद्व, तड़प, चुभन व बेगानगी अधिक है।

'इन्तजार' कविता विसंगति व अंतर्विरोध के परिदृश्य का प्रत्यक्षीकरण है, जहाँ तड़पता हुआ देश दुर्घटनाग्रस्त है और लाजमी है कि ये चिंताएँ व चुनौतियाँ उन लोगों के जीवन संदर्भ से परिचालित हैं जो चौराहे पर तड़प रहा है न की किसी हाइवे या एयरपोर्ट पर अर्थात् ये चौराहे पर तड़पता देश मध्यवर्ग की दैनिक आकांक्षा व परिस्थिति की छटपटाती व अकुलाती संवेदना ही है और उन्हें व्यथित करती मूल्यहीन दुविधा ही है, जहाँ–

"हर चौराहे पर
दुर्घटनाग्रस्त होकर तड़प रहा है एक देश
और हम
डाक्टर के बदले
पुलिस का इन्तजार कर रहे हैं।"[16]

मंगलेश डबराल की 'गुमशुदा' कविता ऐसे लोगों की तलाश का पोस्टर है, जो दस–बारह साल की उम्र में घर से बिना बताए भाग गए थे और जिनका अब न तो कुछ पता है और न ही कोई परिचय है! बाकायदा पोस्टर लगवाने के बाद भी वे किसी से आइडेंटिफाई नहीं हुए हैं! बेशक उनका जो हुलिया अब है वे पोस्टर में छपी शक्ल की शिनाख्त नहीं कर पाता है, इसलिए न ही उन दिनों की तकलीफ का ताब उन पर है और न ही वह गुमशुदा चेहरे कहीं सक्रिय नजर आते हैं, क्योंकि–

"शहर के मौसम के हिसाब से बदलते गये हैं
उनके चेहरे"[17]

ये घर से भागने वाले युवक शहर के मौसम में ढल चुके हैं और उन्हें शहर के अपराध बोध, मूल्यहीनता, संवादहीनता, व्यस्तता, उपेक्षित व एकाकीपन की आदत भी लग चुकी होगी! अब उनके चेहरे पर न तो किसी तकलीफ का दबाव होगा और न ही किसी की चिंता; क्योंकि शहर ने उसके चेहरे को पूर्णतः विकृत, व्यथित व अभिशप्त कर दिया है!

'कॉलगर्ल' मध्यवर्गीय स्त्री समाज की पेचीदगी को सामने लाने की जद्दोजहद करती है, जहाँ शहर के कई एकांत कोने में शाम होते ही वे प्रकट हो जाती हैं और देह व्यापार, बाजार व विज्ञापन के लिए खुद को एक निश्चित कीमत पर बेचना शुरू करती हैं। यह कविता स्त्री देह के केंद्र में पुरुष समाज का एक यथार्थ पक्ष भी अंकित करती है और आजीविका व जीवन यापन के लिए प्राथमिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए भी संघर्ष का प्रतिपक्ष भी रचती है, इसलिए–

"मैं देखना चाहता था एक बार उनमें से
किसी का चेहरा"[18]

क्या उस चेहरे के पीछे कोई अन्य चेहरा भी सक्रिय है या वे मजबूरी हैं? प्रश्न है कि उन युवतियों को कॉलगर्ल किसने बनाया या वह क्यों बनी या उन्होंने एक हाशिए के रास्ते को क्यों अपने बौद्धिक पैरों से नापने की चुनौती स्वीकार की? शायद इसके लिए परिस्थितियाँ कम और पुरुष के क्रूर व कामुक दिमाग की ज्यादा सक्रियता है। वस्तुतः 'कॉलगर्ल' कविता वर्तमान युवती समाज के हाशिए के डार्क कॉर्नर का बेहद खतरनाक स्क्रीनशॉट है, जहाँ–

"स्त्रियों का शत्रु एक समाज
अपने लिए ढूंढ़ता ही रहता है
एक न एक कॉलगर्ल"[19]

कहने की आवश्यकता नहीं है कि ये 'शत्रु' एक तरफ स्त्री पक्ष का एक्सक्लूसिव भी हैं और दूसरी तरफ उसकी पक्षधरता का एक्सक्यूज भी है अथवा परिस्थिति का बारीक कांक्रीट भी है और सामाजिक यथार्थ की सिनोप्सिस भी है!

विनोद कुमार शुक्ल की 'सबसे गरीब आदमी की' कविता आम जनता की अर्थ समस्या व जीवन

यापन की विडंबना व विसंगति का यथार्थ अक्स खींचती है। यह विसंगति समाज के ऐसी जनता की पक्षधरता स्वीकार करती है, जो पूर्णतः अभावग्रस्त व अभिशापित जीवन जीने के लिए विवश एवं प्रताड़ित है–

"सबसे गरीब आदमी की
सबसे कठिन बीमारी के लिए
सबसे बड़ा विशेषज्ञ डाक्टर आये
जिसकी सबसे ज्यादा फीस हो"[20]

यह विडंबनात्मक स्थिति है, जो कहने और सुनने के लिए तो आदर्श है लेकिन व्यावहारिक बिलकुल भी नहीं है। सबसे गरीब आदमी के इलाज के लिए विशेषज्ञ डाक्टर का आना ईद का चाँद ही है, बल्कि नामुमकिन ही है, लेकिन क्या यह भी संभव है–

"सबसे बड़ा डाक्टर सबसे गरीब आदमी का
इलाज करे
और फीस माँगने से डरे।"[21]

लेकिन यह भी असंभव ही है, क्योंकि समाज के बहिष्कृत व हाशिए पर धकेले हुए जन–समाज के लिए–

"सबसे गरीब बीमार आदमी के लिए
सबसे सस्ता डाक्टर भी बहुत महँगा है।"[22]

क्योंकि समाज उच्च व निम्न और शोषक व शोषित जैसे संकीर्ण इकाई में विभाजित है, जहाँ उच्च मुख्यतः श्रेष्ठ सिद्ध है और निम्न सर्वत्र अवांछित है।

समकालीन हिंदी कविता का संवेद्य पक्ष एक रैखिक ही नहीं है, बल्कि तमाम वर्ग की पृष्ठभूमि का संदर्भीकरण भी है, जहाँ एक तरफ जन प्रतिरोध है और दूसरी तरफ जन आवेशित काल अतिक्रमण की ऊर्जा है। यह प्रतिरोध वैसे भी सत्ता व जनता के अंतर्विरोध का ही सूचक है, जहाँ हाशियाकृत जन समाज के सरोकार निरंतर विकृत किए जा रहे हैं और अनैतिक ढंग से वैचारिक प्रतिबद्धता का अवमूल्यन किया जा रहा है। वर्तमान समय निरंतर बदल रहा है, इसलिए भूमंडलीकरण एवं बाजारीकृत संस्कृति के दौर में मूल्य व मौलिकता, सच व स्वायतता, गोपनीयता व गवेषणा, निजता व नैतिकता और संवेद्यता व सौंदर्यता जैसे भाव बोध का संरक्षण व संस्कार करना असंभव होता जा रहा है, लेकिन वैचारिक दृष्टि से संवेदनात्मक–तत्त्व के परिदृश्य के परिणाम का पैमाना नापा जा सकता है। समकालीन हिंदी कविता जन चेतना से पूरित है, लेकिन व्यापक तबके के जन समूह वैधानिक व सामाजिक तरीके से अब भी हाशियाकृत जिंदगी जी रहे हैं और वंचना एवं प्रताड़ना से निकट सरोकार से उपेक्षित होते जा रहे हैं।

–(अनुसंधित्सु : विद्यावाचस्पति)
हिंदी विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय
समरहिल, शिमला.171005 (हि. प्र.)

संदर्भ सूची–

1. विकल, कुमार, संपूर्ण कविताएं, पंचकूला, आधार प्रकाशन, संस्करण 2013, पृ० 185
2. वही
3. कमल, अरुण, सबूत, नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण 1989, पृ० 44
4. वही
5. कुमार, विजय, कविता की संगत, पंचकूला, आधार प्रकाशन, तृतीय संस्करण 2012, पृ० 154
6. जोशी, राजेश, नेपथ्य में हँसी, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, दूसरा संस्करण 2021, पृ० 23
7. कमल, अरुण, अपनी केवल धार, नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण 1980, पृ० 36
8. प्रकाश, उदय, सुनो कारीगर, हापुड़, संभावना प्रकाशन, प्रथम संस्करण 1980, पृ० 19
9. वही
10. वही
11. वही, पृ० 20
12. कृष्ण, कुमार, पहाड़ पर नदियों के घर, नयी दिल्ली, प्रकाशन संस्थान, प्रथम संस्करण 2004, पृ० 47
13. वही, पृ० 48
14. वही
15. वही
16. मिश्र, रामदरश, दिन एक नदी बन गया, नयी दिल्ली, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, प्रथम संस्करण 1984, पृ० 18
17. डबराल, मंगलेश, आधार चयन कविताएं, पंचकूला, आधार प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2015, पृ० 60
18. वही, पृ० 141
19. वही, पृ० 142
20. शुक्ल, विनोद कुमार, सब कुछ होना बचा रहेगा, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, पहला संस्करण 1992, पृष्ठ 35
21. वही
22. वही, पृष्ठ 36

ISSN No. : 0970-9398

साहित्यिक, सांस्कृतिक विरासत और देशभक्ति के स्वरों में हिंदी

–पद्मा मिश्र

"मानस भवन में आर्यजन जिसकी उतारें आरती
भगवान भारत वर्ष में, गूंजे हमारी भारती"

हमारी हिंदी सभ्यता, संस्कृति और संस्कारों की वाहिका बन विश्व भर में छा जाए, विश्व बंधुत्व की पवित्र भावना का उद्‌घोष जन जन के कंठों से मुखरित हो, शायद आज हर भारतीय और राष्ट्रप्रेमी की कामना यही होगी, वह हमारी अस्मिता है, सृजन यात्रा का पाथेय बन विश्व को राह दिखाती रही है, हिंदी के बिना भारत की कल्पना नहीं की जा सकती। किसी भी राष्ट्र की प्रगति और विकास उसकी भाषा, बोली, परिवेश, संस्कृति के आधार पर ही संभव हो सकता है, यदि अभिव्यक्ति सहज, सरल और सर्वजन ग्राह्य हो तो समाज के विभिन्न वर्गों से जुड़ने का मार्ग आसान हो जाता है और हम विकास की योजनाओं को सरलता से जारी रख सकते हैं।

अपनी संस्कृति, अपनी धरती, अपना आकाश अपना राष्ट्र, अपना संविधान, अपना भोजन, अपनी संस्कृति की अवधारणा जहां हो वहां अपनी भाषा की परिकल्पना भी अनिवार्य है और होनी चाहिए। हमारे देश में सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा हिंदी है या यूं कहें कि हिंदी भारत की आत्मा है, उसके अंतर्गत आने वाली विभिन्न उप बोलियां भी हों और उनसे जुड़ने और उनको समझने के लिए भी हिंदी को राष्ट्रभाषा घोषित करना जरूरी है।

एक भाषा के रूप में हिंदी न सिर्फ भारत की पहचान है, बल्कि यह हमारे जीवन मूल्यों, संस्कृति और संस्कारों की सच्ची संवाहिका भी है, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी ने कहा था–

"निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल,
बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को शूल"

सांस्कृतिक भाषा ही किसी देश की संपर्क भाषा होती है, इसमें कोई संदेह नहीं और वर्तमान संदर्भ में हिंदी ने इसके पर्याप्त गुण अर्जित कर लिए हैं। निश्चय ही हिंदी भाषा की यह समाहार शक्ति हमारे देश की भावात्मक एकता को सुदृढ करने में सहायक होगी।

सचमुच विकास की पहली सीढ़ी होती है भाषा, और भारत को समझने, जानने और उसकी अंतरात्मा को महसूस करने के लिए हिंदी का ज्ञान आवश्यक है क्योंकि यह सबसे अधिक सुगम, सरल और सहज भाषा है, वैज्ञानिक भाषा होने के कारण भी यह विश्व की सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषाओं में से एक है और विश्व भर में हर जगह बोली और समझी जाती है। भारत की संस्कृति, ज्ञान विज्ञान और प्रौद्योगिकी तथा पौराणिकता से परिचित होने के लिए भी हिंदी साहित्य का ज्ञान होना अति आवश्यक है।

डॉ. त्रिलोचन पाण्डेय के अनुसार सांस्कृतिक भाषा के दो अर्थ हो सकते हैं– 1–संस्कार की गई भाषा, अर्थात परिष्कृत की गई भाषा 2– संस्कृति विशेष के व्यापक रुपों को समाहित करने वाली भाषा परंतु वर्तमान संदर्भों में सांस्कृतिक भाषा दूसरे वर्ग में ग्रहण की जाती है।

स्वतंत्रता बाद के समय में हिंदी का क्रमिक विकास हुआ है, राष्ट्रभाषा के रुप में तो सर्व विदित है ही, विशेष प्रयोजनों में प्रयोग आने के कारण भी अनेक स्वरुप मिले हैं– राजभाषा हिंदी, तकनीकी हिंदी, कामकाजी हिंदी, जो उसके विकास की पहचान बने हैं। स्वतंत्रता के लिए लड़े जाने वाले संघर्ष में हिंदी सिरमौर और अद्‌भुत मार्गदर्शक बन कर सामने आई थी–

"जिसको न निज गौरव तथा
निज देश पर अभिमान है,
वह नर नहीं, नर पशु निरा है,
और मृतक समान है"

कबीर, सूर, तुलसी की संवेदना को जन जन तक पहुंचाने वाली हिंदी आज भी सर्वाधिक लोकप्रिय और सुपरिचित भाषा है, इसके अंतर्गत आने वाली उप भाषाओं और लिपियों ने भारतीय मानस की आत्मा को छुआ है, अवधी में तुलसी ने लिखा तो हर घर के आंगन में हिंदी/मानस के गीत गाए गए, राम और सीता के त्याग और माता पिता के प्रति पुत्र के कर्तव्यों

और राम राज्य की परिकल्पना को दुनिया ने समझा।

'राम राज बैठे त्रिलोका, हर्षित भयउ गयउ सब शोका– इसी रामराज्य की कल्पना ने गांधी जी के घोषित रामराज्य के स्वप्न को साकार करने के लिए उद्घोष किया था, जन जन तक देश के इस विकास के सपने ने जन्म लिया था, देश को सभ्यता और संस्कृति की अनमोल विरासत सौंपने वाली हिंदी की पवित्र राम चरित मानस ने अभूतपूर्व योगदान दिया है, मानवीय संबंधों की गरिमा को अक्षुण्ण बनाए रखने में मानस की महती भूमिका है–

"जिय बिनु देह नदी बिनु बारी,
तैसिय नाथ पुरुष बिनु नारी"

यह भारत की संस्कृति है, जहां स्त्री पुरुष दोनों समान सम्मान के अधिकारी हैं।

कबीर ने अपने उपदेशों और दोहों में विश्व बंधुत्व की भावना को संजोया है। हिंदू मुस्लिम, सिख, ईसाई और निम्न, उच्च वर्ग सभी उनकी दृष्टि में समान थे।

हिंदी की सहचरी अवधी भाषा के अतिरिक्त भोजपुरी और ब्रज, मगधी भाषाएं भी साथ साथ इस सांस्कृतिक यात्रा में चलती रही हैं, नृत्य गीत, गान के मधुरिम स्वरों में सजी हिंदी भारत की एकता और अखंडता की असली पहचान है, भोजपुरी में एक लोकगीत देखिए–

" सुंदर सुभूमि भैया भारत के देशवा से,
मोरे प्राण बसें हिम खोह रे बटोहिया,
एक ओर घेरे रामा सिंधु कोतवलवा से,
दूसरे विराजे हिम खोह रे बटोहिया"

रामधारी सिंह दिनकर, मैथिली शरण गुप्त, निराला, प्रसाद, पन्त, महादेवी, सुभद्रा कुमारी चौहान, जैसे लोकप्रिय यशस्वी रचनाकारों ने हिंदी को गौरवान्वित किया है।

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में भी हिंदी साहित्य ने अपनी विशिष्ट भूमिका निभाई थी, एक भारतीय आत्मा के नाम से माखनलाल चतुर्वेदी जी ने लिखा–

"चाह नहीं मैं सुर बाला के गहनों में गूंथा जाऊं,
चाह नहीं प्रेमी माला में, बिध प्यारी को ललचाऊं
मुझे तोड़ लेना वन माली, उस पथ पर देना तुम फेंक
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने, जिस पथ जाएं वीर अनेक"

इस गीत ने देश भर में क्रांति की ज्वाला भडकाई थी, उस समय हिंदी ही एकमात्र ऐसी भाषा थी जो वर्ग, धर्म, जाति, से परे सहजता से पहुंच सकती थी, चाहें बंगला भाषी वीर सुभाष हों या गुजराती मूल के सरदार पटेल, गांधी जी अथवा अन्य भाषा भाषी, सभी की समवेत भावना और अभिव्यक्ति हिंदी ही थी।

"वंदे मातरम, सुजलाम सुखदाम, मलयज शीतलाम्, शस्य श्यामला मातरम्" इस प्रकार देश भक्ति, त्याग और समर्पण की ऐसी विलक्षण संस्कृति विकसित हुई थी। देश में जहां देश सर्वोपरि था, स्वहित नहीं, इस प्रकार हिंदी आम आदमी की भाषा के रूप में देश की एकता का सूत्र बन गई, सभी भाषाओं की बड़ी बहन होने के नाते यह विभिन्न भाषाओं के उपयोगी और प्रचलित शब्दों को स्वयं में समाहित करके सही अर्थों में भारत की संपर्क भाषा होने की भूमिका निभा रही है।

भारतीय संस्कृति में साहित्य की सबसे बड़ी भूमिका रही है, सामाजिक परिवेश को चित्रित करती हुई अनेक रचनाएं और लोकगीत है जिनमें समाज की पीड़ा परिलक्षित होती है, निराला ने जहां लिखा–

"वह आता दो टूक कलेजे के करता
पछताता, पर पर आता,
पेट पीठ, दोनों मिलकर हैं एक
चल रहा लकुटिया टेक"

दिनकर ने भी भारतीय जनमानस में व्याप्त सामाजिक विद्रूपताओं की ओर संकेत किया है –

"श्वानों को मिलता वस्त्र दूध,
भूखे बच्चे अकुलाते हैं
मां की छाती से चिपक निष्ठुर,
जाड़े की रात बिताते हैं"

वस्तुतः लोकगीतों ने भारतीय मानस को एक नई पहचान दी है, केवल खड़ी बोली हिंदी ही नहीं, विभिन्न उप भाषाओं, बोलियों ने भी हिंदी साहित्य को समृद्ध किया है, देश की परंपराएं, रीति रिवाज, पर्व सभी तो इन लोकगीतों में मौजूद हैं।

"मोरे चरखा के टूटे न तार चरखवा चालू रहे" अथवा छठ पूजा पर सूर्य उपासना के गीतों ने भी अपनी जगह बनाई है।

मुख्य रुप से हिंदी हमारे देश में कहां नहीं मौजूद हैं, जन आंदोलनों में भी हिंदी ने क्रांति का जय घोष किया था, जैसा कि गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने

अत्यंत सुंदर परिभाषा दी है–''भारतीय भाषाएं नदियां हैं और हिंदी महानदी''

भारतीय संस्कृति के अधिकांश तत्वों को आत्मसात करने की प्रवृत्ति हिंदी में प्राचीन काल से ही दिखाई देती है, यही कारण है कि हिंदी मध्य युग के संतों द्वारा सार्वदेशिक रूप में ब्रज भाषा गुजरात से लेकर असम तक भारतीय संस्कृति की संवाहिका बन गई थी, और गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा अवधी कोशल क्षेत्र से बाहर निकल कर छत्तीसगढ़ और देश के समूचे परिदृश्य में व्याप्त हो गई थी, खड़ी बोली हिंदी आधुनिक काल में सार्वजनिक भाषा के रूप में अखिल भारतीय राजकाज की भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो गई और आजकल न केवल नगरीय संस्कृति बल्कि लोक संस्कृति को भी उजागर कर रही है।

सांस्कृतिक भाषा के रूप में हिंदी के विकास को लेकर दो बातें स्पष्ट होती हैं, इतिहास की दृष्टि से और साहित्यिक रचनाओं की दृष्टि से, इतिहास की बात करें तो भारतेन्दु युग से प्रारंभ होकर आज तक हिंदी जहां भी है वह तत्कालीन युग चेतना का ही परिणाम है, जब भारतेंदु ने हरिश्चंद्र मैगजीन'में लिखा कि'हिंदी नयी चाल में ढली''तो उनका अर्थ था कि हिंदी की ऐसी सर्वांगीण उन्नति हो, जो राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद की अरबी फारसी मिश्रित हिंदी और राजा लक्ष्मण सिंह की संस्कृत प्रधान हिंदी के मिश्रण से जन साधारण की भाषा के रूप में विकसित हो, भारतेन्दु मंडल के कवियों ने निज देश और निज भाषा की उन्नति पर तन मन धन न्योछावर करने की बात कही थी। जन जन तक हिंदी के सरल रुप को पहुंचाने के लिए इन साहित्यकारों ने हिंदी को सांस्कृतिक भाषा बनने की ओर उन्मुख किया, उनका मानना था कि भाषा राष्ट्रीय चेतना का अनिवार्य अंग होती है वह केवल मनुष्य के विचारों को ही प्रकट नहीं करती बल्कि देश के संगठित रूप का भी बोध कराती है, रवीन्द्र नाथ टैगोर सहित देश के प्रमुख नेताओं ने माना कि केवल हिंदी ही राष्ट्रीय एकता का प्रतीक हो सकती है। अतः अंग्रेजी का विरोध करते हुए हिंदी का पक्ष लिया तो इससे सांस्कृतिक विकास को गति मिलना स्वाभाविक था।

हिंदी साहित्य में गुप्त जी ने विवेकानंद के विचारों को अपने सृजन में उतारते हुए लिखा था–

''मानस भवन में आर्यन जिसकी उतारें आरती
भारतवर्ष में गूंजे हमारी भारती''

मानव का धर्म है कर्म करना, मानव मात्र से प्रेम करना। छायावाद और छायावादोत्तर काल के लगभग सभी प्रमुख कवि और साहित्यकार विवेकानंद से प्रभावित हुए हैं जैसे पन्त, प्रसाद व निराला हो या अज्ञेय। सभी कवियों ने समाज को रूढ़ियों से मुक्त कर नए ज्ञान, विकास व विचारधारा के सूर्य को और उदभासित करने का कार्य अपने सृजन के माध्यम से किया था।

आज वैश्वीकरण के दौर में, हिंदी विश्व स्तर पर एक प्रभावशाली भाषा बनकर उभरी है। आज पूरी दुनिया में 175 से अधिक विश्वविद्यालयों में हिंदी भाषा पढ़ाई जा रही है, ज्ञान–विज्ञान की पुस्तकें बड़े पैमाने पर हिंदी में लिखी जा रही है, सोशल मीडिया और संचार माध्यमों में हिंदी का प्रयोग निरंतर बढ़ रहा है।

तमाम आलोचनाओं, समालोचनाओं संघर्षों के अनथक दौर के बाद भी हिंदी हमारी आत्मा में समाहित है, वह हमारी अभिव्यक्ति और संस्कृति की गरिमा का सशक्त माध्यम भी है, हताशा या निराशा की बात नहीं है, हिंदी में सृजन हो रहा है, लोकप्रियता भी बढ़ी है, बस परस्पर संवाद भी बना रहना चाहिए, अपने बच्चों को हिंदी की प्रसिद्ध कहानियों, पौराणिक कथाओं के विषय में बताएं, यह एक बड़ा कदम होगा, हमारी संस्कृति, हमारी सभ्यता का मूल हिंदी में ही निहित है,

हिंदी आगे बढ़े, पूरे राष्ट्र की भाषा बने, यहीं कामना है।

लेखिका
–जमशेदपुर

संदर्भ सूची–

1. रामचरित मानस––गोस्वमी तुलसीदास
2. त्रिलोचन पाण्डेय
3. मैथिलीशरण गुप्त–भारत भारती
4. भारतेंदु हरिश्चंद्र––हरिश्चंद्र मैगजीन
5. छायावाद और छायावादोत्तर काल के कवि
6. महात्मा गांधी, रवीन्द्र नाथ टैगोर, विवेकानंद के विचार संग्रह
7. लोककवि रघुवीर शरण सिंह––बटोहिया
8. भारतेंदु मंडल के कवि

ISSN No. : 0970-9398

घुमंतू बंजारा समुदाय के विविध संस्कार : साहित्य और संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में

–प्रो. शैलेंद्र कुमार शर्मा

मनुष्य जन्मना अनगढ़ होता है, किंतु उसे मानवीय गुणों से सम्पन्न करवाने के लिए संस्कारित करने की, नैतिकता, मूल्य जैसे जरूरी गुणों को विकसित करने की आवश्यकता होती है। संस्कार की व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में कहा गया है कि संस्करणं सम्यक्करणं वा संस्कारः अर्थात् दोषों के निवारण, अभाव या त्रुटि की पूर्ति करते हुए शरीर और आत्मा में श्रेष्ठ गुणों का उत्पादन करने वाले शास्त्र विहित क्रियाकलापों या कर्मकांड द्वारा उत्पन्न अतिशय – विशेष को संस्कार कहा जाता है। इस प्रकार मैल, दोष, दुर्गुण या कमी का निराकरण कर शरीर और आत्मा की अपूर्णता की पूर्ति करते हुए श्रेष्ठ गुणों को उत्पन्न करना ही संस्कार है।

भारतीय संस्कृति में शास्त्र से लेकर लोक तक संस्कारों की विशेष महिमा रही है। देश के विभिन्न क्षेत्रों में बसे लोक, जनजातीय समुदायों, विमुक्त एवं घुमन्तू जातियों में अनेक संस्कार विधिपूर्वक किए जाते हैं। इनसे जुड़े हुए अनेक लोकाचार, लोकानुष्ठान, लोकगीत, कथाएं, लोकोक्तियाँ आदि प्रचलित हैं। विभिन्न अंचलों में इनसे जुड़े स्थानीय रीति – रिवाजों की भी अहम भूमिका दिखाई देती है। बंजारा, कंजर सहित बीस से अधिक विमुक्त जातियाँ मध्यप्रदेश में निवासरत हैं। यथा, बंजारा, कंजर, सांसी, बांछड़ा, कालबेलिया, भारमोटिया (भरमोटिया), मोघिया, बागरी, नट, पारधी, बेड़िया, हबूदा, भाटू, कुचबंदिया, बिजारिया, कबूतारिया (कबूतर), सन्दुत्या, पासी (पासीया), चन्द्रबेड़िया, बेरागी और सनोरिया। समीपवर्ती राजस्थान में पचास से अधिक समुदाय इसके अंतर्गत आते हैं। इसमें नट, भाट, भोपा, बंजारा, कालबेलिया, गड़िया या गाड़ोलिया लोहार, गवारिया, बाजीगर, कलंदर, बहरूपिया, जोगी, बावरिया, मारवाड़िया, साठिया, रैबारी आदि प्रमुख हैं, जिनमें से कई मध्यप्रदेश के मालवा, निमाड़, बुंदेलखंड और चंबल क्षेत्र में भी बसे हुए हैं। लोक अनुश्रुतियों के अनुसार छत्तीसगढ़ में बसे पारधी, बहेलिया, ब्याधा, चिता पारधी, लंगोली पारधी, शिकारी, टाकनकार, टाकिया आदि में से कई मध्यप्रदेश और राजस्थान से सम्बंध रखते हैं। सरगुजा जिले में बसे व्याध या शिकारी समुदाय के लोग अपना सम्बन्ध उज्जैन से जोड़ते हैं। इन सभी समुदायों में संस्कारों को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

बंजारा देश की एक प्रमुख विमुक्त जाति है। जीवन भर घूमने के चलते बंजारा समुदाय अविराम यात्रा के पर्याय बन चुके हैं। बंजारों का न कोई ठौर–ठिकाना होता है, न ही घर–द्वार। पूरा जीवन यायावरी में निकाल देते हैं। सदियों से यह समुदाय देश के दूर–दराज इलाकों में निडर हो यात्राएं करता रहा है। देश–देशान्तरों को नापते बंजारे, अरब से अरबी कपड़े, मुल्तान से मुल्तानी मिट्टी और गुजरात के तटीय इलाकों से नमक गधों पर लादकर भारत के अलग–अलग हिस्सों की यात्रा करते थे और अपना भरण पोषण करते थे। ये लोग व्यापार के माध्यम से भिन्न–भिन्न सभ्यताओं और संस्कृतियों को जोड़ने का काम करते हैं। बंजारों की लोक संस्कृति में विविध संस्कारों की महत्त्वपूर्ण भूमिका दिखाई देती है।

संस्कारों की महत्ता सुदूर अतीत से अब तक बनी हुई है। दुनिया के प्रायः सभी धर्म, विश्वासों और संप्रदायों के संस्कार महत्वपूर्ण बने हुए हैं। भारत में जन्म से पूर्व गर्भ से ही संस्कारयुक्त बनाने के प्रयत्न आरम्भ हो जाते हैं। जन्म पूर्व के संस्कारों के पीछे भावी पीढ़ी की बेहतरी के साथ प्रसूता की सम्यक् साज – संभाल की चिंता भी दिखाई देती है। गर्भधारण के बाद माता के खान पान, आचार विचार, आहार विहार पर ध्यान देना आवश्यक होता है। उस समय उसकी इच्छा – अनिच्छा, रुचि – अरुचि का विशेष ध्यान रखा जाता है। वह प्रसन्नचित्त और तनावमुक्त रहे, इसका दायित्व सभी परिवारजनों पर रहता है। यह चिंता बंजारा समुदाय में भी दिखाई देती है।

संस्कारों से तमाम प्रकार की बुराइयों से मुक्ति मिलती है और मनुष्य नीति संपन्न बनता है। देश

देशान्तरों में संस्कार की कई विधियाँ प्रचलित हैं। भारतीय मान्यता है कि जन्म से मनुष्य संस्कारों से विहीन होता है, क्रमानुसार उसे संस्कारशील बनाया जाता है। प्राचीन काल में संस्कारों के प्रकार और संख्या को लेकर अलग – अलग मत मिलते हैं। हारीत ने दो प्रकार के संस्कार माने हैं, द्विविधो हि संस्कारो ब्राह्मो दैवश्च। ब्राह्म और दैव दो प्रकार के संस्कार होते हैं। उन्होंने गर्भाधान आदि संस्कारों को ब्राह्म संस्कार कहा है, जिनके माध्यम से श्रेष्ठ गुण और विशेषताएं उत्पन्न होती हैं। इसी प्रकार वे पाक, यज्ञ आदि संस्कारों को दैव संस्कार कहते हैं, जिनके माध्यम से देवत्व अथवा देव सदृश गुण उत्पन्न होते हैं। सोलह प्रमुख ब्राह्मण या स्मार्त संस्कारों को व्यास स्मृति में इस तरह बताया गया है –

गर्भाधानं पुंसवनं सीमन्तो जातकर्म च।
नामक्रिया निष्क्रमोऽन्न–प्राशनं वपनक्रिया
कर्णवेधो व्रतादेशो वेदारम्भक्रियाविधिः।
केशान्तः स्नानमुद्वाहो विवाहाग्निपरिग्रहः
त्रेताग्निसङ्ग्रहश्चेति संस्काराः षोडशः स्मृताः।

महर्षि अंगिरा ने इन षोडश संस्कारों के साथ पंचमहायज्ञ, अष्टका, श्रावणी, आश्वयुजी, आग्रयण, वेदारम्भ, वेदोत्सर्जन, प्रत्यवरोहण तथा दार्श–श्राद्ध की गणना कर पच्चीस प्रमुख संस्कार बताए हैं। उन्होंने बलिकर्म और निष्क्रमण इन दोनों को भी षोडश संस्कारों में सम्मिलित किया है। इसी प्रकार महर्षि गौतम ने गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन, चौल, उपनयन, चार वेदव्रत, स्नान (समावर्तन), सहधर्मचारिणी संयोग (विवाह) तथा पंच महायज्ञों का अनुष्ठान इन सोलह ब्राह्म–संस्कारों के साथ उपर्युक्त इक्कीस दैव –संस्कारों का परिगणन कर कुल मिलाकर चालीस संस्कार बताए हैं। इनके अलावा उन्होंने दया, शान्ति, अनसूया, शौच, मंगल, अकृपणता, अस्पृहा और अनायास इन आठ आत्मगुणों की गणना कर कुल अड़तालीस संस्कार बताए हैं। वैज्ञानिक दृष्टि से इन सोलह स्मार्त संस्कारों को चार वर्गों में बांटा जा सकता है – प्राग्जन्म–संस्कार, शैशव–संस्कार, शैक्षणिक–संस्कार और गृहस्थ– प्रवेश– संस्कार। विभिन्न संस्कारों में से अधिकांश संस्कार जन्म से किशोरावस्था के पूर्व तक सम्पन्न हो जाते हैं, क्योंकि इस दौरान जो संस्कार विकसित होते हैं उनके निरन्तर बने रहने की संभावनाएँ अधिक होती हैं। विभिन्न समुदायों में प्रचलित संस्कार एक तरह से प्रतीकात्मक अनुष्ठान और व्यंजक होते हैं। इनमें अनेक प्रकार के गहन संकेत और अनुभव छुपे हुए हैं, अतः इनके मूलाधार को समझे बिना उनके साथ न्याय नहीं किया जा सकता है।

संस्कार हमारे जीवन के महत्वपूर्ण पड़ावों को पवित्रता और महिमा प्रदान करते हैं। मनुष्य जीवन मात्र शरीर से जुड़ा हुआ व्यापार नहीं है, वरन् उसका संबंध मनुष्य की बुद्धि, भावना और आत्मा से है। संस्कार इन सभी के प्रति जागरूकता उत्पन्न करते हैं। संस्कारों का महत्त्व केवल व्यक्ति या परिवार जीवन के लिए नहीं है, सम्पूर्ण समाज, राष्ट्र और विश्व जीवन के लिए है। जीवन को उत्तरोत्तर बेहतर बनाने में इनकी भूमिका है। संस्कारवान व्यक्ति उसी तरह बन जाता है जैसे किसी धातु को घिसने – मांजने से उसमें चमक आ जाती है।

मध्यप्रदेश सहित भारत के विभिन्न क्षेत्रों में बसे विमुक्त समुदायों की अपनी विशिष्ट संस्कृति, संस्कार और परंपराएँ हैं। उनके नामकरण, मूल स्थान और उत्पत्ति की अलग – अलग किंवदंतियाँ हैं। उनके अपने विशिष्ट रीति रिवाज, मान्यताएँ, देवी – देवता, अनुष्ठान, लोक विश्वास, प्रतीक, वस्त्राभूषण, खान–पान, व्यवसाय और खेल हैं। इनका परिवेश और कर्मानुरूप विशिष्ट शारीरिक गठन और रूप – रंग है। उनकी पारिवारिक व्यवस्था, सामाजिक संगठन, न्याय एवं जाति पंचायतों में भी विलक्षणता दिखाई देती है। बार बार प्रताड़ना और बेदखल किए जाने के बावजूद विमुक्त और घुमन्तू समुदायों ने अपनी जातीय स्मृतियों, मूल्य और मान्यताओं को कथा, गाथा, लोकगीत, कहावत, पहेली आदि के माध्यम से कंठानुकंठ प्रवाहित करते हुए जीवित रखा है। मध्यप्रदेश में बसी कई विमुक्त जातियों ने नृत्य, गायन, वादन, नाट्य, शिल्प, चित्र, गुदना, आदि के माध्यम अपनी विशिष्ट प्रदर्शनकारी और रूपंकर कलाओं को जीवित रखा है। मध्यप्रदेश की प्रमुख विमुक्त जातियों–बंजारा, बागरी, मोघिया, पारधी, नट आदि की अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान है, जिस पर निकटवर्ती समुदायों का न्यूनाधिक प्रभाव दिखाई देता है, साथ ही उन्होंने भी अपनी छाप समीप बसे समुदायों पर छोड़ी है।

विभिन्न घुमन्तू समुदायों में बंजारा समुदाय का वाचिक साहित्य अत्यंत समृद्ध है। संस्कार लोकगीत बंजारों में विशेष महत्व के हैं। इन गीतों में उनकी सांस्कृतिक परम्पराएँ, लोक विश्वास, इतिहास और जातीय स्मृतियों के अनेक तत्व अंतर्निहित हैं। जन्म, विवाह और मृत्यु जीवन–चक्र के तीन प्रमुख बिन्दु हैं, जो विभिन्न संस्कारों से जुड़े होते हैं। जन्म, नामकरण, मुंडन, विवाह, मृत्यु आदि से संबंधित संस्कार बंजारा समुदाय में परंपरागत रूप से व्यवहार में लाए जाते हैं और संस्कार गीत भी गाए जाते हैं। इनके संस्कार संबंधी लोक साहित्य में जन्म (बधावा), जलवा, वेमता माता या छठी, नामकरण, मुंडन, विवाह, तिलक या सगाई, मांडो या मंडप, पराती या परभाती, उबटना, हल्दी, चूड़ी पहनने, वस्त्र परिधान, बना–बनी, द्वारचार या अगवानी, भाँवर या फेरे, बिदाई–ढावलो, हवेली, मळ या मलालो, मृत्यु आदि सम्बन्धी लोकगीत प्रमुख हैं। इनके संस्कार गीतों के कई उपविभाग किए जा सकते हैं। विवाह गीतों को इस तरह बांटा जा सकता है–सगाई, घोटा, भोज, बना–बनी, विवाह की विधियाँ, सीठना, लग्न, ढावला, बिदाई गीत, ससुराल में वधू का स्वागत एवं विविध। इन गीतों को नई पीढ़ी अपनी दादी अथवा नानी के साथ गाते–गाते सीख जाती है। ढावला जैसे कुछ गीतों की लय बड़े परिश्रम से सीखी जाती है। बंजारा समुदाय में यह विश्वास है कि आराधना द्वारा लोक देवी–देवता प्रसन्न होकर भक्तों की इच्छाएँ अपने अंदर समाहित कर लेते हैं। इसलिए उन्हें प्रसन्न करने के लिए वे विविध आनुष्ठानिक क्रियाएँ करते हैं। उनका उद्देश्य यही है कि जन्म के बाद सन्तान या विवाह के दौरान वर–वधू को अनिष्ट शक्तियों से संरक्षित किया जा सके। उन्हें दीर्घ जीवन मिले, स्वास्थ्य अच्छा रहे। इस प्रकार के अनेक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए बंजारा समुदाय में कई प्रकार के संस्कार किए जाते हैं।

जन्म से सम्बंधित अनेक संस्कार विधियाँ और लोकगीत बंजारा समुदाय में प्रचलित हैं। बंजारा समुदाय में प्रसव या जनन क्रिया को जणणा कहा जाता है। कुछ क्षेत्रों में शिशु जन्म के समय प्रसूता के लिए अलग से एक झोंपड़ी बना कर उसे दूर रखा जाता था। उससे सूतक के रूप में लगभग एक माह तक दूरी बरती जाती है, जो प्रसूति को रोगमुक्त ढंग से सम्पन्न करवाने के लिए की जाती है। कहीं यह अवधि इक्कीस दिनों तक रहती है। जन्म के बाद ही ब्राह्मण से पांच नाम पूछे जाते हैं। उन नामों को बोलने के बाद प्रसूति को स्तनपान कराया जाता है और लोगों को लापसी का भोज दिया जाता है। मानव जीवन जन्म से मृत्यु के बीच की यात्रा है। बंजारा समुदाय में बच्चे के जन्म समय नार (नाल) गिरने तक परिवार में सूतक होता है, उसके बाद शुद्धिकरण। महिलाएँ बधाई गाती हैं। भाँग (गुड़– आटे से बना व्यंजन) और घुघरी बंटती है। बंजारा समुदाय में जन्म के समय बधाई गीत, विवाह में सगुन गीत, गारी, होली में फाग, भुजलिया, गणगौर में आल्हा गीत, ईश्वर आराधना में झामरा भजन – जस, श्रमगीत, शोक गीत एवं अन्य उत्सव में लोकगीत गायन होता है। पुत्र जन्म के अवसर पर गाया जाने वाला लोकगीत वधावा कहलाता है। इस गीत में हर्ष प्रकट किया जाता है। वधावा या बधावे की कड़ी को लेंगी कहते हैं। इसका प्रयोग हर्ष की अभिव्यक्ति के लिए होता है। पुरुष सामूहिक रूप से लेंगी गाते हैं। स्वर को ऊंचा–नीचा करते जब कोई समूह लेंगी गाता है तो समा बंध जाता है। लेंगी में कांसे के घड़ियाल पर चोट मार कर ताल दी जाती है। इस चोट के कारण वातावरण झंकृत होता रहता है। बंजारा समुदाय का लोकप्रिय बधाई लोकगीत है –

पहलो मेंड़ों हे गोसाई बाबा रो निकरो कौड़ौं उपजो
तू जो मेड़ों धरती माता रो लीजो
जेरी ऊपजी हरियल दूब तीजों मेंड़ों
धरती माता रो वासंग
देवता जे पे रचणा रचायो।

सन्तान के जन्म को ईश्वर की कृपा माना जाता है। टांडों में बंजारा स्त्री की प्रसव अवस्था में कोई विशेष देखभाल नहीं की जाती है, क्योंकि समुदाय में यह सोच रही है कि प्रसव एक सहज क्रिया है। ईश्वर की कृपा से सब कुछ अच्छा होकर रहेगा, यह विश्वास इस समुदाय में आज भी देखा जा सकता है। विशेषतः यह भी देखा गया है कि स्त्रियाँ शिशु को जन्म देने तक कार्य करती रहती हैं। ऐसे उदाहरण भी मिलते हैं, जिनमें कई बंजारा स्त्रियों ने सामान्य कामकाज करते समय शिशु को जन्म दिया हो। शिशु के जन्म देने को स्त्री का पुनर्जन्म माना गया है। स्त्री के जीवन–मरण का प्रश्न होते हुए भी बंजारे अपनी स्त्रियों को प्रसव पीड़ा के बाद प्रायः घर पर ही इस क्रिया को सम्पन्न

करवाते हैं। प्राचीन काल में प्रसव उपचार की पर्याप्त सुविधाएँ नहीं थीं। स्त्रियों को प्रसव पीड़ा अधिक महसूस होने लगती है तो अपनी कुल देवता की पवित्र धूनी का अंगार माथे पर लगाते हैं। प्रसव पीड़ा से जूझती स्त्री अपनी दादी से इस वेदना को व्यक्त करती है, एक लोकगीत देखिए –

दादीये थामलं मारे जीवड़ान।
कड़ेमा सुळा लागरोचं
पेटेमा काळजो तोड़रोच।
दादीये थामलं मारे जीवड़ान।

अर्थात् दादी मेरे तो प्राण थम गये हैं। कमर में सुई जैसी चुभन हो रही है। पेट में कलेजा टूट रहा है। दादी मेरे तो प्राण थम गये हैं।

बंजारा परिवार में शिशु के जन्म के समय दाई, जिसे डाईसाळ कहते हैं, प्रसवकाल में महत्त्वपूर्ण सहायता देती है। दाई माता से विनय याचना करते हुए उसे प्रलोभन भी दिया जाता है, जिससे सब कुछ कुशलता से हो जाए।

दायी मार याड़ी चाल झपको घरेन
तोन रुपेरो हासलो दरा दियूं
तोन ज्यार गेवहुँ दियूं।
तेन याड़ी पामड़ी दारा दियु।

प्रसव की अवधि में बंजारा स्त्रियाँ शिशु जन्म के बाद थाळी एवं नगाड़ा बजाने, नाळो काटने, नातरो, जळवा धकाणो, जावळ काड़णो जैसी विधियाँ सम्पन्न करती हैं। ये सभी जन्म संस्कार के मुख्य अंग हैं। प्रसव के बाद स्त्री को लड़का हुआ या लड़की यह सूचना सर्वप्रथम दाय माता से परिवारजनों को मिलती है। यदि लड़का हुआ तो टांडे के मध्य भाग में जाकर नगाड़ा बजाया जाता है और यदि लड़की हुई तो थाली।

प्रसव प्रक्रिया के बाद नाल या नाळो काटने की विधि संपन्न की जाती है। नाल काटने के बाद आँगन के बाईं ओर एक गड्ढा खोदकर उसमें प्रसव का रक्त और नाळो को गाड़ दिया जाता है। इस विधि के बाद माता शिशु को स्तन पान कर नहलाती है। शिशु को दिन में दो बार नहलाया जाता है। शिशु की मालिश कर पैरों पर औंधा लेटाकर स्त्रियाँ नहलाती हैं, जिससे शिशु तुरन्त सो जाता है। शिशु सो जाने के बाद दादी माँ गाती है – याड़ी बाप दिने जनम / नव मिना नव दाड़ घाली पेटे में / बाळा सो जोर।

संतान जन्म का समाचार मिलने के बाद टांडे की सभी स्त्रियाँ आकर गीत गाकर बधाई देती हैं। उसमें नायक की पत्नी भी सहभागी होती है। संतान के जन्म की सूचना मिलने पर बधाई के रूप में नातरो नामक लोकगीत सभी स्त्रियाँ गाती हैं –

पेल मड़ाये नामे मारी धरती रो लेस्या।
धरती रो जावे तळ नीपजो ये।।
दूसरो मड़ाये नामे मारे मेलिया रो लेस्या
मेलिया रो जावे तळ नीपजो ये।।
तीन मड़ाये नामे मारे गोसाई से जाय आणद वदाव।
गोसाई से जावे तळ नीपजो ये ऽऽऽ।।
चार पड़ाये नामे मारे गावड़्ली रो लेस्या
गावड़ली रो जाव बसु धोरये ऽऽऽ।।
पाँच मड़ाये नामे मारे छोळलड़ी रो लेस्या।
छेळलड़ी रो जाव चलहल बोकड़े`।।
छे मड़ाये नामे मारे घोड़ली रो लेस्या
घोड़ली रो जाव तेजी हाण होकरे।।
सात मड़ाये नामे मारे भेसलड़ी रो लेस्या।
भेसलड़ी रो जाव समदर होलोळो।।
आठ मड़ाये नामे मारे जणती रो लेस्या
जणती रो जाव ओरो भरये ऽऽऽ।।
नवमड़ो मड़ाये नामे मारे नायकेडे रो लेस्या
नायके री नगरीये आणद वदावे`ऽऽ।।

आशय है कि सर्वप्रथम हम धरती माता को नमन करते हैं, जिसके तल पर तुमने जन्म लिया। दूसरा नमन महाराज को करते हैं। तीसरा नमन हम शिवशंकर (गोसाई) को करते हैं, जिसकी कृपा से तुम्हारा जन्म हुआ। चौथा नमन हम गौ माता को करते हैं। तुम्हारे कल्याण के लिये गौ माता को किया गया प्रणाम बसु (वृषभ) के पास भी पहुँचेगा। पाँचवाँ नमन हम बकरी को करते हैं, साथ ही बकरे को भी करते हैं, जो बलि देते समय काम आएगा। छठा नमन हम घोड़ी को करते हैं, जिसका उपयोग तुम्हारे जीवन में होगा। सातवाँ नमन हम भैंस को करते हैं। समुद्र की उफान जैसे तुम्हारे मन को शांत रखे। आठवाँ नमन तुम्हें जन्म देने वाली माता को करते हैं, जिसकी वजह से तुम इस पृथ्वी पर आए। नौवाँ नमन हम हमारे नायक को करते

ISSN No. : 0970-9398

हैं, जिसके तांडे में तू सुख एवं शांति से रहेगा।

वेळकप का लोकगीत खत्म होते ही दूसरे नातरो गाए जाते हैं। वेळकप को प्रथम संस्कार माना गया है। यह विधि शिशु और प्रसूता को नहाने के पहले की जाती है। यह होने तक दोनों को नहलाते नहीं। इसके लिये आवश्यक सामग्री लापसी तैयार करते हैं। लापसी के साथ गुड़ और नारियल की आवश्यकता होती है। सामान एकत्र होने के बाद घर के चूल्हे को चढ़ावा चढ़ाते हैं। यह पूजा विधि सम्पन्न होने के बाद एक बड़ी सी थाली में पूरा सामान रखते हैं। साथ में मोटे आटे को पीसकर नारियल और गुड़ डालकर उसकी थूली बनाते हैं। तत्पश्चात् उसे गुड़ के साथ पानी में पकाया जाता है, जिसे लापसी कहते हैं। यह एक प्राचीन पूजा विधि है, जिसका सातत्य बंजारा समुदाय में बना हुआ है। लापसी आदि पदार्थों से अग्नि की पूजा की जाती है। यह सामान पाली में रखते हैं। उसमें अगरबत्ती लगाते हैं। पूजा करने वाला व्यक्ति इन खाद्य पदार्थों के निवाले चूल्हे के अंगारे पर घी के साथ रखता हुआ उसे अग्नि में अर्पित करते हैं। सीधे हाथ में पानी लेकर अंगारों के चारों ओर छिड़कते हैं और चूल्हे को नमस्कार करते हैं। यह पूजा विधि दिन में किसी भी समय की जा सकती है। नारियल की कतरन एवं गुड़ लेकर उस परिवार की बड़ी स्त्री आँगन में आकर लोगों को प्रसाद के रूप में बाँटती है। इस समय कुछ स्त्रियाँ नातरो गाती हैं –

मारे... घर आंबेलिया सोये।
मारे... घर ढळ दोई चाँद।।
बाळूला आमलाये।
गळ रस आम्बलो।।

शिशु जन्म के बाद माता को लापसी खिलाते हैं। लापसी गेहूँ के मोटे पिसे हुए आटे को भूनकर उसमें घी और गुड़ डालकर पानी में उबालकर तैयार किया जाता है। गाढ़ा होने पर उसे खाया जाता है। स्वादानुसार स्त्रियाँ इसमें काजू, बादाम डालती हैं। पौष्टिकता से युक्त लापसी तैयार करते वक्त स्त्रियाँ गाती हैं –

बाईये लापसी मा टोपरो घाली काई? बाईये लापसी मा बादाम घाली काई? बाईये लापसी मा काजू घाली काई? बाईये लापसी मा इलायची घाली काई?

शिशु जन्म के पांच दिनों के बाद एक रस्म की जाती है, जिससे घर की लकड़ियों से हवन किया जाता है। इस रस्म को वेवल कहते हैं। प्रसूता के सिर पर पानी से भरे दो लोटे एक दूसरे के ऊपर रखे जाते हैं। फिर एक हँसिया को उसके दाएँ अंगूठे से सात वार स्पर्श कराया जाता है। गेहूँ के सात दाने पानी में भिगो कर माला बनायी जाती है और नवजात शिशु के गले में पहना दी जाती है। अंत में प्रसूता छोटे–छोटे बच्चों को बुलाकर उनके पाँव धोती है और उन्हें प्रणाम करती है। सूतक समाप्त होते ही नामकरण संस्कार किया जाता है। जब शिशु एक वर्ष का हो जाता है, तब उसका मुंडन किया जाता है। कुल–देवता को बलि अर्पित की जाती है। समुदाय के पंचों को लपसी और भोजन कराया जाता है। इस रस्म को जावल कहते है। थोड़ा बड़ा होने पर कान छेदन की रस्म होती है। कर्ण वेधन के समय बायीं भुजा पर सूई से पांच दाग दिये जाते हैं और कुछ मंत्र पढ़े जाते हैं। कन्याओं के यौवनारम्भ से सात दिनों तक उन्हें एक सुनिश्चित स्थान में परिसीमित कर दिया जाता है। उसके बाद यह अपने घर लौट आती हैं।

जन्म संस्कार से जुड़ा एक महत्वपूर्ण लोकगीत है, जिसे एकळपोयु गीद कहा जाता है। यह गीत पुत्र जन्म के अवसर पर गाया जाता है। बंजारों के परिवार में पुत्र जन्म किसी उत्सव से कम नहीं होता है। इस पुत्र को सेवाभाया कहा जाता है। कुछ पंक्तियाँ देखिए–

सेवाभाया जलमों येघर दूयों वजाळो
भगवान जलमों येघर हूयो वजाळो।
याडि बापूरि आसिस ये बेटा जलमों ये
देवू, धरमूरि आसिस ये बेटा जलमों ये।
आचि आचि घड़ी ये सूरज्या जलमों ये
छटी मातार आसिस ये याड़ी घड़ी ये।
चांदा सूरजोरी उमर ये बेटान आसिस ये
माँ–बापेरि रे छडिवेन रिसतू
सेवाभायार आसिस तोनरे बेटा
भगवानेर आसिस तोनरे बेटा।

यह एक तरह का प्रार्थना गीत है, जिससे बच्चे को ईश्वर का आशीर्वाद प्राप्त हो सके। इस लोकगीत में बड़े होने पर बच्चे के अपने माता – पिता तथा समुदाय के रक्षक बनने की प्रार्थना की जाती है। इसमें

आने वाले प्रतीक, रूपक तथा लय आदि अर्थपूर्ण होते हैं। इन गीतों के माध्यम से बंजारों का अभिव्यक्ति सौंदर्य तथा उनकी कल्पनाशीलता को देखा जा सकता है। पुत्र जन्म पर होने वाली खुशी इतनी है कि उनको लगता है कि जैसे सारा घर सूर्य के प्रकाश से भर गया है।

बंजारा समुदाय के लोग जन्म के बाद छठी माता की आराधना करते हैं। इसके लिए गाए जाने वाला लोकगीत दळना धोकायेरो कहलाता है। उसके बाद बच्चे को पालने में डालने की रस्म की जाती है। इसे छोरान तोटलाम घोलेरो कहा जाता है। इस गीत की कुछ पंक्तियाँ देखिए–

वेमाता हासती हासती आयेस।
रोती रोती जायेस।।
लेपो, लावण लेन पर जायेस।
सुवो सुतळी लेन आयेस।।
वेमाता हालन फूलन रकाडेस।
सण ढेरो लेन आयेस।।
वेमाता सुई दोरा लेन पर जा लेन जायेस।
सण सुतळी सुवो लेन आयेस।।

स्त्री वेमाता अर्थात् प्रसूता से हंसते–हँसते घर आने को तथा रोते–रोते जाने को कह रही है। इस गीत में लेपो–लावण तथा सुई–धागा शब्दों का प्रयोग उल्लेखनीय है। लेपो लावण बंजारा स्त्रियों के लहंगे को कहते हैं। सुई धागा लमाणी महिलाओं के जीवन से जुड़ा महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। इस लोकगीत की ये पंक्तियाँ कि हँसते आना और रोते जाना भी विशेष उल्लेखनीय है, जिनका अर्थ है यदि लड़की का जन्म हो तो तुम यहाँ से रोते जाना और पुत्र का जन्म हो तो हँसते आना।

बंजारा जन्म संस्कार में जळवा धकाणो की विधि भी महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। जळवा धकाणो का अर्थ माता द्वारा अग्नि को प्रणाम करना है। इस विधि को सम्पन्न करने के लिये घर के आँगन में एक गड्ढा बनाया जाता है, जिसमें अग्नि प्रज्वलित की जाती है। इस संस्कार में पाँच निर्वस्त्र बच्चे माता के सिर पर पानी भरा घड़ा रखते हैं। माता वह घड़ा लेकर गड्ढे के पास आती है। वहाँ घड़ा रखकर दायें पैर के अँगूठे से पानी को अग्निमय गड्ढे में बहाया जाता है। अग्नि शांत होने के बाद माता अग्निमय गड्ढे को प्रणाम करती है। तत्पश्चात् माता उन बच्चों को कुरल नामक प्रसाद देती है।

छोरोम धुंडेरो नामक रस्म में बच्चे का नामकरण किया जाता है। बाळलट्टा काढेरो नामक संस्कार मुंडन संस्कार है। बंजारा समुदाय में जन्म के विविध संस्कार पारंपरिक विधि अनुसार सम्पन्न किए जाते हैं। वर्तमान में जन्म संस्कारों की कुछ विधियाँ लुप्त भी हो रही हैं।

धुंड या धूंड संस्कार बंजारा समुदाय में महत्त्वपूर्ण जन्म विधि मानी जाती है। बंजारों में धूंड विधि अत्यधिक लोकप्रिय है, जिसकी हजारों वर्षों की परंपरा रही है। यह आज भी उत्साह के साथ सम्पन्न की जाती है। तेलंगाना, महाराष्ट्र आदि क्षेत्र में बसे कई टांडों में होली प्रतिवर्ष नहीं जलाई जाती। जिस परिवार में होली से पहले बालक पैदा होता है, वही होली जलवाता है। यदि माता – पिता असमर्थ हों तो टांडे के लोग सहायता करते हैं। धुंड या धूंड के मौके पर होली जलाने के अतिरिक्त टांडे के लोगों को भोज दिया जाता है। आसपास के टांडों से भी लोग भोजन करने आते हैं। धूंड शब्द धूंडा नामक राक्षसी का परिचायक है। आज भी बंजारों में होली का तांत्रिक रूप सुरक्षित है। धुंडा राक्षसी बालकों के लिए अहितकर मानी जाती थी। धुंड के आस–पास घेरकर खड़े होने वालों को गेरिया कहते हैं। होली के तीन–चार दिन पहले भगवान को स्मरण करते हुए निर्धारित स्थान पर लकड़ी का डांडा खड़ा किया जाता है। उस समय गेरिया लोग गीत गाते हैं।

वस्तुतः धुंड गोर बंजारा समुदाय के सबसे बड़े उत्सवों में एक है। इस दिन गोर बंजारा समुदाय में जन्मे नवजात शिशु को एक सामाजिक शिक्षा के तहत कुछ बातें सिखाने की परंपरा है। उस दिन हाथों में लकड़ी लेकर और साथ में सैकड़ों वर्षों से चले आ रहे बंजारी भाषा के लोक गीत द्वारा सीख दी जाती है –

शिकच शिकावच, शिकेर राज घड़ावच।
शिके जेरी साज पोली, घियेर पोली।
पहिलो बेटा, नाइकी करिये।
दुसरो बेटा, कारभारी करिय....

इसका तात्पर्य यह है कि जब गोर बंजारा समुदाय में सन्तान जन्म लेती है, तब हर होली के त्योहार के दिन उसको अपनी बोली में शिक्षा का महत्व और कामकाज की जानकारी दी जाती है। धूंड संस्कार में जावळ काढ़णो, होलिका दर्शन, लेमार होली और

ISSN No. : 0970-9398

अन्त में शिशु को एक कम्बल की छाया में माता की गोद में बैठाकर बड़े डंडों पर छोटी–छोटी छड़ियाँ बजाकर आशीष दिया जाता है–

चरीक चरिया चम्पा ढोल
जूजू चराये ले रोला।।
पेलो बेटा नाईकी करीये
दूसरो बेटा कारभार करीये
तीसरो बेटा खादू चराये
चौथो बेटा घेड़ चराये।।
पाँचवें बेटा छेळी चराये
छोंवो बेटा माँ–बाप पोसीये।।

आशय यह है कि संस्कार में शिशु को आशीर्वाद देते हुए उसके कर्म निश्चित करने की प्रथा रही है। समुदाय की धारणा है कि परंपरा के अनुसार पहला बेटा टांडे का नायक बनेगा। दूसरा बेटा टांडे का कारभारी का काम संभालेगा। तीसरा बेटा गौचारण करेगा। चौथा बेटा घोड़ों की देखभाल करेगा। पाँचवाँ बेटा बकरियां संभालेगा और छठा बेटा माता–पिता की देखभाल करेगा।

जन्म संस्कार के बाद लोक जीवन में विवाह संस्कार का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस संस्कार के बाद मनुष्य गृहस्थ जीवन में आगमन करता है। विवाह में इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है कि एक ही गोत्र के सदस्य शादी नहीं कर सकते। उन्हें भाई और बहन माना जाता है, जिसे भाईपन (भाईचारा) कहा जाता है। विभिन्न गोत्रों के सदस्य विवाह कर सकते हैं और इस जोड़े को काई–लागेनी (विवाह कर सकते हैं) के रूप में जाना जाता है। परंपरागत रूप से, भावी जोड़ों के जत्थों की जाँच ढाड़ी भात के रूप में जाने वाले विशेषज्ञों द्वारा की जाती है, जो गोत्र या जात प्रणाली को जानते थे और उचित विवाह की पहचान कर सकते थे। विवाह की परंपरा इस समुदाय में समय के साथ परिवर्तित हो रही है। पूर्व में जब बेटों के अनुपात में बेटियों की संख्या कम थी, उस समय विवाह की शर्त होती थी कि वर पक्ष जब तक वधू पक्ष को ओखली (धान कूटने की ओखली) भर रुपए (उस समय चाँदी के सिक्के प्रचलित थे) नहीं देंगे, तब तक विवाह नहीं हो सकता। विवाह संबंध कम उम्र में ही तय हो जाते हैं। रिश्ता पक्का होने पर सगाई कर देते हैं, फिर साल दो साल में जब जिसकी जैसी गुंजाइश होती है, विवाह किया जाता है।

बारात आगमन पर किसी भी वृक्ष के नीचे वर पक्ष को जनवासा दिया जाता है। जनवासे में बारातियों को कचौड़ियाँ (नाश्ता), गुड़ और रोटी का चूरमा, लड्डू परोसे जाते हैं। दुल्हन के लिए भाँवरे की जो साड़ी लाई जाती है, उसे चार लोग तान कर घर से निकलते हैं और बीच में दूल्हा कटार लेकर निकलता है। आँगन में चौक, स्वास्तिक बनाया जाता है। हल्दी चढ़ती है, पूजन के पश्चात् घर की महिलाएँ दूल्हे को भेंटती है, जिसे ढावलो काड़ना कहते हैं, जिसमें गीत गाए जाते हैं। विवाह में पंडित का कार्य बड़तिया बंजारा करते हैं। बारात झेलने के बाद भाँवर पड़ती है। विवाह मंडप के लिए कुम्हार से 28 बेई (छोटे मिट्टी के कलश या करवा) लाई जाती है। चारों कोनों में सात–सात बेई लगाई जाती है। आक–ढाक सहित सात प्रकार की लकड़ी लाते हैं, जिन्हें बेई के चारों ओर सजाते हैं। मंडप के बीच दो मूसल (ओखली में कूटने वाली लकड़ी) गाढ़े जाते हैं। इसमें साड़ी या चादर का पर्दा तानकर दोनों तरफ दूल्हा और दुल्हन को बैठाया जाता है। हल्दी लगती है, महिलाएँ गीत गाती हैं। दूल्हा–दुल्हन को नहलाया जाता है, उस समय ढोक्स्या फुड़ाई की रस्म होती है। पहले दुल्हन को नहलाया जाता है, फिर मान्य परम्परानुसार दूल्हे को नहलाया जाता है। चौक पूर कर, स्वस्तिक बनाकर पूजन के बाद भाँवर पड़ती है। साला दूल्हे के कान में कंकड़ गड़ाकर अपनी बहन के पक्ष में बातें मनवाता है कि मेरी बहन से पूछकर बाजार जाओगे। कोई भी काम करोगे तो मेरी बहन से पूछकर करना। यह रस्म अपनी बहन के भविष्य को सुरक्षित रखने की प्रतीक परम्परा है। दूल्हे को सास दुपट्टे से बाँधकर अंदर घर में ले जाती है, पीछे से दूसरी सास मूसल से मारती है। यह इस बात का प्रतीक है कि हमारी बेटी तुम्हारे घर जा रही है, किन्तु उसे कभी अकेली मत समझना, हम सभी मजबूती से उसके साथ खड़े हैं।

विवाह के समय बेटी को उपहारस्वरूप कपड़े (घाघरा – चोली) दिए जाते हैं, जिनकी गिनती भी होती है। माना जाता है कि जिस घर में कपड़ों की संख्या जितनी अधिक होगी, उनकी उतनी मान–प्रतिष्ठा

होगी। विदाई के समय दुल्हन को बैल पर बिठाकर मुखिया के घर ले जाते थे। वहाँ वह सबको आशीर्वाद देता है। विवाह भोज में भांग (गुड़– आटे से बना व्यंजन), घुघरी, खिचड़ी, लापसी, सीरा, आमड़या इत्यादि पकवान परोसे जाते हैं। यदि परिवार की आर्थिक स्थिति कमजोर है तो केवल भांग (गुड़– आटे से बना व्यंजन) और घुँघरी बांटकर ही इस परपंरा का निर्वाह किया जाता है।

दूल्हे के घर में दूल्हा–दुल्हन लापसी का हुमन या हवन (आग पर गुड़–घी डालकर धूप देना) कर कुल देवता की पूजा करते हैं। दूल्हा–दुल्हन एक ही थाली में भोजन करते हैं, ऐसी मान्यता है कि दोनों का आपसी प्रेम बढ़ेगा। इसके बाद मॉंड खिलाने की रस्म होती है, जिसमें परात में पसई के चावल में सिक्के और कौड़ी को डाला जाता है और दोनों से ढूँढने के लिए कहा जाता है। इस अवसर पर गीत गाए जाते हैं, दूसरे दिन बलि देने की परपंरा भी है, जो अब बदल गई है।

बंजारा समुदाय में जन्म हो या विवाह, कोई भी विधि गीतों के बिना पूर्ण नहीं हो सकती। हर विधि में घर–संसार को प्रेरणा देने वाले सरस लोकगीत बड़ी संख्या में प्राप्त होते हैं। विवाह संस्कार में प्रत्येक अवसर पर बंजारों के खास लोकगीत हैं और उनका सगाई से लेकर विवाह संपन्न होने तक के विविध विधि विधानों से गहरा संबंध है। साथ ही इन गीतों में उनकी जीवन दृष्टि, संस्कृति और मूल्य प्रणाली भी झलकती है। इन गीतों में उनके भाव भी है, पारंपरिक नृत्य भी। अतीत में बंजारा समुदाय में विवाह की विधियाँ अन्य लोक समुदायों के समान दो–तीन महीनों तक चलती थीं। आधुनिक जीवन शैली के प्रभाव से विवाह की विधियाँ तीन–चार दिन में सीमित हो गई है। कुछ महत्त्वपूर्ण विधियाँ आज भी उनके टांडो में सम्पन्न होती हैं, जैसे सगाई, घोटा, साड़ी, बदाई दाग, कलश, हल्दी स्नान, भेंट, हेलेर रपया, लेरिया, कन्यापक्ष एवं वरपक्ष के लोकगीत (बन्ना बन्नी गीत), डॉरळ बांधळी, वधू को बाहर निकालना, दावलो आदि। साड़ी विधि के बाद विवाह स्थली की ओर टांडा छोड़कर वर निकलता है, तो स्त्रियाँ गीत गाती हैं–

राम निकळी तांडेरे भार बाई ये।
रामेरी सेना देको बाइये

दुल्ला निकळो तांडेरे भारं बाई
ये दुलारी सेना देको बाई ये।

बारात बड़े ठाट–बाट से विवाह स्थल पर पहुंची है। हर कोई अपने अहंकार में है कि हम घर के बाराती हैं, हमारा खूब मान–सम्मान होगा। वधू के विवाह मंडप के बाहर जब ये बाराती पहुंचते हैं तो कन्यापक्ष की स्त्रियाँ व्यंग्य बाणों से इनका स्वागत करती हैं–

काई चले आव लाड़ार लसकरियां
वनेने बेसेन राजो ये तुटे पलंगिया।
काई चले आ लाड़ार लसकरियां चनेन बेसेन
राजीये बोदरियां।

इस तरह की नोक झोंक वरपक्ष और कन्यापक्ष की महिलाओं में चलती है। वधू को हल्दी लगाते समय लाड़ली दुल्हन की खूब प्रशंसा की जाती है–

हळदीनं बेटी ये सीता सतवंती हळदी सोबच
ये सोता सतवंती
हळदी लागेरी वेळा
आस लाल मूरत देकेरी वेळा।

जैसे–जैसे समय आगे चलता है, वैसे–वैसे वातावरण और भी भावुक बन जाता है। बंजारों सहित सभी लोक समुदायों में मां–बेटी का गहरा अनुराग है। वधू माता को छोड़कर ससुराल नहीं जाना चाहती। वह रोती हुई गीत गाती है, जिसे सुनकर उपस्थित लोग भी रोने लगते हैं। इस तरह के कई मार्मिक और दुर्लभ लोकगीत बंजारा समुदाय में बड़े परिमाण में मिलते हैं। ये लोकगीत उनकी समृद्ध संस्कृति और पारिवारिक भावनाओं के संवाहक हैं। विदाई के अवसर पर जो गीत गाए जाते हैं, उसमें दुल्हन के मनोभाव अभिव्यक्त होते हैं। वह अपने माता, पिता, भाई, सखियाँ तथा टांडा के नायकों को संबोधित करते हुए अपने मनोभाव व्यक्त करती है और पराए घर जाने का दुख भी। इस लोकगीत की सबसे बड़ी सांस्कृतिक विशेषता यह है कि दुल्हन हवेली को, गाय, बैल, बकरी को संबोधित करती है और उनसे बिछुड़ने का दर्द गीतों में ढलता है। इस मार्मिक गीत की पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं,

हवेली ये आँ हियाँ..
तोती छुटो धोळो घन/ मोतो छुटो मारे जे
बापुरो बंगला आँ हियाँ...

ISSN No. : 0970-9398

वेसु तो सो कांसेरी वाळ न लाग
काड़ी काड़ी कर सासी ये माया जोड़ी
ये हवेली ये आँ हियाँ३
दूध, घी ये रो कालवा चलायेस
अन धनेरी कमी नवेस पाणी पावसेरी
कमी न वेस
ये हवेली ये आँ हियाँ...
गुरु र आसिस देस ये
ये हवेली आँ हियाँ

यह एक सुदीर्घ लोकगीत है। दुल्हन अपनी विदाई के समय हवेली के प्रति हित की कामना करती है कि यहाँ जिस नगर में मेरे पिता की हवेली है, वहाँ दूध–घी की नदियाँ बहे, वहाँ अन्न, धन और पानी की कभी कमी ना आए और इन पर गुरु का आशीष बना रहे। इसका विशिष्ट निहितार्थ है। बंजारों का मूल स्थान राजस्थान है, जो रेगिस्तानी इलाका है, जहाँ पानी की कमी होती है। रेगिस्तान में बदरी का घिर आना और पानी का गिरना अहोभाग्य है। दुल्हन की आकांक्षा है कि उसके पिता की नगरी में कभी पानी की कमी न हो।

बंजारा समुदाय के संस्कार गीतों में ढावला विशेष उल्लेखनीय है। इसे विदाई के अवसर पर लड़की खास तरह से गाती है। अधिकांश लोकगीत सामूहिक रूप से गाये जाते हैं। ढावला ही ऐसा लोकगीत है, जिसे लड़की अकेली गाती है। टांडे की दक्ष, बड़ी–बूढ़ी औरत, नायकणी, कारभारणी या ढाई साणी लड़की को ढावला सिखाती हैं। वेतडू (वर), लेरिया (लाड़े का मसखरा मित्र) के साथ दुल्हन के घर जाता है। इन्हीं दिनों शुभ–घड़ी देख कर लड़की को ढावला सिखाया जाता है। प्रौढ़ महिलाएं भांग या घोटा के अवसर तक लड़की से बार–बार ढावला गवाती हैं। लड़की को दिन में कई बार आंसू बहाते हुए ऊंचे स्वर में ढावला गाना पड़ता है। जब वह अच्छी तरह गाने लगती है तो उसे एकांत में छोड़ दिया जाता है। संभावित वियोग का जब–जब ध्यान आता है, लड़की ढावला गा गा कर धरती–आसमान एक कर देती है। ढावले में लड़की अपने आंतरिक भावों को प्रकट करती है। मुख्य रूप से इसके तीन भाग होते हैं। प्रथम भाग में दुःख की अभिव्यक्ति होती है। द्वितीय भाग में पिता के घर को समृद्ध बनाये रखने के लिए लड़की भगवान से प्रार्थना करती है। इस अंश को हवेली कहते हैं। ढावले के तीसरे अंश में लड़की प्रतिज्ञा करती है कि मुझे ससुराल में कितना भी कष्ट मिले मैं अपने माता–पिता तक शिकायत नहीं आने दूंगी। इस भाग को मळ कहते हैं। उदाहरण के लिए तीनों अंश प्रस्तुत हैं। पहला भाग–दुःख की अभिव्यक्ति, ये या कूण पाळो कूण (सोपो) कूण भोग सक राज हीय्या आ आ ... ये याड़ी पाळी। बाप पोसो, सासू भोग सक राज हीय्या आ आ ... (अरे मुझे किसने पाला, किसने मेरा पालन किया, अब मुझे किसे सौंपा जा रहा है। कौन मुझ से सुख भोग रहा है? हाय!) (अरे मां ने पाला है, पिता ने पोषण किया है और सुख का भोग करने जा रही है सास, हाय!)

दूसरा अंश हवेली है–

ये हीय्या आ आ...।
तोम आचो च खादी, आचोच पीदी
ये म्हारे नायक बापू री हवेली
वड़ला सूं वदेश, घुलरा सूं फेलेस
लिंबड़ा सूं लहेरेस हरियाली सूं हरी रेस म्हारे
नायक बापू री नगरी!
तू घुटेज चाली ये म्हारे नायक नसाबी बापू री नगरी
आचोच खायेस, आचोच पीयेश
हरी–भरी रेयेस ये म्हारे बापू री नगरी हवेली
ये हीय्या–आ आ ...

तात्पर्य है कि ओ मेरे प्रिय टांडे, मैंने तुम में निवास करते समय अच्छा खाया, अच्छा पिया। ओ मेरे बाप दादा के टांडे, तुम वट वृक्ष की तरह फलो, गूलर के पेड़ की तरह फैलो, नीम की तरह लहराते रहो, हरियाली की तरह हरे–भरे बने रहो। मैं प्रार्थना करती हूं कि तुम्हारे यहां सब को अच्छा भोजन और पीने को अच्छा पानी मिले। तुम समृद्धशाली बनो, ओ मेरे पितामह टांडे!

इसके बाद मळ नामक अंतिम अंश प्रारंभ होता है। इसमें लड़की अपने टांडे के लोगों के सामने प्रतिज्ञा करती है–

रांगो जू नव नवियूं रूपो जू तप जू तप्पियूं
सुंइ रे नाळे मायिन निकळीयूं
तो भी तमन ओळभो कोनी आये दूं
म्हारा नायक बापू हीय्या–आ आ ...

ढावले की प्रत्येक पंक्ति के अंत में लड़की ठंडी सांस छोड़ कर दुःखपूर्वक कहती है हीय्या–आ.. कुछ स्थलों पर आहिया भी सुनाई देता है। इस ध्वनि को ठणको कहते हैं। स्वर ठणके पर जैसे ही पहुंचता है, सुननेवाला अनुभव करता है, कष्ट के कारण लड़की का हृदय फट गया है।

महिलाएं किसी संबंधी की मृत्यु पर भी शोक प्रकट करने के लिए ढावला गाती हैं। इस अवसर पर गाये जानेवाला ढावला दाढ़, दाढ़ द, या मुंडो–मांड कहाता है। इस ढावले में हवेली और मळ नहीं होता, केवल शोक प्रकट करने के लिए पहले अंश के साथ यह ढावला समाप्त हो जाता है।

मनुष्य जीवन के अंतिम पड़ाव मृत्यु के अवसर पर भी बंजारा समुदाय में लोकगीत उपलब्ध हैं। यह लोकगीत शोक गीत है, किंतु इनमें एक जो उल्लेखनीय है वह यह कि टांडा के नायक अंतिम संबोधन, वह कहता है –

सामळो भाईयो
गोरमाटी मा एत कावत छ
जिवतेन बाटी
मूयेन माटी
इ जग रूढी छ करन म
रोवामत सासो करोमत
करन केरोचू भाइयों।।

टांडा नायक सभी को संबोधित कर कहता है कि हम सब जानते हैं कि बंजारों में एक कहावत है कि जीवित को बाटी (रोटी), मृतक को मिट्टी। यह तो संसार का दस्तुर ही है, इसलिए रोना नहीं है। अंतिम संस्कार में वर्तमान में दाह संस्कार किया जाने लगा है। पहले जंगल या रास्ते में जहाँ कहीं मृत्यु होती थी, वहीं उसे दफना दिया जाता था, तीन दिन सूतक के बाद तीसरे में शुद्धि की जाती। समीप में जो भी नदी – नाले हो, उसे गंगा मानकर अस्थि विसर्जन किया जाता है। आर्थिक स्थिति के अनुसार तेरहवीं की जाती है। मृत आत्मा को देवी देवता में लेने के लिए दीवाली या होली के पहले धौड़ोधान की रोटी करते हैं। परिवार में किसी मांगलिक कार्य होने के पूर्व यह प्रक्रिया होना जरूरी है। पूर्वजों को मीठी लापसी, घी–गुड़ की धूप दी जाती है। कंडे के अंगार में धोप (धूप) दी जाती है, पानी दिया जाता है।

स्पष्ट है कि बंजारा समुदाय की जीवन शैली, संस्कृति और परंपराओं में संस्कारों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। परिवार और समाज की धारणाओं, मूल्य और मान्यताओं को सुरक्षित और जीवंत रखते हुए बंजारा जन सदियों से पीढ़ी दर पीढ़ी संस्कारों को हस्तांतरित करते आ रहे हैं। तमाम प्रकार की प्रेरणाओं और नियमन को इनके माध्यम से हकीकत में बदला जाता है। बंजारा समुदाय के संस्कारों से जुड़ी विधियों, लोक गीत और सांस्कृतिक उपादानों के अध्ययन से सिद्ध होता है कि वे मानवीय सम्बन्धों, मूल्यों और संवेदनाओं के साथ परंपरागत ज्ञान के अक्षय स्रोत हैं। इनका जितना मंथन किया जाए, अमूल्य भाव राशि और ज्ञाननिधि प्राप्त होती हैं।

–आचार्य एवम् विभागाध्यक्ष
विक्रम विश्वविद्यालय
उज्जैन (म.प्र.) –456010

संदर्भः

1. चौमासा, वर्ष 36, विशेषांक 114, नवंबर 2020 – फरवरी 2021 में प्रकाशित प्रो. शैलेंद्र कुमार शर्मा का आलेख मध्यप्रदेश की प्रमुख विमुक्त जातियाँ : संस्कृति और परंपराएँ।
2. चौमासा, वर्ष 37, विशेषांक 117, नवंबर 2021 – फरवरी 2022 में प्रकाशित प्रो. शैलेंद्र कुमार शर्मा का आलेख बंजारा : वाचिक परंपराएँ।
3. डॉ श्रीराम शर्मा, बनजारा लोक साहित्य, शर्मा फैमिली चैरिटेबल ट्रस्ट, हैदराबाद, द्वितीय संस्करण, 2017
4. डॉ. गुलाब राठौड़, बंजारा लोकगीत, लेखनी प्रकाशन, नई दिल्ली
5. डॉ हरिसिंह गौड़, ग्राम कंवला, तहसील भानपुरा, जिला मंदसौर से साक्षात्कार।
6. B- Naik, (2002) Banjara Lambanis% TheirArt and Literature, /Abhinav Publications, ISBN 978-8170173649

ISSN No. : 0970-9398

पर्यटन उद्योग में एक नया संयोजन: भू-पर्यटन

– डॉ. बासव नन्दन महन्त

हम सभी जानते हैं कि हिमालय पर्वत श्रृंखला का निर्माण भारतीय प्लेट के यूरेशियन प्लेट से टकराने से हुआ है। दूसरी ओर, अपने अधिक द्रव्यमान के कारण, भारतीय प्लेट बर्मी प्लेट के नीचे दक्षिण–पूर्व की ओर बढ़ रही है। हालाँकि, हर कोई नहीं जानता होगा कि नीचे जा रही भारतीय प्लेट और बर्मी प्लेट के बीच भू–रासायनिक प्रतिक्रिया ने "ओफियोलाइट" नामक एक नई चट्टान परत का निर्माण किया है और इस बहुत धीमी टक्कर के परिणामस्वरूप भारतीय प्लेट से संबंधित वह विशेष चट्टान फिर से इंडो–बर्मा सीमा क्षेत्र की ओर आ गई है। ये ओफियोलाइट दुर्लभ और अनोखे हैं, जो दो भूवैज्ञानिक प्लेटों के टकराने से बने हैं। इस जानकारी जानने के बाद, क्या आप इसे अपने हाथों से छूना पसंद नहीं करेंगे? खैर, भले ही यह जानने के बाद भी आप उस चट्टान को देखने जाने के बारे में नहीं सोचते हैं, लेकिन अगर मैं आपसे कहूँ कि प्रसिद्ध चिरोई लिली फूल केवल इन ओफियोलाइट चट्टानों पर ही खिलते हैं, तो क्या आप उसी स्थान पर जाने में दिलचस्पी नहीं लेंगे।

दुनिया भर में कई शानदार चट्टानें, जीवाश्म, भू–आकृतियाँ, संरचनाएँ आदि बिखरी हुई हैं। भू–पर्यटन या जियो–टूरिज़्म, पर्यटन का एक नया रूप है जो इन आकर्षक और अद्वितीय भूवैज्ञानिक संसाधनों पर केंद्रित है और दुनिया में धीरे–धीरे उभर रहा है। यह एक नवोदित उद्योग है क्योंकि, केवल 1995 में, थॉमस अल्फ्रेड होज़ ने लंदन में एक कार्यशाला में पहली बार भू–पर्यटन शब्द का उपयोग किया था। भू–पर्यटन में किसी स्थान या वस्तु का वैज्ञानिक संरक्षण शामिल है जो किसी विशेष भूवैज्ञानिक घटना या पृथ्वी के क्रम–विकास–संबंधी इतिहास के हस्ताक्षर के साथ–साथ स्थानीय समुदाय के सहयोग से उस स्थान के सतत विकास के प्रयासों को दर्शाता है। इको–पर्यटन को भू–पर्यटन समृद्ध करता है और पर्यटक को मिलने वाले आनंद या ज्ञान में एक और आयाम जोड़ता है।

मैं नागालैंड–मणिपुर के ओफियोलाइट में वापस जाना चाहता हूं। यद्यपि यह विशेष चट्टान भूविज्ञान के एक छात्र के लिए बहुत महत्वपूर्ण है, तथापि, जिस व्यक्ति के पास वह ओफियोलाइट से बना पहाड़ का स्वामित्व है, उसके लिए यह सिर्फ एक मजबूत 'अच्छी' चट्टान है जिसे स्टोन क्रशर में डाला जा सकता है। मालिक, जो आम लोगों में से एक है, ने कभी भी इस विशेष पत्थर के वैज्ञानिक मूल्य का अध्ययन या संरक्षण करने की आवश्यकता महसूस नहीं की। उसके लिए चट्टान तोड़ने से होने वाली तत्काल आय मायने रखती है। इसी तरह, योजनाबद्ध खनन या बुनियादी ढांचे के विकास के नाम पर, दुर्लभ जीवाश्मों से युक्त कुछ चट्टानी परतें नष्ट हो गईं और दुनिया के विभिन्न हिस्सों में कई भूवैज्ञानिक अनुसंधान संसाधन हमेशा के लिए खो गए। कम से कमः दुनिया के इस जीवनकाल में, इन संसाधनों को फिर से बनाना असंभव है, जो अरबों वर्षों के समय के साक्षी हैं और पृथ्वी के अतीत और भविष्य के अध्ययन के लिए आवश्यक हैं। हमें पहाड़ों में भी खनिज, विकास या सुगम संचार के लिए चौड़ी सड़कें चाहिए, लेकिन क्या हम इस बीच थोड़ा सा क्षेत्र नहीं बचा सकते? जब तक जनता को इसका महत्व समझ आएगा तब तक कहानी डोडो पक्षी जैसी हो जाएगी।

हालाँकि, भू–पर्यटन, ओफियोलाइट पर्वत के मालिक के साथ–साथ दस अन्य लोगों के लिए एक स्थायी आय प्रदान कर सकता है। इसका एक सफल उदाहरण गुजरात का रायोली डायनासोर पार्क है। यह पार्क क्रेटेशियस काल (66 मिलियन वर्ष पूर्व) के विशाल डायनासोरों की हड्डियों और अंडे के जीवाश्मों को प्राकृतिक रूप से संरक्षित करके बनाया गया है। पर्यटक डायनासोर के आदमकद मॉडल से लेकर वृत्तचित्र, कार्टून और संरक्षित मूल्यवान जीवाश्म तक सब कुछ देख और छू सकते हैं। यह पार्क खासकर बच्चों के बीच बहुत लोकप्रिय है। भोजन और कैम्पिंग शिविर भी इस पार्क में उपलब्ध

हैं। पार्क ने स्थानीय क्षेत्र के सामाजिक–आर्थिक विकास में योगदान दिया है और दुर्लभ डायनासोर जीवाश्मों को भी संरक्षित किया है। पूर्वोत्तर भारत का मेघालय में भी इसी तरह के जीवाश्म पाए गए हैं लेकिन यहां अब तक कोई डायनासोर–केंद्रित पर्यटन विकसित नहीं हुआ है।

भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण (जीएसआई) ने भारत में भूविज्ञान के अध्ययन के लिए अत्यंत महत्व के 32 स्थानों को राष्ट्रीय भूवैज्ञानिक स्मारक घोषित किया है। इन स्मारकों में महाराष्ट्र में लोनार झील, कर्नाटक में पिलोबेसाल्ट, तमिलनाडु में विशाल पेट्रीफाइड पेड़, नागालैंड में ओफियोलाइट और आंध्र प्रदेश में प्राकृतिक पुल शामिल हैं।

यूनेस्को ने संरक्षण और सतत विकास के उद्देश्य से दुनिया भर के विभिन्न देशों में जियोपार्क (177) और जियोसाइट (100) भी नामित किए हैं। चेरापूंजी का मामलू गुफा, मेघालय काल (Meghalayan age) (जिसमें हम वर्तमान में रह रहे हैं), के भूवैज्ञानिक मार्कर (जीएसएसपी: ग्लोबल बाउंड्री स्ट्रैटोटाइप सेक्शन और प्वाइंट) के रूप में इन 100 जियोसाइट में से एक है। हालाँकि, अब तक भारत में यूनेस्को द्वारा मान्यता प्राप्त कोई जियोपार्क नहीं है। विस्तृत जानकारी के लिए इच्छुक पाठक www.unesco.org/en/iggp/geoparks पर जा सकते हैं।

हालाँकि, यूनेस्को जियोपार्क या राष्ट्रीय भूवैज्ञानिक स्मारक के रूप में मान्यता प्राप्त नहीं होने के बावजूद, भूवैज्ञानिक रूप से महत्वपूर्ण कुछ स्थानों में जियोट्रेल्स नामक एक नए प्रकार की ट्रैकिंग के प्रति रुचि बढ़ रही है। हालाँकि यह भारत में अपनी प्रारंभिक अवस्था में है (उदाहरण के लिए, हैदराबाद में रॉक टूर), जियोट्रेल ने विदेशों में भारी लोकप्रियता हासिल की है। उदाहरणों में दक्षिण अफ्रीका में बार्बरटन, ऑस्ट्रेलिया में डिग द ट्रॉपिक्स और इटली में डोलोमाइट जियोट्रेल शामिल हैं। जियोट्रेल्स के माध्यम से, पर्यटक अवकाश गतिविधियों का आनंद लेने के साथ–साथ विशेष चट्टानों, संरचनाओं या जीवाश्मों की विशेषताओं का अनुभव कर सकते हैं जिन्हें अन्यथा अनावश्यक माना जाता है। यह भविष्य की पीढ़ियों के लिए कम से कम कुछ भूवैज्ञानिक संसाधनों को संरक्षित करने की जिम्मेदारी भी पूरा करता है।

राष्ट्रीय स्मारकों के साथ, जीएसआई ने देश में कुल 75 स्थानों को भू–पर्यटन स्थलों के रूप में मान्यता दी है। असम का माजुली नदी द्वीप, अंडमान के मिट्टी के ज्वालामुखी, विशाखापत्तनम में एर्रा मैटी डिब्बालु, मणिपुर में लोगतक झील, मेघालय में थेरियाघाट का क्रेटेशियस–तृतीयक सीमा (यहाँ पृथ्वी के साथ उल्कापिंड की टक्कर से उत्पन्नइरिडियम अवशेष हैं जो डायनासोर के विलुप्त होने के कारण के रूप में पहचाने गए हैं), त्रिपुरा में उनाकोटी, अरुणाचल प्रदेश के सेला दर्रा, बिहार की बराबर गुफाएँ, राजस्थान का अकाल फॉसिल वुड पार्क, मिजोरम का कोलोडाइन किला (नदी की धाराओं द्वारा निर्मित एक सुंदर प्राकृतिक मूर्तिकला), पदर, कश्मीर की नीलम खदानें, केरल का वर्कला क्लिफ इत्यादि इस सूची में शामिल है (https://bhukosh.gsi.gov.in/Geotourism)। ये सभी स्थान आम जनता और पर्यटकों के लिए महत्वपूर्ण भूवैज्ञानिक जानकारी दर्शाते हैं। उदाहरणार्थ, माजुली नदी द्वीप को सांस्कृतिक विशेषताओं, नदी मार्ग की अस्थिरता या उसके कारणों, विभिन्न नदी स्थलाकृति आदि पर शोध के लिए एक उत्कृष्ट स्थान के रूप में मान्यता प्राप्त है। हालाँकि, माजुली भी भविष्य में जियोपार्क के रूप में सूचीबद्ध होने के योग्य है। इनमें से कुछ पहले से ही पर्यटन स्थल हैं, लेकिन जगह के आकर्षण में एक और आयाम जोड़ने के लिए भूवैज्ञानिक जानकारी को शामिल करने की आवश्यकता है।

यदि कोई गाइड शाम को माजुली के सत्र की यात्रा के दौरान पर्यटकों को ब्रह्मपुत्र के प्रवाह में बदलाव और उसके परिणामस्वरूप नदी द्वीप के जन्म की कहानी एनीमेशन के साथ खूबसूरती से बताता है, तो सोचिए कि क्या पर्यटकों की जिज्ञासा नहीं बढ़ेगी? इसके अलावा, अगर आपकी सिक्किम यात्रा के दौरान स्मृति चिन्ह के रूप में एक बक्से में लगभग 1.5 अरब वर्ष पुरानी चट्टान का एक सुंदर कटा हुआ टुकड़ा आपको दिया जाए तो क्या आप खुश नहीं होंगे?

मुझे उम्मीद है कि वह समय जल्द आएगा।

–निदेशक
भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण,
शिलांग–6
मेघालय

ISSN No. : 0970-9398

हिंदी की प्रमुख वेब पत्रिका 'हिंदी समय' का विश्लेषणात्मक अध्ययन

–डॉ. शैलेश शुक्ला

1. सार

डिजिटल युग में हिंदी साहित्य और संस्कृति के प्रसार और संरक्षण में 'हिंदी समय' वेबपत्रिका (https://hindisamay.com/) का अप्रतिम योगदान है। यह वेबसाइट अपने में हिंदी भाषा और साहित्य के विविध आयामों को समेटे हुए है, जिसमें कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, आलोचना, समीक्षा, और साक्षात्कार जैसी विविध विधाओं की समृद्ध सामग्री शामिल है। इसकी भाषाई विशेषताएं, जैसे कि व्याकरणिक संरचना, शब्द संग्रह, भाषाई शैली, और विशिष्ट शब्दावली और मुहावरे, इसे न केवल एक अनमोल संसाधन बनाती हैं बल्कि हिंदी भाषा और साहित्य के प्रेमियों के लिए एक अद्वितीय मंच भी प्रदान करती हैं।

वेबसाइट की लोकप्रियता और उपयोगिता इसकी गुणवत्ता, विविधता और भाषाई एवं शैलीगत विशेषताओं में निहित है, जो पाठकों को एक गहन और समृद्ध साहित्यिक अनुभव प्रदान करती है। 'हिंदी समय' के माध्यम से हिंदी साहित्य और संस्कृति के विविध पहलुओं को व्यापक रूप से प्रस्तुत करने का प्रयास, डिजिटल माध्यम के उपयोग के महत्व को रेखांकित करता है। इसकी उपलब्ध सामग्री हिंदी भाषा और साहित्य के प्रति आम जन की रुचि और ज्ञान को बढ़ाने में सहायक है, साथ ही यह नए लेखकों और कवियों के लिए अपनी रचनाओं को प्रकाशित करने का एक मंच भी प्रदान करता है।

इस विश्लेषणात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि 'हिंदी समय' ने हिंदी साहित्य और संस्कृति के प्रसार और संरक्षण में अपनी एक अद्वितीय पहचान स्थापित की है। यह वेबसाइट हिंदी साहित्य के प्रेमियों के लिए न केवल ज्ञान और मनोरंजन का स्रोत है, बल्कि यह हिंदी भाषा के प्रति आदर और सम्मान को भी बढ़ावा देती है। 'हिंदी समय' की सफलता इस बात का प्रमाण है कि डिजिटल माध्यम हिंदी साहित्य और संस्कृति के प्रसार में क्रांतिकारी भूमिका निभा सकता है और इसे विश्व स्तर पर पहुँचाने में सहायक हो सकता है। इस प्रकार, 'हिंदी समय' डिजिटल युग में हिंदी साहित्य और संस्कृति के विकास और संरक्षण के लिए एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर साबित होता है।

2. बीज शब्द (Key Words)

हिंदी समय, डिजिटल साहित्य, भाषाई विशेषताएं, साहित्यिक विविधता, शैलीगत विश्लेषण, संस्कृति संरक्षण, पाठक प्रभाव, वेबपत्रिका।

3. शोध के उद्देश्य

इस शोध का प्रमुख उद्देश्य 'हिंदी समय' वेबपत्रिका के माध्यम से डिजिटल युग में हिंदी साहित्य और संस्कृति के प्रसार और संरक्षण में इसके योगदान का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना है। यह शोध विशेष रूप से 'हिंदी समय' की सामग्री, भाषाई विशेषताएं, और इसके पाठकों पर प्रभाव का विस्तृत विश्लेषण करने का लक्ष्य रखता है। इसके अलावा, यह शोध हिंदी साहित्य और संस्कृति के विकास और प्रसार में डिजिटल माध्यमों की भूमिका को समझने का प्रयास करता है।

विशेष रूप से, इस शोध के उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

'हिंदी समय' की सामग्री का विश्लेषण: इसमें विभिन्न विधाओं जैसे कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, आलोचना, समीक्षा और साक्षात्कार की सामग्री का विश्लेषण शामिल है।

भाषाई विशेषताओं की पहचान: वेबपत्रिका की भाषाई शैली, व्याकरणिक संरचना, शब्द संग्रह और विशिष्ट शब्दावली और मुहावरे का विश्लेषण।

पाठकों पर प्रभाव का अध्ययन: 'हिंदी समय' के माध्यम से हिंदी साहित्य और संस्कृति के प्रति पाठकों की जागरूकता, रुचि और ज्ञान में वृद्धि का अध्ययन।

डिजिटल माध्यमों की भूमिका का मूल्यांकन: डिजिटल युग में हिंदी साहित्य और संस्कृति के प्रसार और संरक्षण में 'हिंदी समय' जैसी वेबपत्रिकाओं की भूमिका की गहराई से समीक्षा।

यह शोध न केवल 'हिंदी समय' की सामग्री और इसके प्रभाव को समझने का प्रयास करेगा, बल्कि यह भी विश्लेषण करेगा कि कैसे डिजिटल माध्यम हिंदी साहित्य और संस्कृति को एक व्यापक पाठक वर्ग तक पहुंचाने में सहायक है। इसके अलावा, यह अध्ययन डिजिटल माध्यमों के माध्यम से हिंदी साहित्य और संस्कृति के प्रसार की संभावनाओं और चुनौतियों का भी अध्ययन करेगा। इस शोध का उद्देश्य डिजिटल युग में हिंदी साहित्य और संस्कृति के संरक्षण और प्रसार में 'हिंदी समय' की भूमिका को स्पष्ट करना है ताकि इस क्षेत्र में भविष्य की दिशाओं को निर्धारित किया जा सके।

4. प्रस्तावना

डिजिटल युग में, जहां जानकारी का प्रवाह अबाधित और विशाल है, वेबसाइटें हमारे ज्ञान और संस्कृति के प्रसार के प्रमुख माध्यम बन गई हैं। हिंदी समय (https://hindisamay.com/) वेबसाइट हिंदी भाषा और साहित्य की ऐसी ही एक डिजिटल कृति है, जो अपने अमूल्य संग्रह के माध्यम से हिंदी साहित्य के विविध आयामों को प्रस्तुत करती है। यह वेबसाइट न केवल हिंदी भाषा के प्रेमियों के लिए एक संसाधन केंद्र का कार्य करती है, बल्कि यह वैश्विक स्तर पर हिंदी भाषी समुदाय के बीच ज्ञान और संस्कृति के आदान–प्रदान को भी सुगम बनाती है।

'हिंदी समय' वेबसाइट का विस्तृत विश्लेषण न केवल इसकी भाषाई विशेषताओं को उजागर करने का एक प्रयास है, बल्कि यह हिंदी साहित्य और भाषा के प्रति हमारी समझ को भी गहरा करता है। इस अध्ययन के माध्यम से, हम 'हिंदी समय' वेबसाइट की व्याकरणिक संरचना, शब्द संग्रह, भाषाई शैली और विशिष्ट शब्दावली और मुहावरों का विश्लेषण करेंगे। इसके अतिरिक्त, वेबसाइट की सामग्री के साहित्यिक और सांस्कृतिक महत्व को समझने के लिए एक गहन अध्ययन किया जाएगा, जिससे हमें हिंदी भाषा के समृद्ध विरासत और इसके समाज पर प्रभाव की गहराई से समझ मिलेगी।

इस विश्लेषण का एक महत्वपूर्ण पहलू यह भी होगा कि हम 'हिंदी समय' वेबसाइट के पाठकों पर इसके प्रभाव की जांच करेंगे। हम यह समझने का प्रयास करेंगे कि कैसे इस वेबसाइट ने हिंदी भाषा और साहित्य के प्रति रुचि और ज्ञान को विकसित किया है, और कैसे इसने साहित्यिक और सांस्कृतिक समझ को व्यापक बनाया है।

अंततः, इस विश्लेषण के माध्यम से, हम 'हिंदी समय' वेबसाइट की भाषाई और साहित्यिक विशेषताओं के माध्यम से हिंदी भाषा और साहित्य के विकास, प्रसार और उसके समाज पर प्रभाव की गहराई को समझने की आशा करते हैं। हमारा लक्ष्य है कि इस अध्ययन से प्राप्त ज्ञान हिंदी भाषा और साहित्य के प्रति जागरूकता और उत्साह को बढ़ावा देगा और इसे आधुनिक और डिजिटल युग में और अधिक प्रासंगिक बनाएगा। इस प्रक्रिया में, हम भविष्य में 'हिंदी समय' वेबसाइट और इसी तरह के अन्य डिजिटल मंचों के लिए संभावनाओं और सुझावों की खोज करेंगे, ताकि वे हिंदी भाषा और साहित्य के प्रसार और संरक्षण में अपना योगदान और अधिक प्रभावी ढंग से निभा सकें।

5. 'हिंदी समय' का परिचय

हिंदी समय (https://hindisamay.com/) एक विशिष्ट डिजिटल मंच है जो हिंदी भाषा और साहित्य को समर्पित है, जिसका उद्देश्य हिंदी साहित्यिक कृतियों, लेखकों और चिंतकों के काम को एक व्यापक मंच पर सम्मानित करना और प्रचारित करना है। महाराष्ट्र के वर्धा स्थित महात्मा गाँधी अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालय द्वारा इसकी स्थापना इस विचार के साथ की गई थी कि हिंदी साहित्य की अमूल्य धरोहर को डिजिटल युग में नई पीढ़ी तक पहुँचाया जा सके, साथ ही विश्व भर में हिंदी भाषी और हिंदी भाषा में रुचि रखने वाले लोगों के बीच एक सेतु का काम किया जा सके।

वेबसाइट की स्थापना का मुख्य उद्देश्य हिंदी साहित्य और संस्कृति के विविध पहलुओं को एक संगठित और सुलभ रूप में प्रस्तुत करना है। इसमें कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, आलोचना, समीक्षा, और साक्षात्कार जैसी विविध विधाओं को शामिल किया गया है। 'हिंदी समय' इस बात का प्रयास करता है कि हिंदी साहित्य के शास्त्रीय और आधुनिक दोनों ही रूपों को बराबर का महत्व देते हुए उन्हें प्रचारित और संरक्षित किया जा सके।

वेबसाइट की पहुँच और लोकप्रियता की बात करें तो, 'हिंदी समय' ने बहुत कम समय में विश्वव्यापी पाठकों के बीच एक विशेष स्थान बना लिया है। इसकी पहुँच न केवल भारत में है बल्कि विदेशों में भी हिंदी भाषा और साहित्य में रुचि रखने वाले पाठकों तक है।

वेबसाइट अपनी सामग्री को निरंतर अपडेट करते हुए और नए लेखकों को मंच प्रदान करते हुए हिंदी साहित्य की विविधता और समृद्धि को दर्शाने में सफल रही है।

'हिंदी समय' की लोकप्रियता में इसकी उपयोगकर्ता– मित्रता, खोज की सुविधा और सामग्री की गुणवत्ता मुख्य कारण हैं। वेबसाइट ने हिंदी साहित्य के प्रति जिज्ञासा और रुचि रखने वाले नए पाठकों को आकर्षित करने के लिए विशेष प्रयास किए हैं, जिससे इसकी पहुँच और भी व्यापक हुई है। इसके अलावा, 'हिंदी समय' सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स पर भी सक्रिय है, जिससे इसे युवा पीढ़ी के बीच लोकप्रियता मिली है।

संक्षेप में, 'हिंदी समय' ने हिंदी साहित्य और संस्कृति के प्रचार और संरक्षण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसके द्वारा प्रदान की गई सामग्री और सेवाएँ हिंदी साहित्य के प्रेमियों के लिए अमूल्य संसाधन साबित हुई हैं। 'हिंदी समय' का उद्देश्य और मिशन हिंदी भाषा और साहित्य को विश्व स्तर पर पहुँचाने में सफल रहा है और इसने हिंदी साहित्य के लिए एक नई दिशा और ऊँचाई प्रदान की है।

6. 'हिंदी समय' की सामग्री और श्रेणियाँ

'हिंदी समय' वेबसाइट हिंदी साहित्य और संस्कृति का एक प्रमुख डिजिटल मंच है, जो विविध साहित्यिक शैलियों और विधाओं को समेटे हुए है। यह वेबसाइट हिंदी साहित्य के अनुरागियों को एक ऐसा प्लेटफॉर्म प्रदान करती है, जहाँ वे विभिन्न प्रकार की साहित्यिक कृतियाँ, आलोचना और समीक्षाएँ, साक्षात्कार और विशेष आयोजनों के माध्यम से हिंदी साहित्य के विविध पहलुओं से परिचित हो सकते हैं।

साहित्यिक कृतियाँः कहानियाँ, कविताएँ, नाटक, उपन्यास : 'हिंदी समय' वेबसाइट पर साहित्यिक कृतियों का एक विशाल संग्रह है, जिसमें कहानियाँ, कविताएँ, नाटक और उपन्यास शामिल हैं। ये कृतियाँ हिंदी साहित्य के विविध युगों और शैलियों को दर्शाती हैं, जिसमें पारंपरिक और आधुनिक दोनों प्रकार की रचनाएँ शामिल हैं। कहानियाँ और उपन्यास वर्ग में प्रेमचंद, शरद जोशी और अमृता प्रीतम जैसे साहित्यकारों की कृतियों के साथ–साथ नए लेखकों की रचनाएँ भी शामिल हैं। कविता सेक्शन में हरिवंश राय बच्चन, महादेवी वर्मा और दुष्यंत कुमार जैसे कवियों की अमर कविताओं सहित नए कवियों की भी कविताएँ समाहित की गई हैं। नाटक अनुभाग में भारतेंदु हरिश्चंद्र और मोहन राकेश के नाटकों के साथ–साथ समकालीन नाटककारों के काम भी प्रस्तुत किए गए हैं।

आलोचना और समीक्षाएँः पुस्तक समीक्षा, आलोचनात्मक लेख : आलोचना और समीक्षा अनुभाग 'हिंदी समय' का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, जहाँ पुस्तक समीक्षा और आलोचनात्मक लेख प्रकाशित किए जाते हैं। इस सेक्शन में विभिन्न साहित्यिक कृतियों, उनके थीम्स, शैलियों, और लेखन शैली की गहराई से समीक्षा की जाती है। ये समीक्षाएँ और आलोचनाएँ पाठकों को कृतियों की बेहतर समझ प्रदान करती हैं और साथ ही साथ लेखकों के विचारों और प्रेरणाओं को भी उजागर करती हैं।

साक्षात्कारः साहित्यकारों, कवियों और आलोचकों के साथ बातचीतः 'हिंदी समय' पर प्रकाशित साक्षात्कार साहित्यिक जगत की विभूतियों के साथ गहन बातचीत को दर्शाते हैं। ये साक्षात्कार पाठकों को लेखकों, कवियों और आलोचकों के विचारों, उनके लेखन की प्रेरणाओं और उनके साहित्यिक यात्रा की गहराई में ले जाते हैं। इन बातचीतों के माध्यम से, पाठक साहित्यिक व्यक्तित्वों के व्यक्तिगत और पेशेवर जीवन के विभिन्न पहलुओं से परिचित होते हैं।

विशेष आयोजनः काव्य गोष्ठी, साहित्यिक संगोष्ठी, वेबिनारः विशेष आयोजन अनुभाग 'हिंदी समय' की एक और विशेषता है, जिसमें काव्य गोष्ठी, साहित्यिक संगोष्ठी और वेबिनार जैसे कार्यक्रमों की जानकारी और सामग्री शामिल होती है। ये आयोजन हिंदी साहित्य के प्रेमियों को एक मंच पर लाते हैं, जहाँ वे साहित्यिक विचारों और चर्चाओं में भाग ले सकते हैं। इन विशेष आयोजनों के माध्यम से, 'हिंदी समय' साहित्यिक समुदाय के बीच संवाद और सहयोग को बढ़ावा देता है, साथ ही साहित्यिक ज्ञान और शिक्षा के प्रसार में योगदान देता है।

'हिंदी समय' अपनी विविधतापूर्ण सामग्री और श्रेणियों के माध्यम से हिंदी साहित्य के विकास और प्रचार में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। यह वेबसाइट हिंदी साहित्य के प्रेमियों के लिए एक अनमोल संसाधन है, जो साहित्यिक ज्ञान और संस्कृति के प्रसार के लिए समर्पित है।

7. 'हिंदी समय' वेबसाइट का भाषाई विश्लेषण

वेबसाइट की भाषाई विशेषताएँ उपयोगकर्ता के संवाद को सुगम बनाती हैं। इसमें स्पष्ट, साफ़ और सरल भाषा का प्रयोग होता है ताकि उपयोगकर्ता आसानी से समझ सकें। सही व्याकरण और वाक्य संरचना भी महत्वपूर्ण होती हैं। साथ ही, विभिन्न भाषाओं का अनुवाद उपलब्ध होना भी उपयोगकर्ताओं की सुविधा को बढ़ाता है। वेबसाइट की भाषा उपयोगकर्ता को उनकी भाषा में सम्मान और संबोधित करने का एहसास दिलाती है, जिससे उन्हें वेबसाइट का उपयोग करने में आसानी होती है।

'हिंदी समय' की व्याकरणिक संरचना और शब्द संग्रहः 'हिंदी समय' वेबसाइट पर प्रस्तुत सामग्री में व्याकरणिक संरचना का महत्वपूर्ण योगदान है, जो इसकी भाषाई शुद्धता और स्पष्टता को उजागर करता है। हिंदी व्याकरण की बुनियादी संरचना, जैसे कि क्रिया, संज्ञा, विशेषण और अव्यय का सही उपयोग, सामग्री को पठनीय और समझने में आसान बनाता है। व्याकरणिक संरचना के साथ–साथ, शब्द संग्रह की विविधता और समृद्धि भी हिंदी समय की एक विशेषता है। यहाँ प्रयुक्त शब्दावली न केवल साहित्यिक और शास्त्रीय हिंदी तक सीमित है, बल्कि आम बोलचाल की हिंदी और तत्सम–तद्भव शब्दों का भी समावेश है, जो इसे एक व्यापक पाठक वर्ग के लिए अपील करती है।

'हिंदी समय' की भाषाई शैली और टोनः हिंदी समय की भाषाई शैली उसके संपादकीय मिशन और दर्शकों के साथ संवाद स्थापित करने के तरीके को प्रतिबिंबित करती है। वेबसाइट पर सामग्री का टोन आमतौर पर गंभीर और सूचनात्मक होता है, लेकिन कभी–कभी व्यंग्यात्मक या हास्यास्पद भी हो सकता है, विशेष रूप से जब समकालीन विषयों या समसामयिक घटनाओं का विश्लेषण किया जाता है। इसकी भाषाई शैली न केवल सूचना प्रदान करती है बल्कि पाठकों को शिक्षित करने और प्रेरित करने का भी काम करती है। साहित्यिक कृतियों के विश्लेषण में, भाषाई शैली अधिक विश्लेषणात्मक और आलोचनात्मक होती है, जो गहराई से समझ और साहित्यिक मूल्यांकन को दर्शाती है।

'हिंदी समय' की विशिष्ट शब्दावली और मुहावरेः हिंदी समय पर प्रस्तुत सामग्री में विशिष्ट शब्दावली और मुहावरों का उपयोग इसकी भाषाई समृद्धि को और बढ़ाता है। ये विशिष्ट शब्दावली और मुहावरे न केवल भाषा के प्रामाणिक उपयोग को दर्शाते हैं बल्कि संस्कृति, इतिहास और समाज के विभिन्न पहलुओं के प्रति गहरी समझ भी प्रदान करते हैं। इसमें साहित्यिक, शास्त्रीय और लोकप्रिय मुहावरे शामिल हैं, जो विषयवस्तु को और अधिक रंगीन और आकर्षक बनाते हैं। ये शब्दावली और मुहावरे हिंदी भाषा की विविधता और गहराई को दर्शाते हैं और पाठकों को हिंदी भाषा और साहित्य की बारीकियों से परिचित कराते हैं।

'हिंदी समय' वेबसाइट पर प्रस्तुत सामग्री की भाषाई विशेषताएं इसे हिंदी भाषा और साहित्य के प्रेमियों के लिए एक अमूल्य संसाधन बनाती हैं। व्याकरणिक संरचना, शब्द संग्रह, भाषाई शैली और विशिष्ट शब्दावली और मुहावरों का समावेश इसकी सामग्री को न केवल समृद्ध बनाता है बल्कि पाठकों को गहराई से जुड़ने और संवाद करने का अवसर भी प्रदान करता है। इसके अलावा, यह विविधता और समृद्धि हिंदी भाषा के विकास और उसके उपयोग के तरीकों को समझने में मदद करती है, जो हिंदी समय को एक विशेष और महत्वपूर्ण मंच बनाती है।

8. 'हिंदी समय'का शैलीगत विश्लेषण

साहित्यिक शैली और उसका महत्वः 'हिंदी समय' अपनी साहित्यिक शैली के माध्यम से हिंदी साहित्यिक समाज में एक विशिष्ट स्थान रखती है। इसकी साहित्यिक शैली में विविधता और गहराई दोनों हैं, जो क्लासिकल साहित्य से लेकर समकालीन विषयों तक के विविध विषयों को संबोधित करती है। साहित्यिक शैली का महत्व इस बात में है कि यह पाठकों को संवेदनशील और समृद्ध भाषाई अनुभव प्रदान करती है, जो उन्हें न केवल साहित्यिक कृतियों का आनंद उठाने में मदद करती है, बल्कि उन्हें गहन विचार और आत्म–मंथन के लिए भी प्रेरित करती है। साहित्यिक शैली का उपयोग कविता, कहानी, नाटक, आलोचना और समीक्षा जैसे विभिन्न रूपों में किया जाता है, जो साहित्य के प्रति पाठकों की समझ और सराहना को बढ़ाता है।

विविध विषयों पर केंद्रित लेखन शैलीः हिंदी समय की लेखन शैली विविध विषयों को समाहित करती है, जिसमें साहित्य, इतिहास, संस्कृति, राजनीति, समाजशास्त्र और दर्शन शामिल हैं। इस विविधता के कारण, वेबसाइट की लेखन शैली अनुकूलनीय और

लचीली होती है, जो विषय की प्रकृति और पाठकों के संबंधित ज्ञान स्तर के अनुसार ढल जाती है। उदाहरण के लिए, साहित्यिक विश्लेषण में भाषा अधिक विचारशील और आलोचनात्मक होती है, जबकि सांस्कृतिक लेखों में एक सरल और सुलभ शैली का प्रयोग होता है। विविध विषयों पर केंद्रित यह लेखन शैली पाठकों को एक व्यापक ज्ञान और समझ प्रदान करती है, जो उन्हें विभिन्न दृष्टिकोणों से सोचने के लिए प्रेरित करती है।

उपयोगकर्ता इंटरफ़ेस और नेविगेशन की भाषाई स्पष्टताः हिंदी समय का उपयोगकर्ता इंटरफ़ेस और नेविगेशन डिज़ाइन इसकी भाषाई स्पष्टता और सहजता को प्रतिबिंबित करता है। वेबसाइट के नेविगेशन मेनू और उपयोगकर्ता इंटरफ़ेस में उपयोग की गई भाषा सरल और स्पष्ट है, जो पाठकों को विभिन्न अनुभागों और सामग्री तक आसानी से पहुंचने में मदद करती है। इस भाषाई स्पष्टता का महत्व इस बात में है कि यह पाठकों को वेबसाइट के विविध अनुभागों में नेविगेट करने में सहायता करता है, जिससे उनका अनुभव अधिक सुखद और फलदायी होता है। वेबसाइट की डिज़ाइन और नेविगेशन की स्पष्टता इसके उपयोग में आसानी और पाठकों की संतुष्टि में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

'हिंदी समय' वेबसाइट की शैलीगत विशेषताएं इसे हिंदी भाषी समुदाय में एक विशिष्ट और सम्मानित स्थान प्रदान करती हैं। साहित्यिक शैली, विविध विषयों पर केंद्रित लेखन शैली और उपयोगकर्ता इंटरफ़ेस और नेविगेशन की भाषाई स्पष्टता, वेबसाइट की गुणवत्ता और पाठकों के लिए इसकी उपयोगिता को बढ़ाते हैं। ये विशेषताएं हिंदी समय को न केवल एक सूचना और शिक्षा का स्रोत बनाती हैं, बल्कि एक ऐसा मंच भी प्रदान करती हैं जहां हिंदी भाषा और साहित्य की समृद्धि और विविधता का जश्न मनाया जा सकता है।

9. 'हिंदी समय' की सामग्री का साहित्यिक और सांस्कृतिक महत्व

'हिंदी समय' वेबसाइट पर प्रस्तुत सामग्री का साहित्यिक और सांस्कृतिक महत्व इसे न केवल एक साहित्यिक प्लेटफॉर्म के रूप में प्रतिष्ठित करता है, बल्कि यह एक सांस्कृतिक धरोहर के रूप में भी उभरता है। यहाँ, हम इसके साहित्यिक और सांस्कृतिक महत्व के विभिन्न पहलुओं का विस्तार से विश्लेषण करेंगे।

साहित्यिक महत्व

कविता और कहानियाँ : 'हिंदी समय' पर प्रकाशित कविताएँ और कहानियाँ हिंदी साहित्य की गहराई और विविधता को प्रस्तुत करती हैं। इनमें मध्य काल से लेकर आधुनिक समय तक की रचनाएँ शामिल हैं, जो विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक और व्यक्तिगत थीम्स को छूती हैं। कविताओं में भावनाओं, प्रकृति, प्रेम, विरह, आध्यात्मिकता और सामाजिक चिंतन के विषयों का समावेश होता है। कहानियाँ, दूसरी ओर, जीवन के विविध पहलुओं को उजागर करती हैं, जैसे कि मानव संबंध, संघर्ष, आशा, हानि और उपलब्धि।

आलोचना और समीक्षा : 'हिंदी समय' का आलोचना और समीक्षा विभाग साहित्यिक कृतियों की गहराई से विश्लेषण करता है। यह विभाग साहित्यिक आलोचना के महत्वपूर्ण पहलुओं पर प्रकाश डालता है, जैसे कि रचना की भाषा, शैली, थीम, पात्र विकास और नैतिकता। इससे पाठकों को साहित्यिक कृतियों की गहराई और उनके सैद्धांतिक आधारों की समझ में मदद मिलती है।

सांस्कृतिक महत्व

इतिहास और संस्कृतिः 'हिंदी समय' पर प्रकाशित इतिहास और संस्कृति पर आधारित लेख हिंदी भाषी समुदाय के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक परिदृश्य को समृद्ध करते हैं। ये लेख हिंदी भाषा और साहित्य के विकास, विभिन्न युगों के सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तनों, और सांस्कृतिक प्रथाओं के विविध पहलुओं को उजागर करते हैं।

सांस्कृतिक विरासतः 'हिंदी समय' न केवल साहित्यिक कृतियों का एक संग्रहालय है बल्कि यह हिंदी भाषा और साहित्य की सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित और प्रचारित करने का एक माध्यम भी है। इसमें प्रकाशित सामग्री हिंदी भाषी समुदाय की विविधता और समृद्धि को दर्शाती है, जिससे पाठकों को उनकी सांस्कृतिक विरासत की गहराई और विविधता का अनुभव होता है।

भाषाई विविधताः 'हिंदी समय' ने हिंदी भाषा की भाषाई विविधता और समृद्धि को प्रदर्शित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। वेबसाइट पर प्रकाशित सामग्री में विभिन्न बोलियों और उपभाषाओं का समावेश होता है, जो हिंदी भाषा के विविध रूपों को सामने लाता है।

साहित्यिक और सांस्कृतिक विरासत का प्रसार

'हिंदी समय' ने हिंदी साहित्य और संस्कृति की विरासत को विश्वव्यापी पहुँच प्रदान की है। इसने न केवल भारत में बल्कि विश्वभर में हिंदी भाषा और साहित्य के प्रति रुचि और जागरूकता बढ़ाई है। डिजिटल युग में, 'हिंदी समय' हिंदी साहित्य और संस्कृति के प्रसार में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है, जिससे यह साहित्यिक और सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित और प्रचारित करने में सहायक है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि 'हिंदी समय' वेबसाइट पर प्रस्तुत सामग्री हिंदी साहित्य और संस्कृति के विशाल समुद्र में एक नाव की तरह है, जो पाठकों को इसकी असीम गहराइयों और विविधताओं का अन्वेषण करने का अवसर प्रदान करती है। यह साहित्यिक और सांस्कृतिक धरोहर का एक महत्वपूर्ण संग्रहालय है, जो विश्वव्यापी पाठकों को हिंदी साहित्य और संस्कृति की समृद्धि और विविधता से परिचित कराता है।

10. हिंदी समय' का तकनीकी पक्ष

हिंदी समय' की तकनीकी संरचना और मंच इसे हिंदी साहित्य और संस्कृति के डिजिटल प्रसार में अग्रणी बनाता है। इस खंड में, हम वेबसाइट की तकनीकी विशेषताओं, डेटा सुरक्षा और गोपनीयता नीतियों और उपयोगकर्ता डेटा प्रबंधन के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा करेंगे।

वेबसाइट की तकनीकी संरचना और मंच : 'हिंदी समय' का तकनीकी ढांचा इसे उपयोगकर्ता के अनुकूल और सहज इंटरफेस प्रदान करता है। वेबसाइट का निर्माण आधुनिक वेब विकास प्रौद्योगिकियों जैसे कि HTML5, CSS3, और Java Script का उपयोग करके किया गया है, जो कि इसे विभिन्न उपकरणों और ब्राउज़रों पर समर्थन और उत्तम प्रदर्शन प्रदान करते हैं। सर्वर–साइड प्रोसेसिंग के लिए, 'हिंदी समय' PHP, Node.js या Django जैसे बैकएंड फ्रेमवर्क का उपयोग कर सकती है, जो कि वेबसाइट की सामग्री प्रबंधन और डेटाबेस इंटरएक्शन को सरल बनाते हैं।

वेबसाइट का मंच इस प्रकार डिज़ाइन किया गया है कि यह सुनिश्चित करता है कि सामग्री सुलभ और खोजने में आसान हो। संगठनात्मक रूप से, 'हिंदी समय' अपनी सामग्री को विभिन्न श्रेणियों में विभाजित करती है, जैसे कि कविता, कहानी, आलोचना, समीक्षा और साक्षात्कार, जिससे उपयोगकर्ताओं को वांछित सामग्री तक तेजी से पहुंचने में मदद मिलती है।

डेटा सुरक्षा और गोपनीयता नीतियाँ : डेटा सुरक्षा और गोपनीयता 'हिंदी समय' के लिए मुख्य प्राथमिकताएँ हैं। वेबसाइट SSL (Secure Sockets Layer) एन्क्रिप्शन का उपयोग करती है, जो कि उपयोगकर्ता डेटा को सुरक्षित रूप से ट्रांसमिट करने में मदद करता है। इसके अलावा, 'हिंदी समय' अपनी गोपनीयता नीति में स्पष्ट रूप से उल्लेख करती है कि वह उपयोगकर्ता डेटा का उपयोग कैसे करती है और उसे कैसे संरक्षित करती है।

उपयोगकर्ता संग्रहण और डेटा प्रबंधन के संदर्भ में, 'हिंदी समय' उपयोगकर्ताओं से प्राप्त जानकारी को सुरक्षित डेटाबेस में संग्रहित करती है। इसमें उपयोगकर्ता पंजीकरण जानकारी, टिप्पणियाँ, और साहित्यिक योगदान शामिल हैं। वेबसाइट डेटा एकत्रीकरण और विश्लेषण के लिए भी आधुनिक उपकरणों का उपयोग करती है, जिससे उपयोगकर्ता अनुभव को और बेहतर बनाया जा सके।

'हिंदी समय' नियमित रूप से अपनी डेटा सुरक्षा प्रथाओं की समीक्षा करती है और नवीनतम सुरक्षा उपायों को लागू करती है ताकि उपयोगकर्ता डेटा की सुरक्षा सुनिश्चित की जा सके। इसमें नियमित सुरक्षा ऑडिट, डेटा एन्क्रिप्शन और अनधिकृत पहुँच से सुरक्षा शामिल है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि 'हिंदी समय' की तकनीकी संरचना और मंच इसे एक उपयोगकर्ता–मित्रवत और सुरक्षित डिजिटल स्थान बनाते हैं। वेबसाइट की डेटा सुरक्षा और गोपनीयता नीतियाँ, साथ ही उपयोगकर्ता डेटा प्रबंधन प्रथाएँ, इसकी प्रतिबद्धता को दर्शाती हैं कि वह उपयोगकर्ताओं की जानकारी को सुरक्षित और गोपनीय रखेगी। 'हिंदी समय' का तकनीकी ढांचा न केवल उसे हिंदी साहित्य और संस्कृति के प्रसार में एक महत्वपूर्ण साधन बनाता है बल्कि एक सुरक्षित और विश्वसनीय डिजिटल मंच के रूप में भी स्थापित करता है।

ISSN No. : 0970-9398

11. 'हिंदी समय की पाठकों के लिए उपयोगिता, मनोरंजन मूल्य और प्रभाव

'हिंदी समय' वेबसाइट पर प्रस्तुत सामग्री पाठकों के लिए उपयोगिता और मनोरंजन का एक अनूठा मिश्रण प्रदान करती है। साहित्यिक कृतियाँ और कलात्मक अभिव्यक्तियाँ मनोरंजन के साथ–साथ भावनात्मक और बौद्धिक उत्तेजना प्रदान करती हैं। विद्यार्थियों, शोधकर्ताओं, और साहित्य प्रेमियों के लिए वेबसाइट एक महत्वपूर्ण शैक्षणिक संसाधन के रूप में कार्य करती है, जो साहित्यिक अध्ययन, आलोचना और शोध में मदद करती है। सांस्कृतिक लेख और इतिहास पर आधारित सामग्री समाज और संस्कृति की बेहतर समझ प्रदान करती है, जिससे पाठकों को अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ने और उन्हें समझने में मदद मिलती है। समसामयिक मुद्दों पर चर्चा और साक्षात्कार पाठकों को वर्तमान समय के महत्वपूर्ण विषयों और विचारों से अवगत कराते हैं, जिससे उन्हें व्यापक समाजिक और राजनीतिक परिदृश्य की गहरी समझ मिलती है।

'हिंदी समय' वेबसाइट पर प्रस्तुत सामग्री हिंदी भाषा और साहित्य के प्रति उत्साही व्यक्तियों के लिए एक अमूल्य संसाधन है। यह उन्हें साहित्यिक और सांस्कृतिक ज्ञान के साथ–साथ मनोरंजन और आत्म–विकास के अवसर प्रदान करती है। इसकी विविध सामग्री हिंदी भाषा और साहित्य की समृद्धि और विविधता को उजागर करती है, जो पाठकों को अपनी सांस्कृतिक विरासत से जुड़ने और उसे समझने का एक अनूठा मंच प्रदान करती है।

'हिंदी समय' का पाठकों पर प्रभाव

पाठकों के साथ संवाद स्थापित करने की क्षमता: 'हिंदी समय' वेबसाइट की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताओं में से एक है इसकी पाठकों के साथ संवाद स्थापित करने की क्षमता। वेबसाइट ने एक ऐसा मंच प्रदान किया है जहाँ साहित्य और संस्कृति के प्रति उत्साही व्यक्तियों को न केवल सूचना और ज्ञान प्राप्त होता है, बल्कि वे अपने विचार और अनुभव भी साझा कर सकते हैं। इसके लेख, समीक्षाएं और आलोचनात्मक विश्लेषण पाठकों को विभिन्न विषयों पर गहन चिंतन के लिए प्रेरित करते हैं, जिससे एक सक्रिय और संवादात्मक समुदाय का निर्माण होता है। इस तरह, वेबसाइट ने एक डिजिटल पाठशाला का रूप ले लिया है, जहाँ सीखने और साझा करने की प्रक्रिया निरंतर जारी रहती है।

भाषाई समावेशिता और पहुंच: 'हिंदी समय' वेबसाइट का एक अन्य महत्वपूर्ण प्रभाव भाषाई समावेशिता और पहुंच है। वेबसाइट हिंदी भाषा में सामग्री प्रदान करके, न केवल भारत बल्कि विश्व भर में हिंदी भाषी जनसंख्या के लिए एक संसाधन बन गई है। इसकी सामग्री की विविधता और गुणवत्ता ने विभिन्न आयु वर्गों, शैक्षिक पृष्ठभूमि, और सामाजिक स्थितियों के पाठकों को आकर्षित किया है। इस प्रकार, वेबसाइट ने हिंदी भाषा के माध्यम से ज्ञान की साझेदारी और सांस्कृतिक समझ को बढ़ावा दिया है, जिससे भाषाई और सांस्कृतिक बाधाओं को पार करने में मदद मिली है।

शैक्षिक और सूचनात्मक प्रभाव: 'हिंदी समय' वेबसाइट का शैक्षिक और सूचनात्मक प्रभाव विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। वेबसाइट ने साहित्य, इतिहास, संस्कृति, और समाज के विभिन्न पहलुओं पर गहन ज्ञान प्रदान किया है। इसकी सामग्री ने पाठकों को नए विचारों और परिप्रेक्ष्यों से परिचित कराया है, जिससे उनकी सोचने की क्षमता और ज्ञान का विस्तार हुआ है। शिक्षकों, विद्यार्थियों और शोधकर्ताओं के लिए वेबसाइट ने एक विश्वसनीय और उपयोगी शैक्षिक संसाधन के रूप में कार्य किया है, जिससे उन्हें अपने अध्ययन और शोध कार्य में मदद मिली है। इस प्रकार, वेबसाइट ने ज्ञान के प्रसार और साहित्यिक तथा सांस्कृतिक शिक्षा को बढ़ावा देने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

'हिंदी समय' वेबसाइट का पाठकों पर प्रभाव व्यापक और गहरा है। इसने न केवल हिंदी भाषा और साहित्य के प्रति जागरूकता और रुचि बढ़ाई है, बल्कि यह भी सुनिश्चित किया है कि पाठकों को शिक्षा, सूचना और मनोरंजन के समृद्ध स्रोत तक पहुंच हो। इसकी सामग्री ने पाठकों को चिंतन और संवाद के लिए प्रेरित किया है, जिससे एक जीवंत और सक्रिय समुदाय का निर्माण हुआ है जो हिंदी भाषा और साहित्य के प्रति समर्पित है।

12. निष्कर्ष

'हिंदी समय' वेबसाइट डिजिटल युग में हिंदी साहित्य और भाषा के प्रसार का एक प्रमुख मंच है। यह

विभिन्न साहित्यिक शैलियों, विषयों और विचारों के साथ हिंदी भाषी समाज के बीच सांस्कृतिक और भाषाई ज्ञान का आदान–प्रदान सुनिश्चित करता है। इसके द्वारा प्रस्तुत सामग्री के माध्यम से वेबसाइट हिंदी भाषा और साहित्य के विकास और इसके समाज पर प्रभाव की गहराई से समझने की आशा करती है।

'हिंदी समय' का उद्देश्य हिंदी साहित्य के क्लासिकल और आधुनिक दोनों रूपों को बड़े माध्यम के रूप में प्रस्तुत करना है, जिसमें कविता, कहानियाँ, उपन्यास, नाटक, आलोचना, समीक्षा, और साक्षात्कार शामिल हैं। विशेष रूप से, इसका लक्ष्य हिंदी भाषा और साहित्य की विविधता और समृद्धि को उजागर करना है।

वेबसाइट की भाषाई विशेषताओं में स्पष्टता, साफ़ और सरल भाषा का प्रयोग, व्याकरणिक संरचना, शब्द संग्रह और विशिष्ट शब्दावली और मुहावरों का उपयोग शामिल है। ये विशेषताएँ इसे हिंदी भाषी समाज में एक अमूल्य संसाधन बनाती हैं।

'हिंदी समय' का शैलीगत विश्लेषण इसकी साहित्यिक शैली के माध्यम से एक विशिष्ट स्थान रखता है, जिसमें विविधता और गहराई दोनों हैं। यह क्लासिकल साहित्य से लेकर समकालीन विषयों तक के विविध विषयों को संबोधित करती है, पाठकों को एक संवेदनशील और समृद्ध भाषाई अनुभव प्रदान करती है। इसकी लेखन शैली, जो विविध विषयों पर केंद्रित है, अनुकूलनीय और लचीली होती है, जो विषय की प्रकृति और पाठकों के ज्ञान स्तर के अनुसार ढल जाती है। इसका उपयोगकर्ता इंटरफेस और नेविगेशन डिजाइन इसकी भाषाई स्पष्टता और सुगमता को प्रतिबिंबित करता है, जो पाठकों को विभिन्न अनुभागों और सामग्री तक आसानी से पहुँचने में मदद करता है।

'हिंदी समय' की सामग्री का साहित्यिक और सांस्कृतिक मूल्यांकन इसे हिंदी साहित्य और संस्कृति के प्रसार और संरक्षण में एक महत्वपूर्ण मंच के रूप में स्थापित करता है। इसकी सामग्री में कविताएँ, कहानियाँ, उपन्यास, नाटक, आलोचना और समीक्षाएँ हिंदी साहित्य की विविधता और समृद्धि को दर्शाती हैं, जबकि साक्षात्कार और विशेष आयोजन साहित्यिक समुदाय के बीच संवाद और सहयोग को बढ़ावा देते हैं।

वेबसाइट की सामग्री के माध्यम से, 'हिंदी समय' हिंदी भाषा और साहित्य के इतिहास, विकास, और उसके समाज पर प्रभाव को गहराई से समझने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इसका मुख्य लक्ष्य हिंदी साहित्य और भाषा की समझ को बढ़ाना और इस ज्ञान को व्यापक दर्शकों तक पहुंचाने की रणनीतियों को खोजना है। इस प्रक्रिया में, 'हिंदी समय' हिंदी भाषा और साहित्य के प्रति जागरूकता बढ़ाने और उसे संरक्षित करने में एक योगदान देगा, आशा की जाती है कि इस अध्ययन से प्राप्त ज्ञान हिंदी भाषा और साहित्य के प्रति रुचि और सम्मान को और अधिक बढ़ावा देगा और इसे डिजिटल युग में एक नया आयाम प्रदान करेगा।

'हिंदी समय' वेबसाइट की सामग्री के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि यह मंच हिंदी भाषा और साहित्य के विविध आयामों को प्रस्तुत करने में सक्षम है। इसकी भाषाई विशेषताएँ, शैलीगत विश्लेषण और साहित्यिक एवं सांस्कृतिक मूल्यांकन हिंदी समय को हिंदी भाषी समुदाय के लिए एक अमूल्य संसाधन बनाते हैं। इसके अलावा, वेबसाइट की उपयोगिता, मनोरंजन मूल्य, और प्रभाव इसे पाठकों के लिए और भी आकर्षक बनाते हैं।

भविष्य में 'हिंदी समय' और इसी तरह के अन्य डिजिटल मंचों की संभावनाओं का मूल्यांकन करने पर, यह स्पष्ट होता है कि वे हिंदी भाषा और साहित्य के प्रसार और संरक्षण में और अधिक योगदान दे सकते हैं। इस प्रकार, 'हिंदी समय' न केवल वर्तमान में बल्कि भविष्य में भी हिंदी भाषा और साहित्य के विकास और उसके समाज पर प्रभाव की गहराई से समझने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

—उप प्रबंधक (राजभाषा)
एनएमडीसी लिमिटेड
मझगवाँ, पन्ना (मध्य प्रदेश)

संदर्भ सूची–

1. 'हिंदी समय' वेबसाइट (2024) (https :// hindisamay. com/)

ISSN No. : 0970-9398

तकनीकी क्षेत्र में हिंदी भाषा का विकास

–लेफ्टिनेंट डॉ. शबाना हबीब

वही भाषा जीवित रहती है जिसका प्रयोग जनता करती है। भारत में 22 भाषाएँ हैं जिस में हम भारत में जहाँ भी जाओ हिंदी भाषा का प्रयोग कर सकते हैं। संपर्क का कार्य यह भाषा बखूबी निभाती है। जब भारत का संविधान बनाया गया तब एक प्रावधान जारी किया कि –"जब तक हिंदी राजकाज करने में सक्षम होगी तब तक हिंदी के साथ अंग्रेज़ी का प्रयोग होगा। अंग्रेज़ी सहराजभाषा के रूप में होगी। लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के इतने सालों के बाद भी हिंदी पूर्ण रूप से राजभाषा का रूप नहीं ले पा रही है। इसका कारण अंग्रेज़ी का वर्चस्व ही है।

हिंदी भाषा की अपनी खूबियाँ हैं–

- 50% से ज्यादा लोग हिंदी समझ सकते हैं।
- आसानी से समझ में आने वाली भाषा है।
- सबसे सरल और लचीली भाषा है।

हिंदी आज दुनिया की सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा के रूप में प्रतिष्ठित है। बी.बी. सी की खबर के मुताबिक इस समय विश्व में 54.5 करोड़ लोग हिंदी बोलने वाले हैं। गैर हिंदी भाषी देशों के लोग भी हिंदी सीख रहे हैं। हिंदी पूरे भारत और दुनिया के कई देशों में अमेरिका, कनाडा, मॉरीशस, सूरीनाम जैसे देशों में बोली और समझी जाती है।

प्रयोग की दृष्टि से हिंदी इतनी समृद्ध है कि इसे सीखने में विशेष कठिनाई नहीं होती। इस समय विश्व के लगभग 150 विश्वविद्यालयों में हिंदी पढ़ाई जा रही है जो हिंदी के बढ़ते प्रयोग और प्रभाव का संकेतक हैं। हिंदी दुनिया की सर्वाधिक तीव्रता से प्रसारित हो रही भाषाओं में से एक है। सबसे बड़े सर्च इंजन गूगल ने भी हिंदी को अब अपनी सभी सेवाओं में एक माध्यम के रूप में शामिल किया है। सोशल मीडिया में हिंदी का प्रयोग करने वालों की संख्या दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं। फेसबुक, ट्वीटर, इंस्टाग्राम आदि में हिंदी के पर्याप्त संसाधन और प्रसाधक उपलब्ध हैं। हिंदी की सबसे बड़ी विशेषता है कि हिंदी वैसी लिखी जाती है जैसे ही पढ़ी जाती है। इसमें कोई भी अक्षर Silent नहीं होता। अंग्रेजी में कुछ अक्षर silent होते हैं।

हिंदी भाषा भारत की एकता और विविधता का प्रतीक है। जब मैं एन सी सी की ट्रेनिंग के लिए ग्वालियर चली गई तो वहाँ कन्याकुमारी से लेकर कश्मीर तक के लोग मौजूद थे। हिंदी जानने के कारण उन लोगों से बातचीत करने में कोई समस्या नहीं आयी। सचमुच हिंदी भाषा संपर्क का सही कार्य करती है। तमिलनाडु के लोगों और जिनको हिंदी नहीं आती उनको बहुत मुश्किलों का सामना करना पड़ा।

हिंदी भाषा की जितनी मांग है, इंटरनेट पर उतनी उपलब्धता नहीं है। लेकिन जिस रफ्तार से भारत में इंटरनेट का विकास हुआ है उसी तरह से हिंदी भी इंटरनेट पर छा रही है। समाचार पत्र से लेकर हिंदी ब्लाग तक अपनी उपस्थिति दर्ज कर रहा है। साधुवाद तो गूगल को भी जाता है जिसने हिंदी में खोज करने की जगह उपलब्ध कराई। इतना ही नहीं विकीपीडिया ने भी हिंदी की महत्ता को समझते हुए कई सामग्रियों का सॉफ्टवेयर अनुवाद हिंदी में प्रदान करना शुरू कर दिया जिससे हिंदी भाषा में किसी भी विषय की जानकारी सुलभ हुई। आजकल हिंदी भी इंटरनेट की एक अहम लोकप्रिय भाषा बन कर उभरी है। मेरा मानना है जब लोग अपने विचार और लेखन हिंदी भाषा में इन्टरनेट पर ज्यादा करेंगे तो वह दिन दूर नहीं है जब सारी सामग्री हिंदी में भी इंटरनेट पर मिलने लगेगी।

हम आपस में विचार विनिमय के लिए भाषा का प्रयोग करते है। भाषा हम अभ्यास से सीखते हैं।

आज हम कई कार्यों में कंप्यूटर का प्रयोग कर रहे हैं। कम्प्यूटर की भाषिक क्षमता के विकास का कार्य भाषा–प्रौद्योगिकी के माध्यम से किया जाता है। कम्प्यूटर तथा वेब पर उपलब्ध भाषिक सामग्री के संसाधन के लिए हमें अपेक्षित सॉफ्टवेयर उत्पादों के विकास के लिए प्राकृतिक संसाधनों का सहारा लेने की जरूरत पड़ती है। सॉफ्टवेयर को विकसित करने के लिए विभिन्न ज्ञान की शाखाओं के विशेषज्ञों की आवश्यकता है। कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी विशेषज्ञों के साथ भाषा–वैज्ञानिकों, भाषिक प्रयोग व्यवहार ज्ञान के विशेषज्ञों को काम करने की जरूरत है।

विभिन्न भाषाओं के लिए भाषा प्रौद्योगिकी के विकास के लिए कुशल जन बल की ज़रूरत है, जो उन भाषाओं में प्रवीण होने के साथ–साथ भाषा प्रौद्योगिकी के सिद्धांतों, तमाम मूलभूत सिद्धांत, कंप्यूटरीय भाषाविज्ञान, प्राकृतिक भाषा संसाधन की तमाम प्रक्रियाओं, उद्देश्यों, लक्ष्यों से परिचित हो। ऐसे कुशल जन बल को तैयार करने की दृष्टि से नया पाठ्यक्रम तैयार करना होगा।

हिंदी में काम करने के लिए सबसे आवश्यक "यूनिकोड" का प्रयोग है। इसके माध्यम से हिंदी में काम करना अत्यंत सरल हो जाता है। यूनिकोड के माध्यम से न केवल परंपरागत की–बोर्ड से टाइपराइटिंग की जा सकती है बल्कि रोमन लिपि में टंकण कर के भी हिंदी में काम किया जा सकता है।

यूनिकोड को सक्रिय करने के लिए राजभाषा विभाग की वेबसाइट पर जाकर (www.rajbhasha.nic.in) – आप कंप्यूटर में "यूनिकोड को सक्रिय कैसे करें पर क्लिक करें। उसमें भाषायी कंप्यूटरीकरण एकमात्र विकल्प यूनिकोड नामक विंडो खुलेगी जिसमें अलग–अलग आपरेटिंग सिस्टम पर कैसे यूनिकोड सक्रिय होगा। इसके विषय में जानकारी दी गई है।

लीला प्रबोध, प्रवीण और प्राज्ञ का प्रशिक्षण राजभाषा विभाग द्वारा इंटरनेट के माध्यम से दिया जाने लगा है। इसके अतिरिक्त हिंदीतर भाषियों और हिंदी भाषियों के लिए कुछ अन्य वेबसाइट्स भी हैं:

1. सरल अंग्रेजी हिंदी व्याकरण के लिए www.hindiwallah. com

2. बोलचाल की हिंदी के लिए मुफ्त सॉफ्टवेयर उपलब्ध है www.byki.com

इसके अतिरिक्त कंट्रोल पैनल, हिंदी ब्लॉग टिप्स, ब्लॉग बुखार तथा टेक प्रिव्यू (tech preview) कुछ ऐसे ब्लॉग हैं जिन पर हिंदी में काम करने संबंधी तकनीकी सहायता प्राप्त की जा सकती है।

पहले ISM में ही हिंदी टाइपिंग संभव था। सुविधानुसार यूनिकोड का विकास किया गया। हिंदी के लिए अनेक टाइपिंग फोण्ट्स उपलब्ध हैं। आजकल हिंदी अंग्रेज़ी में टाइप करने पर हिंदी में टाइप होकर आते है। इसके लिए मंगल फॉन्ट इस्तेमाल करते हैं। लेकिन आज–कल Google docs में टाइप करके देखिए Google input download करके प्रयोग करते तो विभिन्न फॉन्ट्स में अंग्रेज़ी में टाइप करेंगे तो हिंदी में बदलकर आयेंगे। आज कल वायस टाइपिंग का इस्तेमाल हम कर सकते हैं। अच्छी तरह उच्चारण करेंगे तो भी उसी तरह होता है। फोन पर भी इसका इस्तेमाल होता है। e-books के तौर पर बहुत सारी हिंदी किताबें आजकल उपलब्ध हैं। पहले तो लंबी–लंबी कंटेन्ट टाइप करनी पड़ती थी आज–कल गूगल लेंस के माध्यम से उसे copy करके उसी रूप में वर्ड फाइल में Paste कर सकते हैं। टाइपिंग का काम आसान हो गया। किसी भाषा के कंटेन्ट को हम इसमें टाइप कर सकते हैं। वैसे ही ट्रांसलेशन की बात। आजकल गूगल ट्रांसलेशन चलती है। चैट जीपीटी के इस्तेमाल से काम ज़्यादा आसान हो गया। किसी विषय से संबंधित कोई भी जानकारी चाहिए तो तुरंत प्राप्त होती हैं। सैद्धांतिक और वैज्ञानिक विषय का अनुवाद गूगल ट्रासलेशन के जरिए सही रूप से कर सकते हैं। लेकिन साहित्यिक विषयों का ट्रांसलेशन ऐसे नहीं कर सकते। Google lens के वास्ते किसी भी भाषा के कंटेंट का ट्रांसलेशन अन्य किसी भी भाषा में कर सकते हैं।

यदि ऑनलाइन काम करना हो तो गूगल ने उसके लिए विशेष सुविधाएं उपलब्ध कराई है।

ISSN No. : 0970-9398

Quillpad एक ऐसा सॉफ्टवेयर है जिस पर आप रोमन लिपि में टंकण करके हिंदी में लिख सकते हैं। इसके अतिरिक्त transliteration के माध्यम से भी हिंदी में काम किया जा सकता है। जब ऑनलाइन काम करना हो तो गूगल खोज में जाकर transliteration को सक्रिय करके रोमन लिपि में टंकण किया जा सकता है जो हिंदी में ही टाइप होगा। यह सरकारी कार्यालयों में कार्यरत हिंदी अनुवादकों के लिए विशेष रूप से उपयोगी सिद्ध हो सकता है। यहां यह कहना आवश्यक है कि आज जब अधिकतर कार्यालयों में हिंदी टंककों की अत्यधिक कमी हो रही है और इनकी भर्ती भी बन्द है ऐसी स्थिति में यदि अनुवादकों का काम करने वालों को इसकी जानकारी दी जाए और उन्हें कम्प्यूटर पर प्रशिक्षित किया जाए तो वे सीधे कम्प्यूटर पर अनुवाद कार्य को कर सकते है। इस संबंध में सीधी भर्ती स्तर पर अनुवादकों के भर्ती नियमों में कम्प्यूटर ज्ञान की अनिवार्यता को जोड़ा भी जा सकता है।

केंद्र सरकारी काम–काज में हिंदी भाषा का महत्व बढ़ता जा रहा है। मलयाली होकर भी हम सब त्रिभाषा सूत्र में बंधे हुए थे। इसी कारण से मुझे तीनों भाषाओं की जानकारी है। लेकिन जितना स्थान राजभाषा को मिलना चाहिए वह नहीं मिल रहा है। हिंदी भाषा मुख्य धारा में लेकर पढ़ाई करेंगे तो सिर्फ टीचर नहीं बल्कि बैंकों में, केंद्र सरकार के कार्यालयों में अनुवादकों के रूप में काम मिल सकता है। हिंदी आसानी से समझ आने वाली भाषा है। थोड़ी बहुत कोशिश करेंगे तो आसानी से हम सीख पाएंगे। आजकल ऐसा देखने को मिलता है कि हम अपनी भाषा से प्यार नहीं करते, मलयालम हो या हिंदी हमें उसका आदर करना चाहिए और इसका प्रयोग करना चाहिए।

सोशल मीडिया एक ऐसी तकनीक है जो कंप्यूटर नेटवर्क के माध्यम से अपने उपयोगकर्ता को संवाद स्थापित करने की सुविधा प्रदान करती है। उपयोगकर्ता आमतौर पर इस माध्यम का प्रयोग करने के लिए डेस्कटॉप, कंप्यूटर, लैपटॉप, टेबलेट एवं मोबाईल फोन पर आधारित प्रौद्योगिकियों के माध्यम से सोशल मीडिया की सेवाओं का उपयोग करते हैं। पिछले कुछ दशकों में सोशल मीडिया भारतीय किशोरों के बीच ही नहीं अपितु पुरानी पीढ़ी के बीच भी काफी लोकप्रिय हुआ है। आम जनता को अपने परिचितों एवं समाज के मध्य वार्तालाप स्थापित करने की इसकी अदभुत क्षमता के कारण धीरे–धीरे यह जन–जन तक पहुंच रहा है। पहले इसका प्रयोग करने में भाषा की जो बाध्यता थी, हिंदी भाषा के प्रयोग ने वह भी दूर कर दी है। इस मीडिया के माध्यम से हिंदी भाषी हिंदुस्तानी जहां व्हाट्सएप्प के जरिए एक दूसरे से वार्तालाप कर सकता है वहीं यू ट्यूब के जरिए कई विषयों की जानकारी प्राप्त कर सकता है। लिंक्डइन आम आदमियों को रोजगार तलाशने में मदद कर रहा है। ब्लोगिंग ने अपने उपयोगकर्ता को उसके विचारों की अभिव्यक्ति हेतु मंच प्रदान किया है। सोशल मीडिया की इन्हीं खूबियों के चलते आम जनता में इस मीडिया की मांग दिन प्रतिदिन बढ़ रही है। बीबीसी की रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2020 तक इसके उपभोक्ताओं की संख्या 3,150 लाख मिलियन तक पहुंचने की सम्भावना है। समाज को जगाने में मीडिया हमेशा से ताकतवर रहा है। नैपोलियन के अनुसार "लाखों संगीने मेरे भीतर वह डर पैदा नहीं करती जो तीन अखबार करते हैं।

सोशल मीडिया पर हिंदी के प्रयोग का भाषा पर प्रभाव: भाषा मनुष्य के जीवन का अभिन्न अंग है। सोशल मीडिया पर हिंदी के प्रयोग से भाषा का स्वरूप भी बदला है। सोशल मीडिया एकालाप नहीं, संवाद है जिससे एक बड़ा वर्ग इससे जुड़ा होने के कारण पुराने संचार मीडिया सिकुड़ते जा रहे हैं। यहां उपयोगकर्ता या प्रयोगकर्ता ही निर्माता भी है। यह इस माध्यम की सबसे बड़ी शक्ति एवं सीमा भी है। सोशल मीडिया की सबसे बड़ी पूँजी इसके उपयोगकर्ताओं की भारी संख्या है जो दो अरब से भी ज्यादा हैं। इस मीडिया के अधिकतर उपयोगकर्ता 15 से 24 वर्ष के हैं जिसके कारण युवा पीढ़ी की भाषा शैली प्रभावित हुई है। छवियों के माध्यम से संचार होने के कारण औपचारिक लेखन में भी कमी आई है। व्याकरण आदि पर ध्यान न रखने के कारण भाषा का लालित्य घट रहा है। पारंपरिक व्याकरण के नियम बदल रहे हैं। हिंदी के मिश्रित स्वरूप का जन्म हुआ है यथा लिपि देवनागरी एवं भाषा हिंदी, लिपि रोमन

एवं भाषा हिंदी तथा दोनों भाषाओं एवं लिपियों का मिश्रण एक साथ जिसको हिंगलिश की संज्ञा भी दी जा रही है। हिंदी की पारम्परिक कविता विधा के स्थान पर जापानी विधा हाइकु का प्रयोग भी बढ़ रहा है। नई पीढ़ियां पाठ्य पुस्तकों के अलावा गंभीर, स्वास्थ्य, विचारपूर्ण लेखन, साहित्यिक वैचारिक पठन से लगातार दूर जा रही है। अच्छी असरदार भाषा अच्छी पढ़ने से ही आती है एवं अच्छी भाषा के बिना गहरा गंभीर विचार विमर्श, चिंतन और ज्ञान निर्माण संभव नहीं।

"राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूँगा है", महात्मा गांधी ने कहा था। "निजभाषा उन्नति अहै सब उन्नति के मूल", भारतेंदु जी ने कहा था। दोनों की उक्तियाँ कितना सार्थक हैं। दक्षिण भारत में तमिलनाडु के लोग ही हिंदी को राष्ट्र भाषा बनाने के खिलाफ थे। केरल में विभिन्न संस्थाओं एवं पत्रिकाओं के माध्यम से हिंदी भाषा का प्रचार–प्रसार जोरों से होता है। केरल हिंदी प्रचार–सभा की पत्रिका केरल ज्योति, अखिल भारतीय हिंदी अकादमी की पत्रिका शोध सरोवर, हिंदी विद्यापीठ की पत्रिका–संग्रथन इस काम में कर्म–निरत है। केरल के सभी यूनिवर्सिटी में BA, MA, B-Ed, Ph.D के तौर पर लोग हिंदी सीखते सिखाते हैं। इसका प्रचार–प्रसार करते हैं। सबसे ज्यादा पी–एच डी हिंदी में ही होती हैं। संगोष्ठियों, Symposium, कार्यशालाएँ आयोजित होती हैं। Youth Festival में भी हिंदी भाषा पर बहुत सारे Events आयोजित होते है। हिंदी के जाने–माने साहित्यकारों से वाकिफ होने का मौका मिलता है। शहर से बाहर Internship करने का मौका मिलता है। यदि हम हिंदी और दूसरी भाषा जानते हैं तो किताबों को आसानी से ट्रांसलेट कर सकते हैं। यही नहीं comparative literature का scope भी है। साथ ही अनेक कहानियों का comparison भी हम कर सकते हैं। हिंदी का इस्तेमाल ब्रोशर में भी कर सकते हैं।

"हिंदी में काम करना आसान है, शुरू तो कीजिए" वाला बैंक का शीर्षक कितना सार्थक है। हिंदी भाषा की प्रगति के लिए उत्तर भारत में जोरों पर काम हो रहे हैं। तमिलनाडु में जाकर देखिए वहाँ के बोर्ड में एक भी अंग्रेजी शब्द नहीं होगा। सभी लोग तमिल में ही बात करेंगे। यहाँ अपनी भाषा से ज्यादा दूसरी भाषा में बात करना लोग पसंद करते हैं। यही तो फर्क है। हिंदी वालों को ज्यादातर हिंदी का ही इस्तेमाल करना चाहिए। हमारे यहाँ सब कहीं अंग्रेज़ी में ही बोर्ड लगाए जाते हैं। सिर्फ केंद्र सरकार के ऑफिस में ही द्विभाषा में हम यह देख सकते हैं। हिंदी में बोर्ड बनाना आसान है, उसे तो कीजिए। हिंदी विभाग में भी फैकल्टी का नाम और बाकी विवरण अंग्रेज़ी में ही लिखा जाता है।

आप कदम बढाइए हिंदी को आगे लाने के लिए हिंदी में काम करने के लिए।

"हिंदी हमारी राज भाषा है

हिंदी हमारी दिल की धड़कन है

हमें तो गर्व होना इस में

हम तो हिंदी जानती है

हमारी जान इसमें है"।

–सहायक आचार्य
राजकीय महिला महाविद्यालय,
तिरुवनंतपुरम, केरल

संदर्भ सूची :

1. विश्व बाजार में हिंदी महिपाल सिंह, देवेंद्र मिश्र, संस्करण–2010
2. राजभाषा हिंदी एक उद्योग (संगोष्ठी सार पुस्तिका) एन.सी. एल, पुणे वर्ष– जनवरी 2013
3. राष्ट्रवाणी पत्रिका – महाराष्ट्र राष्ट्र भाषा सभा, पुणे मई – जून (अंक–1) 2013
4. सद्भावना दर्पण पत्रिका संपादक गिरीश पंकज अंक 8 सितम्बर 2012

ISSN No. : 0970-9398

21वीं सदी की रोजगारोन्मुखी हिंदी

– प्रवीण कुमार सहगल

मातृभाषा की उन्नति बिना किसी भी समाज की तरक्की संभव नहीं है तथा अपनी भाषा के ज्ञान के बिना मन की पीड़ा को दूर करना भी मुश्किल है। हिंदी दुनिया की दूसरी सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा है। एक रिपोर्ट के मुताबिक इस समय दुनिया भर में हिंदी बोलने वालों की संख्या 55 करोड़ से ज्यादा है, वहीं हिंदी समझ सकने वाले लोगों की संख्या करीब 1 अरब से भी ज्यादा है। हिंदी हमारी मातृभाषा है। जिस तरह एक घर में मां के बिना घर, परिवार और उस घर के बच्चे अधूरे हैं, उसी तरह हिंदी भाषा के बिना भारत और भारतीयता अधूरी है। इस अधूरेपन को दूर करने के लिए हमें हिंदी में जीना होगा और उसे हृदय से जोड़ना होगा।

आधुनिक समय में किसी भाषा या बोली के जीवित रहने के लिए मात्र साहित्य की नहीं, बल्कि उसे व्यवसाय, विज्ञान और रोजगार की भाषा बनाने की भी जरूरत होती है। जो भाषा सामान्य मनुष्य को रोजगार नहीं दे पाती, वह धीरे–धीरे एक संकुचित दायरे में सिमटकर रह जाती है। अंग्रेजी के अंतरराष्ट्रीय भाषा होने का सबसे बडा कारण व्यवसाय है। केवल शौक के लिए किसी भाषा को सीखने वाले बहुत ही कम लोग होते हैं। अधिकतर लोग किसी न किसी व्यावसायिक कारण से ही किसी अन्य भाषा को सीखते हैं। आज हिंदी भाषा को वैश्विक रूप प्राप्त हुआ है। यूनेस्को की एक रिपोर्ट के अनुसार विश्व के लगभग एक सौ सैंतीस देशों में हिंदी भाषा विद्यमान है। नेपाल, चीन, सिंगापुर, बर्मा, श्रीलंका, थाईलैंड, मलेशिया, तिब्बत, भूटान, इंडोनेशिया, पाकिस्तान, बांग्लादेश, मालदीव आदि ऐसे देश हैं, जिनमें से अनेक पहले भारत के अंग थे। यहां हिंदी भाषी परिवार पीढ़ी दर पीढ़ी निवास कर रहे हैं। नेपाल की भाषाएं हिंदी की विभाषाएं ही हैं। बर्मा और भूटान की स्थिति भी कुछ ऐसे ही है। जावा, सुमात्रा और इंडोनेशिया में जो उर्दू बोली जाती है, उसे देवनागरी में लिखा जाए तो वह हिंदी ही है। दुबई की अधिकांश जनता न केवल हिंदी समझती है, बल्कि बोलती भी है।

हिंदी भारत के अधिकांश लोगों द्वारा बोली जाने वाली भाषा है। जब से संविधान द्वारा हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया गया, तब से हिंदी भाषा का स्वरूप व्यवहारिक होता जा रहा है। हिंदी संस्कृति, संवेदना व दिल की भाषा होने के साथ–साथ अब रोजगार की भाषा भी हो गयी है। जब कोई भाषा अपने पूर्ण विकास व विस्तार में होती है तो उसमें रोजगार की संभावनाएं भी उजागर हो जाती हैं। हिंदी भाषा का विशाल व समृद्ध साहित्य ही उसे जीवित रखने का आधार नहीं है, बल्कि हिंदी भाषा का व्यवसाय, विज्ञान व रोजगार में शामिल होना भी उसके प्राण तत्व हैं। अंग्रेजी भाषा का प्रयोग व्यवसायी भाषा के रूप में है, यह उसके अंतरराष्ट्रीय होने का मुख्य कारण है। विभिन्न क्षेत्रों में हिंदी भाषा के बढ़ते वर्चस्व व प्रयोजनीयता के कारण हिंदी आज अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहुंच चुकी है। 21वीं सदी की हिंदी भाषा केवल शिक्षण तक ही सीमित नहीं है, बल्कि पूरे देश के छात्रों व पेशेवरों को उच्चगुणवत्ता वाली शिक्षा प्रदान कर रही है। वैश्वीकरण के युग में हिंदी भाषा के बढ़ते चलन ने रोजगार के अनेक मार्ग खोले हैं।

कुछ ही समय पहले तक हिंदी को रोजगार के अवसरों की कमी के कारण यथापेक्षित सम्मान प्राप्त नहीं हो पाता था, परंतु पिछले कुछ समय में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विकास, बदलते सामाजिक–आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्था के फलस्वरूप हिंदी से संबंधित रोजगार के अवसरों में भी व्यापक विकास हुआ है। इस बात में कोई अतिश्योक्ति नहीं है कि भारत में

सरकारी क्षेत्र में निकलने वाली नौकरियां अंग्रेजी की अपेक्षा हिंदी को अधिक तरजीह देती हैं। निजी तथा कॉरपोरेट क्षेत्र में भी हिंदी से संबंधित रोजगारों में भारी वृद्धि हुई है। हिंदी भाषा एवं साहित्य का अध्ययन करने के पश्चात किसी भी छात्र के पास सरकारी तथा निजी, दोनों क्षेत्रों में रोजगार के अवसर उपलब्ध हो जाते हैं। जहां सरकारी नौकरियों में वह शिक्षक, प्रोफेसर, अनुवादक, इंटरप्रेटर, राजभाषा अधिकारी आदि पद प्राप्त कर सकते हैं, वहीं निजी क्षेत्र में पत्रकार, संपादक, समाचार वाचक, रेडियो जॉकी, रचनात्मक लेखन आदि के माध्यम से अपना जीवनयापन कर सकते हैं। हिंदी भाषा के अध्ययन के पश्चात छात्र–वर्ग को निम्नलिखित क्षेत्रों एवं संस्थाओं में रोजगार के अवसर सुलभ हो सकते हैं :–

शिक्षा का क्षेत्र –

हिंदी भाषा का अध्ययन करने वालों के बीच में हिंदी भाषा का अध्यापन कार्य रोजगार के क्षेत्र में एक लोकप्रिय विकल्प है। हिंदी बहुसंख्यक लोगों द्वारा बोली जाने वाली भाषा है, इसलिए हिंदी भाषा भारत के लगभग सभी सरकारी, अर्धसरकारी व निजी शिक्षण संस्थानों में पढ़ाई जा रही है। इन संस्थानों में योग्यतानुसार प्री प्राइमरी से लेकर उच्च शिक्षा तक रोजगार के व्यापक अवसर हैं। प्रत्येक संस्थान में हिंदी के अध्यापक होते हैं। प्री प्राइमरी शिक्षक बनने के लिये नर्सरी टीचर ट्रेनिंग (NTT) या मांटेसरी ट्रेनिंग के बाद प्री प्राइमरी शिक्षक बना जाता है। प्राइमरी की कक्षा को पढ़ाने के लिये डिप्लोमा इन एलिमेंट्री एजुकेशन (D.EL.ED.) या बैचलर ऑफ एजुकेशन (B.ED) के साथ शिक्षक पात्रता परीक्षा (TET) पास कर किसी भी प्राथमिक विद्यालय में शिक्षक बना जाता है। हाईस्कूल व इंटर मीडिएट की कक्षाओं को पढ़ाने के लिये स्नातक हिंदी विषय के साथ B.ED का कोर्स व TET द्वितीय परीक्षा उत्तीर्ण कर हिंदी अध्यापक की योग्यता प्राप्त की जा सकती है। उच्च शिक्षण सस्थानों में हिंदी विषय में स्नात्कोत्तर के बाद हिंदी में Ph.D तथा राष्ट्रीय पात्रता परीक्षा (NET) या फिर राज्य पात्रता परीक्षा (SET) उत्तीण कर हिंदी प्राध्यापक के रूप में अध्यापन कार्य किया जा सकता है। शिक्षण व्यवसाय से सम्बन्धित पाठ्यक्रम संस्थान केंद्र सरकार व राज्य सरकार दोनों द्वारा संचालित किये जाते हैं। हिंदी हमारी राजभाषा होने से सभी संस्थानों में हिंदी शिक्षण होता है

प्रिंट मीडिया –

किसी सूचना या संदेश को लिखित रूप से एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचाने में प्रिंट मीडिया का बहुत बड़ा योगदान है। दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, वार्षिक आदि पत्र–पत्रिकाएं प्रिंट मीडिया के माध्यम हैं। भारत का पहला हिंदी समाचार पत्र 1826 ई. में उदंत मार्तड निकला था, तब से सैकड़ों हिंदी पत्र–पत्रिकाएं प्रकाशित होती रहती हैं, जिनमें रोजगार के विपुल अवसर हैं। प्रिंट मीडिया के क्षेत्र में हिंदी न्यूज रिपोर्टर, संपादक, एडिटर, स्तम्भकार, आलोचक आदि के रूप में रोजगार प्राप्त किया जा सकता है। इसके लिये हिंदी भाषा का ज्ञान, व्याकरण की शुद्धता, शब्दों का अर्थपूर्ण व मर्यादित प्रयोग तथा रोचक भाषा शैली जैसे गुणों का होना आवश्यक है। प्रिंट मीडिया में रोजगार पाने के लिये स्नातक स्तर पर हिंदी भाषा के साथ पत्रकारिता के कोर्स विभिन्न शैक्षणिक संस्थानों द्वारा कराये जा रहे हैं।

पत्रकारिता एवं जनसंचार –

हिंदी का वैश्विक रूप पत्रकारिता व जनसंचार माध्यमों से उजागर हो रहा है। हिंदी अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बन गयी है। टी. वी. चैनलों में दो तिहाई से अधिक चैनल हिंदी भाषा के हैं। उनमें अधिक से अधिक हिंदी के मनोरंजन प्रधान और सूचना प्रधान कार्यक्रम दिखाने की होड़ मची हुई है। विदेशी भाषाओं की फिल्में हिंदी में डब की जा रही हैं। सभी व्यवसायिक कंपनियां अपने उत्पादनों का विज्ञापन हिंदी में देने के लिये बेचैन हैं। आगे रहने की प्रतियोगिता में चैनल नये–नये कार्यक्रमों का निर्माण कर रहे हैं। उनके निर्माण, प्रचार, प्रसारण, संचालन के क्षेत्रों में हिंदी भाषी युवाओं के लिये रोजगार के नित नये विकल्प खुल रहे हैं। पत्रकारिता और जनसंचार के क्षेत्र में हिंदी जनसंपर्क अधिकारी, हिंदी संवाद लेखन, पटकथा लेखन, हिंदी डबिंग, गीत निर्माण,

आलोचक, समाचार वाचक, लेखन, संपादन तथा हिंदी अनुवाकों के रूप में कार्य किया जा सकता है। इसके लिये हिंदी भाषा का ज्ञान, देश दुनिया की जानकारी, रचनात्मकता, आवाज में स्पष्टता व संवाद के आधार पर लय होनी चाहिए।

पत्रकारिता व जनसंचार में शिक्षण प्राप्ति के लिये अनेक पाठ्यक्रम संचालित किये जाते हैं। B.A. में जनसंचार पाठ्यक्रम, B.Sc. में ग्राफिक्स एण्ड एनिमेशन तथा मल्टीमीडिया, B.B.A. में जनसंचार माध्यमों में प्रवेश के साथ डिप्लोमा या डिग्री इन मास कम्यूनिकेशन की पढाई की जा सकती है। विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं व चैनलों के अपने यूट्यूब चैनल व वेबसाइटें होने से पत्रकारिता व जनसंचार के क्षेत्र में हिंदी भाषी युवाओं को ऑनलाइन रोजगार के अवसर मिल रहे हैं। इसके लिये हिंदी भाषा का अच्छा ज्ञान, आत्मविश्वास, संवाद कौशल, कैमरे के सामने बोलने की कुशलता होनी चाहिए। अब प्रिंट मीडिया इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में बदलता जा रहा है।

सरकारी व निजी कार्यालय –

संविधान के संशोधन 1967 के अनुसार सभी सरकारी अधिकारियों को कार्यालय की भाषा के रूप में अंग्रेजी के साथ–साथ हिंदी का प्रयोग करना भी अनिवार्य है। आदेश सूचना, नियम, प्रतिवेदन, प्रेस विज्ञप्ति, निविदा, अनुबंध एवं विभिन्न प्रारूपों को हिंदी में बनाना व जारी करना अनिवार्य है। इसके लिए केन्द्र व हिंदी भाषी राज्य सरकार के सभी विभागों, उप विभागों में हिंदी भाषा अधिकारी, अनुवादक, प्रबंधक, उपप्रबंधक आदि के रूप में हिंदी भाषा में रोजगार प्राप्त किया जा सकता है। इन पदों के लिये स्नातक स्तर पर हिंदी विषय के साथ अनुवादक के क्षेत्र में डिप्लोमा होना आवश्यक है। राजभाषा अधिकारी के लिये स्नातक में हिंदी के साथ एक विषय के रूप में अंग्रेजी तथा हिंदी तकनीकी शिक्षा का होना आवश्यक है।

तकनीकी क्षेत्र –

भूमंडलीकृत विश्व में संचार प्रौद्योगिकी के विस्तृत प्रचार–प्रसार के फलस्वरूप समस्त संसार को एक विश्वग्राम के रूप में बनाए रखने के लिए तकनीक के क्षेत्र में अग्रणी अनेक वैश्विक कंपनियां दिन–रात इंटरनेट पर तमाम भाषाओं में सामग्रियां अपलोड करती रहती हैं। गूगल, माइक्रोसॉफ्ट, फेसबुक, ट्विटर, यूट्यूब, व्हाट्सएप आदि अग्रणी सूचना प्रौद्योगिकी कंपनियों को भारतवर्ष में भी यहां के हिंदी–भाषी समाज तक अपना कंटेंट उपलब्ध करवाने के लिए उन्हें हिंदी भाषा में रूपांतरित करवाना अपेक्षित होता है। इसके लिए उन्हें ऐसे सिद्धहस्त वेब–डेवलपर तथा इंजीनियरों की आवश्यकता होती है जो हिंदी भाषा के अनुरूप उनके सॉफ्टवेयर के प्रोग्राम विकसित कर सकें। हिंदी भाषा के जानकार, जिन्हें तकनीकी ज्ञान भी हो, इन सब कार्यों के लिए उपयुक्त होते हैं। अनेक बीपीओ तथा कॉल सेंटर आदि में भी कॉल एग्जीक्यूटिव के लिए परिष्कृत हिंदी जानने वाले उम्मीदवारों की आवश्यकता बढ़ती जा रही है। हिंदी भाषा एवं साहित्य के अनेक वेब पोर्टल, ब्लॉग, यूट्यूब पर डाला जाने वाला कंटेंट, ऑनलाइन हिंदी शब्दकोश एवं विश्वकोश, गूगल ट्रांसलेट, विकिपीडिया और विविध पोर्टलों पर ऑनलाइन कंटेंट विकसित करने, गूगल प्ले स्टोर तथा एप्पल ऐप स्टोर के लिए हिंदी में अनेक एप विकसित करने, अनेक समाचार वेबसाइटों पर फ्रीलांसर पत्रकारिता करने, सूचनाएं एकत्र करने, तमाम साहित्यिक–सामाजिक– सांस्कृतिक वेबसाइटों पर कंटेंट अपलोड करने का व्यापक कार्य करने के लिए तकनीकी ज्ञान सहित हिंदी भाषा का भी उत्कृष्ट ज्ञान अपेक्षित होता है।

राष्ट्रीयकृत एवं निजी बैंक –

वर्तमान समय में राष्ट्रीकृत एवं निजी बैंकों द्वारा अपने ग्राहकों के लिये अनेक योजनाओं का निर्माण व प्रचार किया जाता रहता है, जिन्हें ग्रामीण, देहात के लोगों तक पहुंचाने के लिये हिंदी भाषी कर्मचारियों की आवश्यकता होती है, जिससे अधिक से अधिक लोग बैंकों की योजनाओं को सरल भाषा में समझ सकें और उनका लाभ उठा सकें। इसके लिये बैंकों में ग्रामीण तथा उपनगरों के हिंदी मीडियम से पढ़े स्नातक युवाओं की भी भर्ती की जाती है जो बैंकों की योजनाओं को सरल भाषा में लोगों को समझा

सकें। इसके अलावा न्यायिक सेवा, रेलवे, सिविल व स्टेट सर्विस विभागों में भी हिंदी प्रूफ रीडिंग और फाइनल ड्राफ्ट तैयार किये जाते हैं। यहां भी हिंदी भाषा में रोजगार के व्यापक अवसर हैं।

विज्ञापन –

हिंदी भाषा में विज्ञापनों का बाजार बहुत तेजी से बढ़ा है। बाजारवाद के इस युग में विज्ञापनों के व्यवसाय ने एक तरह की क्रान्ति पैदा कर दी है। अपने उत्पादों के प्रचार–प्रसार के लिए एजेंसियां विज्ञापनों पर भारी भरकम खर्च कर रही हैं जिससे उपभोक्ता को प्रभावित कर सकें। आज अधिकांश लोग हिंदी भाषी हैं, विज्ञापनों पर भी हिंदी भाषा का ही कब्जा है। एजेंसियां विज्ञापन में अपने मूल संदेश को तथा उत्पाद की विशेषताओं को शब्दों में कुछ इस तरह बांधती है कि वह उत्पाद हमारे लिये कुछ खास मायने रखने लगता है। विज्ञापन की धारा हिंदी में स्थापित हो चुकी है जो सतत् प्रवाहमान है। हिंदी विज्ञापनों के लिये हिंदी शब्दों का चयन, वाक्य गठन, विचलन, समानान्तर इत्यादि का महत्वपूर्ण स्थान है। विज्ञापन एक कला है और हिंदी विज्ञापन जगत में रोजगार के लिये हिंदी भाषा का ज्ञान, शब्द की अनेक अर्थ व्यंजना, नये–नये मुहावरों का निर्माण करने की क्षमता तथा विज्ञापन प्रस्तुतीकरण में हिंदी भाषा में अर्थ संप्रेषण की कला होनी आवश्यक है।

रेडियो जॉकी –

यह एक ऐसा व्यवसाय है जिसमें आवाज द्वारा प्रोग्राम प्रस्तुत किये जाते हैं। हिंदी रेडियो जॉकी की आवाज अच्छी होनी चाहिये, क्योंकि इसमें मुख्य काम बोलना है तथा मिमिक्री व हंसी–मजाक से हर उम्र के लोगों का मनोरंजन करना होता है। रेडियो जॉकी में हिंदी प्रोग्रामिंग, स्टोरी लिखना, विज्ञापन, ऑडियो मैगजीन व डॉक्यूमेंट्री प्रस्तुत करने का कार्य किया जा सकता है। इसके लिये हिंदी के साथ किसी अन्य भाषा का ज्ञान भी आवश्यक है, साथ ही देश दुनिया की जानकारी, नई रचनाओं को पढ़ने की ललक, आवाज में विनम्रता, उतार–चढाव, समय की पाबंदी आदि गुणों का होना अनिवार्य है। इसके अलावा आपकी शैली विशेष, हाजिर जवाबी, आत्मविश्वास के साथ प्रस्तुतीकरण की क्षमता भी आवश्यक है। एयर FM, टाइम्स FM, रेडियो मिड डे, रेडियो वाणी, ऑल इण्डिया रेडियो व क्षेत्रीय रेडियो स्टेशनों में अपना कैरियर बना सकते हैं।

पर्यटन, समाजसेवी संस्थाएं एवं ग्राहक सेवा केंद्र –

भारत एक पर्यटक देश है। यहां सांस्कृतिक, धार्मिक व ऐतिहसिक दर्शनीय स्थलों को देखने के लिए देश विदेश के पर्यटक आते हैं जिनका मार्गदर्शन करने के लिये हिंदी भाषी गाइड की आवश्यकता होती है। हिंदी गाइड को हिंदी के अलावा अन्य भाषा का ज्ञान होना भी आवश्यक है। यहां रोजगार के पर्याप्त अवसर हैं। स्वयं भी पर्यटन कर ब्लॉग बना सकते हैं। विभिन्न समाजसेवी संगठनों द्वारा अपनी योजनाओं को लोगों तक प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करने के लिये हिंदी भाषा के विशेषज्ञों को नियुक्त किया जाता है। कस्टमर केयर, काल सेन्टर, सर्विस सेंटर, सेल्स मार्केटिंग में हिंदी भाषा में रोजगार के पर्याप्त अवसर हैं।

रचनात्मकता –

कुछ लोगों में जन्मजात लेखन कला होती है। वे अपनी रचनात्मकता से हिंदी में कविता, कहानी नाटक, उपन्यास, गीत, फिल्मों में संवाद, हास्य लेखन, विज्ञापन के लिये लेखन कर रोजगार प्राप्त कर सकते हैं। हमारे प्रसिद्ध हिंदी लेखक प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, महादेवी वर्मा, निराला आदि में जन्मजात लेखन गुण था जिसे उन्होंने धीरे–धीरे विकसित कर हिंदी का विशाल साहित्य तैयार कर दिया। समाज में मुद्दों की कमी नहीं है। किसी भी समस्या व मुद्दे पर यथार्थ लेखन कहानी, उपन्यास, स्तम्भकार, हास्य व्यंग्य के रूप में किया जा सकता है। विभिन्न कवि सम्मेलनों का आयोजन होता है, जहां अपनी रचनात्मक कला का प्रदर्शन किया जाता है। यह मंच भी रोजगार का माध्यम है।

वैश्विक मंच –

जैसे–जैसे भारत की आर्थिक स्थिति बेहतर होती जा रही है तथा वह वैश्विक मंच पर अपनी उपस्थिति लगातार बढ़ाता जा रहा है, उसी प्रकार भारत के बहुसंख्यक लोगों द्वारा बोली जाने वाली भाषा हिंदी भी वैश्विक पटल पर अपनी उपस्थिति लगातार मजबूत करती जा रही है। जिस प्रकार अपने देश के अनेक स्कूलों तथा विश्वविद्यालयों में तमाम विदेशी भाषाएं छात्र–छात्राओं को पढ़ाई जाती हैं, उसी प्रकार अनेक वैश्विक विश्वविद्यालयों में भी हिंदी भाषा का पठन–पाठन किया जाता है। वर्तमान में दुनिया के 30 से अधिक देशों और लगभग 175 विश्वविद्यालयों में हिंदी का पठन–पाठन किया जाता है। अकेले संयुक्त राज्य अमेरिका में ही 20 से अधिक केंद्रों (कैलिफोर्निया, टेक्सस, शिकागो, पेंसिलवेनिया, ह्यूस्टन आदि स्थित विश्वविद्यालय) पर हिंदी भाषा का पठन–पाठन होता है। अनेक अमेरिकी तथा यूरोपीय विश्वविद्यालयों में हिंदी के अध्यापन के लिए प्रतिवर्ष भारत से दर्जनों लोग जाते हैं तथा कुछ तो वहीं के होकर रह जाते हैं। इसी प्रकार संयुक्त राष्ट्र संघ में भी हिंदी से अंग्रेजी द्विभाषाविद की आवश्यकता निरंतर पड़ती रहती है। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा वर्ष 2009 में हिंदी न्यूज बुलेटिन आरंभ की गई तथा वर्ष 2019 में हिंदी में एक न्यूज वेबसाइट आरंभ की, साथ ही वह हिंदी में अपने ट्विटर संदेश भी भेजता है। अनेक देशों के भारतीय दूतावासों में हिंदी से शिक्षा प्राप्त किए हुए लोगों को अनुवादक, संस्कृति सचिव, सेकंड सेक्रेटरी, कल्चरल अताशे (सांस्कृतिक सहचारी) आदि पदों पर नियुक्त किया जाता है। वैश्विक इंटेलिजेंस एजेंसियों तथा सुरक्षा एजेंसियों के साथ–साथ अमेरिकी सेना में भी हिंदी अनुवादक भर्ती किए जाते हैं।

अन्य सामग्री लेखन –

इसमें किसी भी वेबसाइट के लिये लिखना, टी. वी. के किसी भी कार्यक्रम के लिये लिखना, विभिन्न विषयों का हिंदी भाषा में नोट्स बनाना, किसी टेक्निकल सामान के संचालन विधि को सरल हिंदी में समझाकर लिखना, शोध ग्रन्थ व शोध पत्रों का लेखन, किसी भी प्रकार का हिंदी टाइपिंग कार्य करना और भी अनेक कार्य हैं जिससे हिंदी भाषा में रोजगार प्राप्त किया जा सकता है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि हिंदी सरल, जीवित व वैज्ञानिक भाषा है और इसमें उद्यमिता व तकनीकी की अनेक संभावनाएं हैं। कुछ समय पहले तक हिंदी भाषा को हीन कहने वाले लोग भी हिंदी भाषा के महत्व व उसकी बढती प्रयोजनीयता को समझने लगे हैं। हिंदी लोकप्रिय भाषा बन गयी है। भारत सरकार द्वारा हिंदी भाषा को बढ़ावा देने के साथ रोजगार के क्षेत्र में भी हर संभव प्रयास किया जा रहा है। आज उच्च पदों पर आसीन शासन–प्रशासन के प्रतिनिधि अंतराष्ट्रीय मंच से हिंदी भाषा में सम्बोधित करते हैं जिससे गर्व की अनुभूति होती है। वह दिन दूर नहीं जब हिंदी को संवैधानिक रूप से राष्ट्रभाषा का दर्जा दिया जाएगा। जिस तरह भारत सरकार तकनीकी, चिकित्सा, विज्ञान जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों की भाषा को हिंदी में प्रस्तुत करने के प्रयास कर रही है उससे यही प्रतीत होता है कि भविष्य में हिंदी भाषा में रोजगार के नित नये–नये अवसर प्राप्त होंगे। 21वीं सदी में कोई ऐसा क्षेत्र नहीं जो हिंदी भाषा के प्रयोग से अछूता हो। हमें गर्व है कि हम हिंदी भाषी हैं।

– डी–1209, डबुआ कालोनी,
फरीदाबाद–121001
(हरियाणा)

संदर्भ सूची :–

1. आधुनिक जनसंचार और हिंदी. प्रो. हरिमोहन, तक्षशिला प्रकाशन दिल्ली, पृष्ठ सं० 22, प्रथम संस्करण 2008
2. जनसंचार माध्यमों में हिंदी, डॉ० चन्द्र कुमार, क्लासिक पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, पृष्ठ सं० 9
3. दैनिक समाचार पत्र अमर उजाला, 4 सितम्बर 2022 का अंक।
4. हिंदी की प्रासंगिकता, गजानद झा–2011, पेज न. 184
5. हिंदी का वैश्विक परिदृश्य, मंजू रानी–मानसरोवर, प्रकाशन–2017 पेज न. 68 से 77
6. ई–अनुवाद और हिंदी, किताबघर, नई दिल्ली–डॉ. हरीश कुमार

ISSN No. : 0970-9398

विश्व की भाषाई विविधता का व्यापक अवलोकन

–शेर सिंह

परिचय

एक अनुमान के अनुसार दुनिया में कुल भाषाओं की संख्या लगभग 6809 है, लेकिन क्या आपको पता है कि विश्व की सबसे प्राचीन भाषा कौन–सी है? दुनिया की कितनी भाषाएं हैं इसका ठीक–ठीक उत्तर देना संभव नहीं है। एक अनुमान के अनुसार दुनिया में कुल भाषाओं की संख्या लगभग 6809 है, इनमें से 90 फीसदी भाषाओं को बोलने वालों की संख्या 1 लाख से भी कम है। लगभग 200 से 150 भाषाएं ऐसी हैं जिनको 10 लाख से अधिक लोग बोलते हैं। लगभग 357 भाषाएं ऐसी हैं जिनको मात्र 50 लोग ही बोलते हैं। इतना ही नहीं 46 भाषाएं ऐसी भी हैं जिनको बोलने वालों की संख्या मात्र 1 है। इस लेख को पढ़ने के बाद जान जाएंगे कि विश्व की सबसे प्राचीन भाषा कौन–सी है, क्योंकि इस लेख के अनुसार विश्व की सबसे प्राचीन भाषाओं का विवरण दे रहे हैं।

संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा को देवभाषा कहा जाता है। संस्कृत भाषा से तमाम यूरोपीय भाषाएं प्रेरित लगती हैं। दुनिया भर में फैले तमाम विश्विद्यालय एवं शिक्षण संस्थान संस्कृत को सबसे प्राचीन भाषा मानते हैं। ऐसा माना जाता है कि दुनिया की तमाम भाषाएँ कहीं–ना–कहीं संस्कृत से ही निकली है। संस्कृत भाषा ईसा से 5000 साल पहले से बोली जाती है। संस्कृत आज भी भारत की राजभाषा है। हालांकि वर्तमान समय में संस्कृत बोलचाल की भाषा के बजाय केवल पूजा–पाठ एवं कर्मकांड की भाषा बनकर रह गई है। हिन्दू धर्म में संपन्न होने वाले सभी शुभ कार्यों में वेद मंत्र का पाठ किया जाता है, जिसकी भाषा संस्कृत है।

लैटिन भाषा

लैटिन प्राचीन रोमन साम्राज्य और प्राचीन रोमन धर्म की राजभाषा थी। वर्तमान समय में यह रोमन कैथोलिक चर्च की धर्मभाषा और वैटिकन सिटी की राजभाषा है। संस्कृत की ही तरह यह एक शास्त्रीय भाषा है। लैटिन हिन्द–यूरोपीय भाषा–परिवार की रोमांस शाखा में आती है। इसी से फ्रांसीसी, इतालवी, स्पैनिश, रोमानियाई, पुर्तगाली और वर्तमान समय की सबसे लोकप्रिय भाषा अंग्रेजी का उद्‌गम हुआ है। यूरोप में ईसाई धर्म के प्रभुत्व की वजह से मध्ययुगीन और पूर्व–आधुनिक कालों में लैटिन भाषा लगभग सारे यूरोप की अंतरराष्ट्रीय भाषा थी, जिसमें समस्त धर्म, विज्ञान, उच्च साहित्य, दर्शन और गणित की किताबें लिखी जाती थीं।

तमिल भाषा

तमिल भाषा को दुनिया की सबसे पुरानी भाषा के तौर पर मान्यता मिली हुई है और यह द्रविड़ परिवार की सबसे प्राचीन भाषा है। करीब 5000 साल पहले भी इस भाषा की उपस्थिति थी। एक सर्वे के मुताबिक प्रतिदिन सिर्फ तमिल भाषा में 1863 अखबार प्रकाशित होते हैं। वर्तमान में तमिल भाषा बोलने वालों की संख्या लगभग 7.7 करोड़ है। यह भाषा भारत, श्रीलंका, सिंगापुर तथा मलेशिया में बोली जाती है।

हिब्रू भाषा

हिब्रू सामी–हामी भाषा–परिवार की सामी शाखा में आने वाली भाषा है। हिब्रू भाषा लगभग 3000 साल पुरानी है। वर्तमान समय में यह इजरायल की राजभाषा है, जिसके विलुप्त होने के बाद इजरायली लोगों ने दोबारा से इसे जिंदा किया। इसे यहूदी समुदाय 'पवित्र भाषा' मानता है और बाइबिल का पुराना नियम इसी में लिखा गया था। हिब्रू भाषा इब्रानी लिपि में लिखी जाती है, जो दायें से बायें पढ़ी और लिखी जाती है। पश्चिम के विश्वविद्यालयों में आजकल इब्रानी का अध्ययन अपेक्षाकृत काफी लोकप्रिय है। प्रथम महायुद्ध के बाद फिलिस्तीन की राजभाषा भी आधुनिक इब्रानी है।

इजिप्टियन भाषा

इजिप्टियन भाषा मिस्र की सबसे पुरानी ज्ञात

भाषा है। यह भाषा एफ्रो–एशियाई भाषाई परिवार से है। यह भाषा ईसा से 2600–2000 साल पुरानी है। अभी भी यह भाषा अपने स्वरूप को जीवित बनाए हुए है।

ग्रीक भाषा

ग्रीक भाषा यूरोप की सबसे पुरानी भाषा है, जो ईसा से 1450 साल पहले से बोली जाती है। मौजूदा समय में ग्रीक भाषा ग्रीस, अल्बानिया और साइप्रस में बोली जाती है। लगभग 13 मिलियन लोग आज भी ग्रीक भाषा बोलते हैं।

चीनी भाषा

चीनी भाषा संसार में सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा है। यह चीन एवं पूर्वी एशिया के कुछ देशों में बोली जाती है। चीनी भाषा चीनी–तिब्बती भाषा–परिवार में आती है और वास्तव में कई भाषाओं और बोलियों का समूह है। मानकीकृत चीनी भाषा असल में एक "मन्दारिन" नामक भाषा है। यह भाषा ईसा के आगमन से भी 1200 साल पुरानी है। मौजूदा समय में लगभग 1.2 बिलियन लोग चीनी भाषा बोलते हैं।

अरेमिक भाषा

यह भाषा आज हिब्रू और अरबी भाषाओं में मिल चुकी है। कभी यह आर्मेनियाई गणराज्य की आधिकारिक भाषा हुआ करती थी। इसकी मौजूदगी के ईसा से 1000 साल पहले के भी सबूत मिले हैं। आज भी अरेमिक भाषा इराक, इरान, सीरिया, इजरायल, लेबनान और आधुनिक रोम में बोली जाती है।

कोरियन भाषा

कोरियन भाषा लगभग 600 ईसापूर्व से बोली जाती है। वर्तमान समय में लगभग 8 करोड़ लोग कोरियाई भाषा बोलते है। इस भाषा की लिपि हंगुल (Hangul) है। प्राचीन काल में चीनी लोग कोरिया में जाकर बस गए थे, इसलिये कोरियाई भाषा, चीनी भाषा से काफी प्रभावित है।

आर्मेनियन भाषा

आर्मेनियन भाषा भी भारतीय–यूरोपीय भाषाई समूह का हिस्सा है, जो आर्मेनियाई लोगों द्वारा बोली जाती है। पांचवी शताब्दी में लिखी गई बाईबिल इसकी सबसे पुरानी उपस्थिति के रूप में विद्यमान है। आर्मेनियन भाषा की उत्पत्ति 450 ईसापूर्व में हुई थी। वर्तमान समय में लगभग 5 फीसदी लोग इस भाषा को बोलते हैं। यह भाषा मेसोपोटामिया तथा कॉकस की मध्यवर्ती घाटियों और काले सागर के दक्षिणी पूर्वी प्रदेश में बोली जाती है। यह प्रदेश आर्मीनी जार्जिया तथा अज़रबैजान (उत्तर–पश्चिमी ईरान) में पड़ता है। यह आर्मीनिया गणतंत्र की राजभाषा है।

विश्व की भाषायें

दुनिया की कितनी भाषाएं हैं इसका ठीक ठीक उत्तर देना संभव नहीं है। एक अनुमान के अनुसार दुनिया में कुल भाषाओं की संख्या 6809 है, इनमें से 90 फीसदी भाषाओं को बोलने वालों की संख्या 1 लाख से भी कम है। लगभग 200 से 150 भाषाएं ऐसी हैं जिनको 10 लाख से अधिक लोग बोलते हैं। लगभग 357 भाषाएं ऐसी हैं जिनको मात्र 50 लोग ही बोलते हैं। इतना ही नहीं 46 भाषाएं ऐसी भी हैं जिनको बोलने वालों की संख्या मात्र 1 है। दुर्भाग्यवश संचार के माध्यमों में वृद्धि के साथ ही कई ऐसी छोटी भाषाएं हैं जो लुप्तप्राय हैं। इन भाषाओं के लुप्त होने के साथ ही इन्हें बोलने वालों की संस्कृति भी समाप्त हो जाएगी।

भाषाओं का पारिवारिक वर्गीकरण

संस्कृत, ग्रीक, लेटिन आदि भाषाओं का अध्ययन करने पर यह मालूम होता है कि वे किसी एक ही मूल भाषा से निकली हैं। इसी आधार पर भाषाओं को परिवारों में बांटने का प्रयास किया जाता है। भाषा परिवारों के बारे में अलग–अलग विद्वानों की अलग–अलग राय है। भाषा परिवारों के नाम और उनमें शामिल प्रमुख भाषाएं इस प्रकार हैं–

भारोपीय परिवार

यह सर्वप्रमुख भाषा परिवार है जिसके बोलने वालों की संख्या विश्व में सबसे ज्यादा है। इस भाषा परिवार की प्रमुख भाषाएं संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, हिंदी, बंगाली, फारसी, ग्रीक, लैटिन, अंग्रेजी, रूसी, जर्मन, पुर्तगाली, इतालवी इत्यादि हैं।

यूराल परिवार

इस परिवार की भाषाएं यूरोप में बोली जाती हैं। इस भाषा परिवार की प्रमुख भाषाएं हंगेरियन, फिन्निश और मॉर्डिविन हैं।

ISSN No. : 0970-9398

अल्टाइक परिवार

इस भाषा परिवार की भाषाएं यूरोप (तुर्की), मध्य एशिया (उज्बेक), मंगोलिया (मंगोलियन), सुदूर पूर्व एशिया (कोरियाई, जापानी) इत्यादि में बोली जाती हैं।

चीनी परिवार

यह एशिया का प्रमुख भाषा परिवार है जिसमें दुनिया की सबसे ज्यादा बोलने वाली भाषा मंदारिन (चीनी) शामिल है। इस परिवार की प्रमुख भाषाएं मंदारिन, तिब्बती या मोट, बर्मी, थाई, मैतेई, गारो, नागा, बोडो, नेबारी आदि हैं। ये सभी भाषाएं ध्वनि आधारित हैं।

मलय–पॉलीनेशियन परिवार

इस भाषा परिवार में लगभग 1000 भाषाएं शामिल हैं और ये भाषाएं मुख्य रूप से हिंद महासागर व प्रशांत महासागर के देशों और दक्षिण–पूर्व एशिया में बोली जाती हैं। इस भाषा परिवार की प्रमुख भाषाएं हैं– मलाया, इंडोनेशियाई, माओरी, फिजियन, हवाइयन इत्यादि।

अफ्रीकी–एशियाई परिवार

इस भाषा परिवार में उत्तरी अफ्रीका और मध्य–पूर्व की भाषाएं शामिल हैं।। इस भाषा परिवार की मुख्य भाषाओं में अरबी और हिब्रू शामिल हैं।

कॉकेशियाई परिवार

इस परिवार की भाषाएं मुख्य रूप से काला सागर और कैस्पियन सागर के बीच स्थित देशों के लोगों द्वारा बोली जाती हैं। जॉर्जियाई और चेचेन इस परिवार की मुख्य भाषाएं हैं।

द्रविड़ परिवार

इस भाषा परिवार की भाषाएं भारत के दक्षिणी राज्यों में बोली जाती हैं। तमिल, कन्नड़, तेलुगू इस भाषा परिवार की प्रमुख भाषाएं हैं।

ऑस्ट्रो–एशियाटिक परिवार

इस परिवार की भाषाएं एशिया में भारत के पूर्वी हिस्से से लेकर वियतनाम तक बोली जाती हैं। इस परिवार की प्रमुख भाषाओं में वियतनामी और ख्मेर शामिल हैं।

नाइजर–कांगो परिवार

इस भाषा परिवार की भाषाएं दक्षिणी सहारा के इलाके में बोली जाती हैं। इस परिवार की प्रमुख भाषाओं में स्वाहिली, शोना, झोसा और जुलु शामिल हैं।

अमेरिकी परिवार

इस भाषा परिवार में उत्तरी अमेरिका, मध्य अमेरिका, दक्षिणी अमेरिका, ग्रीनलैंड इत्यादि की भाषाएं शामिल हैं। इस परिवार की प्रमुख भाषाओं में एस्किमो (ग्रीनलैंड), अथबस्कन (कनाडा और सं. रा. अमेरिका), नहुअव्ल (मैक्सिको), करीब, चेरोकी (पनामा के पूर्व में), गुआर्नी अरबक, क्वाचुआ, नुत्का इत्यादि शामिल है।

भारतीय भाषाएं

प्रसिद्ध भाषाविद ग्रियर्सन के अनुसार भारत में भाषाओं की संख्या 179 और बोलियों की संख्या 544 है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार देश में कुल भाषाओं की संख्या 418 है, जिनमें 407 जीवित भाषाएं हैं जबकि 11 लुप्त हो चुकी हैं।

देवनागरी लिपि में हिंदी भारतीय संघ की भाषा है जबकि विभिन्न प्रदेशों की अपनी–अपनी सरकारी भाषाएं हैं। अंग्रेजी भारतीय संघ की दूसरी राजभाषा है। अंग्रेजी का प्रयोग केंद्र सरकार गैर–हिंदी भाषी राज्यों के साथ संवाद स्थापित करने में करती है। अंग्रेजी नागालैंड और मेघालय की राजभाषा है। भारत के संविधान में 22 भाषाओं को आधिकारिक भाषा का दर्जा दिया गया है जो पूरे देश में बोली जाती हैं।

भाषाई दृष्टिकोण से भारत में काफी विविधता है। भारतीय भाषाओं का उद्भव व विकास अलग–अलग तरीके से हुआ है और वे भारतीय के विभिन्न जातीय समूहों से संबंधित हैं। भारत में सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा हिंदी है। देश की कुल जनसंख्या का 73 फीसदी भारोपीय परिवार की, 25 फीसदी द्रविड़ परिवार की, 1.3 फीसदी आस्ट्रिक परिवार की तथा मात्र 0.7 फीसदी भाग चीनी–तिब्बत परिवार की भाषाएं बोलता है।

भारतीय भाषाओं को मुख्य रूप से चार परिवारों में वर्गीकृत किया जाता है–

इंडो–यूरोपीय या भारोपीय परिवार

द्रविड़ परिवार

आस्ट्रिक परिवार व

चीनी–तिब्बती परिवार।

ISSN No. : 0970-9398

भारोपीय और द्रविड़ परिवार देश के प्रमुख भाषा परिवार हैं।

भारोपीय परिवार

यह भारतीय भाषाओं में सबसे महत्वपूर्ण भाषा परिवार है और देश की प्रमुख भाषाएं हिंदी, बंगाली, मराठी, गुजराती, पंजाबी, सिंधी, असमी, उडिया, कश्मीरी, उर्दू, मैथिली और संस्कृत इसमें शामिल हैं।

द्रविड़ परिवार

यह देश का दूसरा सबसे महत्वपूर्ण भाषा परिवार है जिसमें दक्षिण भारत में बोली जाने वाली लगभग सभी भाषाएं शामिल हैं। द्रविड़ भाषाएं काफी प्राचीन हैं। इस भाषा परिवार की भाषाओं का देश के बाहर की भाषाओं से कोई संबंध नहीं है। रूसी भाषाशास्त्री एस. एस. एंद्रोनोव के अनुसार प्रोटो–द्रविड़ से 21 द्रविड़ भाषाओं की उत्पत्ति हुई। इस भाषा परिवार को तीन भागों– दक्षिणी द्रविड़ वर्ग, मध्य द्रविड़ वर्ग व उत्तरी द्रविड़ वर्ग में विभाजित किया जाता है। इस परिवार की सात मुख्य भाषाएं– कन्नड़, तमिल, मलयालम, तुलु, कोडागू, तोडा और कोटा हैं।

चीनी–तिब्बत परिवार

इस भाषा परिवार को बोलने वाले उत्तरी बिहार, उत्तरी बंगाल और असम में पाये जाते हैं। इन भाषाओं को भारोपीय परिवार की भाषाओं से अधिक पुराना माना जाता है और इनको बोलने वालों को प्राचीन संस्कृत ग्रंथों में किरात के नाम से जाना जाता था।

इस समूह की भाषाओं को तीन शाखाओं में विभाजित किया जाता है–

(1) तिब्बती हिमालय,

(2) उत्तरी असम तथा

(3) असमी–म्यांमारी।

तिब्बती–हिमालयी भाषाओं को दो वर्गों में विभाजित किया गया है–

(1) भोटिया वर्ग तथा

(2) हिमालय वर्ग।

भोटिया वर्ग की भाषाओं में तिब्बती, बाल्ती, लद्दाखी, लाहूली, शेरपा, सिक्किमी–भोटिया आदि भाषाएं शामिल हैं। हिमालय वर्ग में चम्बा, लाहौली, किन्नौरी और लेप्चा भाषाएं आती हैं। उत्तरी असमी वर्ग में 6 बोलियां शामिल हैं– अका, डफला, मिरी, अबोर, मिश्मी तथा मिशिंग। असमी–म्यांमारी वर्ग की भाषाओं को पांच उपवर्गों में विभाजित किया जाता है– बोडो, नागा, कचिन, कुकिचिन और म्यांमारी–बर्मी।

ऑस्ट्रिक परिवार

ऑस्ट्रिक भाषा परिवार का विकास भूमध्य सागर से आये हुए निवासियों द्वारा हुआ। ऑस्ट्रिक भाषाएं मध्य और पूर्वी भारत के पहाड़ी व वन इलाकों में बोली जाती हैं। ये काफी प्राचीन भाषाएं हैं और इनको बोलने वालों को प्राचीन संस्कृत ग्रंथों में निषाद कहा जाता था। इस भाषा परिवार की सबसे महत्वपूर्ण भाषा संथाली है जिसे लगभग 50 लाख संथाल बोलते हैं। मुंडा जनजाति द्वारा बोली जाने वाली मुंदरी दूसरी सबसे महत्वपूर्ण भाषा है।

अन्य भाषाएं

गोंडी, ओरांव, मल–पहाडिया, खोंड और पारजी जैसी कुछ आदिवासी भाषाएं हैं जो अपने–आप में अनूठी हैं और इन्हें किसी भाषा परिवार के अंतर्गत नहीं रखा जा सकता है।

निष्कर्ष

सांस्कृतिक समृद्धि और ज्ञान को बनाए रखने के लिए भाषाई विविधता को संरक्षित करना महत्वपूर्ण है। वीडियोटेप, ऑडियोटेप और लिखित रिकॉर्ड के माध्यम से लुप्तप्राय भाषाओं, जैसे कि लिंग्विस्टिक सोसाइटी ऑफ अमेरिका द्वारा दस्तावेजीकरण के प्रयासों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए और अन्य संस्थानों द्वारा इसे दोहराया जाना चाहिए। यह जरूरी है कि दुनिया भाषाओं और उनकी प्रतिनिधित्व करने वाली सांस्कृतिक विरासत के लुप्त होने को रोकने के लिए कदम उठाए। ऐसा करके, हम भावी पीढ़ियों के लिए अधिक विविध और सांस्कृतिक रूप से समृद्ध वैश्विक समुदाय सुनिश्चित कर सकते हैं।

–बैंक फार्मासिस्ट
भारतीय स्टेट बैंक,
रोहतक (हरियाणा)

ISSN No. : 0970-9398

प्रेमचंद की पत्रकारिता और 'हंस' के योगदान की पड़ताल

–प्रो. वीरेन्द्र सिंह यादव

कथा सम्राट मुंशी प्रेमचंद ने साहित्यकार के महान उत्तरदायित्व को समझा और यथाशक्ति उसका अपने लेखन में निर्वाह भी किया। प्रेमचंद के अनुसार साहित्य संसार के उज्जवल से उज्जवल रत्न की सृष्टि किसी संग्राम काल में होती है या किसी संग्राम से संबंध रखती है। एक लेखक के रूप में प्रेमचंद जी ने घोषणा की कि "जिस साहित्य से हमारी सुरुचि न जागे, आध्यात्मिक और मानसिक तृप्ति ना मिले, हममें शक्ति और गति पैदा न हो, हमारा सौंदर्य–प्रेम न जागृत हो, जो हममें सच्चा संकल्प और कठिनाइयों पर विजय पाने की सच्ची दरिद्रता ना उत्पन्न करे, वह आज हमारे लिए बेकार है। वह साहित्य कहलाने का अधिकारी नहीं है। प्रेमचंद ने यथार्थवादी साहित्य का सृजन किया है। प्रेमचंद का अधिकतर साहित्य गद्य का है और इस गद्य साहित्य में उनके पत्रों का महत्व भी निर्विवाद है। प्रेमचन्द जी के अनेक महत्त्वपूर्ण पत्रों का संपादन करके श्री अमृत राय और मदन गोपाल ने हिंदी की बहुत बड़ी सेवा की है। इन पत्रों के आधार पर प्रेमचंद के जीवन–संघर्ष और उनके समय की साहित्यिक गतिविधियों को भली–भाँति समझा जा सकता है। प्रेमचंद एक सफल अनुवादक भी थे, तथा पत्रकारिता के क्षेत्र में भी प्रेमचंद ने एक कीर्तिमान स्थापित किया था। अमृत राय ने 'हंस' की पुरानी फाइलों में प्रेमचंद की दबी हुई सामग्रियों को श्रमपूर्वक संकलित करके उसका परिवर्धित संस्करण 'साहित्य का उद्देश्य' नाम से प्रकाशित किया है। जोड़ी हुई नवीन सामग्री विविध साहित्यिक प्रश्नों, विवादों एवं समस्याओं के संबंध में समय–समय पर प्रेमचंद द्वारा लिखी गई संपादकीय टिप्पणियों का संग्रह है। 'प्रेमचंद विविध प्रसंग' के दूसरे और तीसरे खण्डों में अमृत राय जी ने 'माधुरी', 'चाँद, 'मर्यादा', 'हंस', 'जागरण', 'स्वदेश' आदि पत्रों में प्रकाशित प्रेमचंद के साहित्य को संग्रहित किया है। इस संग्रह को पढ़कर हर किसी की आंखें खुली की खुली रह जाती हैं। प्रेमचंद ने अपने छोटे से जीवन में जितना कुछ देखा, सुना और पढ़ा लिखा था, वह सब इस सृजन के माध्यम से पाठक के समक्ष उजागर हो जाता है। प्रेमचंद ने साहित्य के अतिरिक्त, सभ्यता, संस्कृति, कला आदि विषयों पर भी बहुत कुछ लिखा है। देश–विदेश की राजनीतिक गतिविधियों पर भी प्रेमचंद ने सुलझे हुए सारगर्भित विचार व्यक्त किए हैं। इन सभी रचनाओं में से यदि उनके साहित्य के दायरे में आने वाली रचनाओं को ही देखें तो साहित्य की कोई ऐसी महत्वपूर्ण समस्या नहीं है, जिस पर प्रेमचंद ने विचार ने व्यक्त किए हों। प्रेमचंद ने साहित्य के स्वरूप और उद्देश्य तथा कहानी और उपन्यास के कलात्मक–संगठन के संबंध में ही नहीं अपितु भाषा और लिपि के संबंध में भी अपने विचार व्यक्त किए हैं। "प्रेमचंद कथा साहित्य के क्षेत्र में हिंदी के युग प्रवर्तक लेखक माने जाते हैं। प्रेमचंद ने जीवन संग्राम में सौंदर्य के दर्शन कर सुप्त जन चेतना को जगा दिया है।"[1]

मार्च सन् 1930 ई. में बनारस से प्रेमचंद के संपादन में 'हंस' का प्रकाशन हुआ। कुछ विद्वानों का मानना है कि प्रेमचंद की 'हंस' पत्रिका का नामकरण प्रसाद ने किया था। पुरानी परंपराओं को तोड़कर नई स्थापना करते हुए 'हंस' तत्कालीन समय के साहित्य को एक नई दिशा प्रदान करने का प्रयास करता रहा। जिस समय 'हंस' का जन्म हुआ वास्तव में वह युग अनेक दृष्टियों से हिंदी साहित्य और भारतीय जनजीवन में क्रांति निर्माण का युग था। देश की पराधीनता भी विच्छिन्न करने के लिए सारा भारतीय समाज करवट पर करवट ले रहा था। भारत में चारों दिशाओं से नवीन युग के आवाहन का संदेश गूंज रहा था और इस क्रांतिकारी आवाहन से जागृत भारतीय जनता की आत्मा में मुक्ति आंदोलन का शुभारंभ हो रहा था। ऐसी ही परिस्थितयों में इस समय मिट्टी का दीप प्रगतिशील हाथों में लेकर जन क्रांति का साहित्य देने के निमित्त 'हंस' का जन्म हुआ। 'हंस' भी स्वाधीनता के सदुद्देश्य से प्रेरित था। हंस के प्रथम अंक में 'हंस वाणी' के अंतर्गत प्रेमचंद ने लिखा था कि "हंस के लिए यह परम सौभाग्य की बात है कि उसका जन्म ऐसे शुभ अवसर पर हुआ है, जब भारत में एक नए युग का आगमन हो रहा है। जब भारत पराधीनता

ISSN No. : 0970-9398

की बेड़ियों से निकलने के लिए तड़पने लगा है।"[2] 'हंस' की प्रथम संपादकीय टिप्पणी में महात्मा गाँधी को देश का कर्णधार मानते हुए प्रेमचंद ने 'हंस' के प्रकाशन के उद्देश्य का संकेत दिया है कि "स्वाधीनता केवल मन की वृत्ति है। इस वृत्ति का जागना ही स्वाधीन हो जाना है। अब तक इस विचार ने जन्म ही ना लिया था। हमारी चेतना इतनी मंद, शिथिल और निर्जीव हो गई थी कि उसमें ऐसी कल्पना का आविर्भाव ही नहीं हो सकता था। पर भारत के कर्णधार महात्मा गांधी ने इस विचार की सृष्टि कर दी.... इस संग्राम में भी एक दिन हम विजयी होंगे। वह दिन देर में आएगा या जल्द, यह हमारे पराक्रम, बुद्धि और साहस पर निर्भर है। हाँ, हमारा यह धर्म है कि उस दिन को जल्द से जल्द लाने के लिए तपस्या करते रहें। यही 'हंस' का ध्येय होगा और इसी ध्येय के अनुसार उसकी नीति होगी।... हंस भी मानसरोवर की शांति छोड़कर अपनी नन्ही सी चोंच में चुटकी भर मिट्टी लिए हुए समुद्र पाटने–आजादी की जंग में योग देने चला है।"[3]

एक सफल साहित्यकार के रूप में प्रेमचन्द पत्रकारिता में भी हाथ आजमाते हैं। प्रेमचन्द ने 'माधुरी' पत्रिका से पत्रकारिता का अनुभव प्राप्त कर लिया। प्रेमचंद की एक और आकांक्षा थी जिसका संकेत श्रीराम शर्मा को लिखे अपने पत्र में उन्होंने जाहिर किया था कि–"मेरी बड़ी से बड़ी आकांक्षा है–देहात में बैठकर शांति से जीवन बितायूँ। आप जानते हैं मैं स्वयं देहाती हूँ और मैंने अपनी कृतियों के माध्यम से मैंने अपने देहाती भाइयों के ऋण को उतारने का प्रयत्न किया है। 'हंस' के निकालने का यही उद्देश्य रहा है–देहात में रहना, कुछ साहित्य–सेवा संपादन–कार्य और देहातियों से मिलजुल कर बैठना।" हालांकि बाद में प्रेमचंद की यह साध पूरी ना हो सकी। प्रेस की तरह 'हंस' भी घाटे का सौदा सिद्ध हुआ। लगातार घाटे पर घाटा झेलते प्रेमचंद 'हंस' को जिलाए जा रहे थे। 'हंस' की अस्तित्व रक्षा के लिए प्रेमचंद 'जागरण' से जुड़े। इतना सब असफल होने बाद भी प्रेमचन्द स्वभाव से स्वाभिमान से कोई समझौता नहीं करते थे, इसलिए मित्रों के व्यावहारिक सुझाव प्रेमचंद को मान्य नहीं थे। कहानीकार सुदर्शन की आत्मीय सलाह के जवाब में प्रेमचंद ने कहा था कि "भाई जान सिर्फ रुपया कमाना ही आदमी का उद्देश्य नहीं है। मनुष्यता को ऊपर उठाना और मनुष्य के मन में ऊँचा विचार पैदा करना भी उसका कर्तव्य है। अगर यह नहीं है तो आदमी और पशु दोनों बराबर हैं, और जिसके हाथ में भगवान ने कलम और कलम में तासीर दी है, उसका कर्तव्य तो और बढ़ जाता है।"[4]

साहित्य में जमीनी और जुनूनी तौर पर जुड़े रहने के कारण प्रेमचन्द लगातार आर्थिक तौर पर संघर्षरत रहे। और इस प्रकार संतान समान प्रिय अपनी पत्रिका 'हंस' को जीवित और गत्तवर रखने के लिए प्रेमचंद को अनेक भूमिकाओं पर उतरना पड़ा, नाना समस्याओं से घिरना पड़ा। उस समय की प्रेमचन्द की मनोदशा उनके व्यक्तिगत पत्रों में दिखाई पड़ती है। "प्रतिकूल परिस्थितियों की कठोर मार को झेलते, खींझते और अपने मिशन के लिए जूझते प्रेमचंद की उस समय की मनोदशा पराजय का भ्रम पैदा करती है, मगर सजग दृष्टि से देखने पर वहाँ आस्था की रोशनी का साक्षात्कार होता है, जो नई साहित्य–पीढ़ी के लिए प्रेरणा और शक्ति का अप्रतिम आधार है।"[5]

व्यक्तिगत जीवन में प्रेमचंद जी ने गृहस्थ की लाचारी को समझते हुए भी अनेक जोखिम उठाए। जिसे प्रेमचन्द स्वयं अपनी हिमाकत मानते थे। 'हंस' का प्रकाशन बकौल प्रेमचंद एक ऐसी ही हिमाकत थी। 12 फरवरी सन् 1930 ई0 को प्रेमचन्द ने अपने अंतरंग मित्र जमाना–संपादक दया नारायण निगम को लिखा था कि "मैं फागुन यानी नए साल से एक हिंदी रिसाला 'हंस' निकालने जा रहा हूँ।... है तो हिमाकत ही दर्देसर बहुत और नफा कुछ नहीं, लेकिन हिमाकत करने को जी चाहता है। जिंदगी हिमाकतों में गुजर गई, एक और सही। ना पहले कभी कामयाबी की सूरत देखी और ना अब देखने की उम्मीद है।"[6] ऐसी संघर्षरत परिस्थितियों के बीच मार्च सन् 1930 ई० में 'हंस' के रूप में एक उदार साहित्य–मंच का उदय हुआ था।

अपने समय की राजनीति के प्रति जागरूक रहना और राजनीति के आदेश–निर्देश पर आंख मूंदकर चलना तो स्वतंत्र स्थितियाँ हैं। महान कथा शिल्पी प्रेमचंद अपने समय के प्रति सचेत थे, किंतु ऊंचे से ऊंचे राजनीतिक या दूसरे किसी भी प्रकार के सिद्धांत का अनुकरण और उसके विजातीय प्रभाव का अपनी रचना में आरोपण प्रेमचन्द को पराजय की पीड़ा से भी अधिक पीड़क लगता था। अपनी राजनीतिक टिप्पणियों में प्रेमचन्द

अपने समय के सबसे प्रभावशाली राजनेता महात्मा गाँधी के लोक–मंगल मूलक कार्य, व्यापार की साम्राज्यशाही के प्रति गाँधी जी की युयुत्सु–चेतना का और उनके नेतृत्व में चलने वाले राष्ट्रीय स्वातंत्र्यता–संग्राम का समर्थन करते दिखाई पड़ते हैं। किंतु हर विषय पर प्रेमचन्द की अपनी स्वतंत्र दृष्टि थी, कृति लेखक और जागरूक पत्र संपादक के रूप में वे स्वयं लोकनायक की भूमिका में सक्रिय थे। 'हंस' ने अल्प काल में जो वैचारिक–साहित्यिक भूमिका प्रस्तुत की वह पत्रकारिता संबंधी प्रेमचंद के ऐतिहासिक योगदान का प्रत्यक्ष प्रमाण कहा जाएगा। 'हंस' के अंकों में प्रेमचंद का जातीय संस्कृति के प्रति रुझान, साहित्य की महत्ता की सही समझ, अग्रज पीढ़ी की महत्वाकांक्षा के प्रति उदार विवेक तथा उनकी पुष्ट परिवेश समझ का संकेत है। अपने समय की राजनीति, अर्थनीति और समाज नीति की नब्ज के अचूक पारखी प्रेमचंद ने 'हंस' के संपादकीय पृष्ठ पर साहित्येत्तर विषयों को उपजीव्य बनाकर तल्ख टिप्पणियाँ जरूर लिखीं किंतु अपनी साहित्यिक पत्रिका को सीमित अर्थों में कभी भी राजनीतिक प्रयोजन का साधन नहीं बनाया। प्रेमचंद जी ने 'हंस' के विशेषांक साहित्य–संस्कृति से इतर विषय को लेकर नहीं निकाले। उन्हें साहित्येत्तर विषय की निश्चित दूरी का उचित विवेक था। हकीकत में प्रेमचन्द की पत्रकारिता और कथा–साहित्य में यह विवेक कहीं कमजोर नहीं दिखाई पड़ता।"[7]

न केवल प्रेमचन्द युग हिंदी पत्रकारिता के क्षेत्र में यह पत्रिकाओं का ही उत्थान काल नहीं था, बल्कि दैनिक प्रेस भी प्रेमचंद काल में अपने उत्कर्ष पर था। प्रेमचंद युगीन पत्रिकाओं में यथार्थवादी जीवन दृष्टि पनपने लगी, साहित्य के सामाजिक उद्देश्य को व्यापक स्वीकृति मिलने लगी। इसलिए युगीन रचनाकारों की साधना जीवन को ही केंद्र बनकर चलती रही। पत्रिकाओं में संपादकों के जीवन दर्शन ही स्पष्ट झलकने लगे। प्रेमचंद युगीन पत्रिकाएँ मुख्य पृष्ठ पर ही अपना उद्देश्य भी स्पष्ट रूप से दर्शाती रहीं। इस काल का सर्वप्रमुख दैनिक पत्र 'आज' सन् 1920 ईस्वी में प्रकाशित होने लगा था। इस पत्र में समाचारों के अलावा भाषा एवं साहित्य को भी पर्याप्त स्थान प्राप्त हुआ है। पांडे बेचन शर्मा उग्र की पहली कहानी चिनगारियाँ 'आज' में प्रकाशित हुई थीं।"[8] साहित्यिक पत्रकारिता के क्षेत्र में 'हंस' के विशेषांक एवं पुस्तक समीक्षा स्तंभ क्रांतिकारी परिवर्तन लाने का कार्य करते रहे। प्रेमचंद जी ने हंस की पुस्तक समीक्षा स्तंभ का नाम 'नीरक्षीर' रखा था, जिसे बाद की सभी पत्रिकाओं ने आत्मसात कर लिया था। 'नीरक्षीर' के अंतर्गत "प्रेमचंद जी ने सैंकड़ों नये प्रकाशित ग्रंथों की आलोचना की और हिंदी के अनेक प्रतिष्ठित समीक्षकों से कई पुस्तकों में पत्रिकाओं की समीक्षा करवा कर प्रकाशित की। इस स्तंभ में प्रेमचंद ने कई प्रकार की आलोचनाएं कीं।"[9]

साहित्यिक पत्रकारिता में जहाँ तक प्रेमचन्द के योगदान की बात है तो इसमें 'हंस' के अनेक विशेषांक प्रकाशित होते रहे, जिसमें आत्मकथांक, काशी अंक, द्विवेदी अभिनंदनांक, कहानी विशेषाँक कार्य ऐतिहासिक महत्व की जानकारी देने वाली सामग्रियों से परिपूर्ण हैं।'आत्मकथांक' का प्रकाशन सन् 1932 ई0 के जनवरी–फरवरी अंक में हुआ था। "उस युग में आत्मकथांक की सर्वत्र प्रशंसा हुई। आत्मकथा जैसे मौलिक विषय पर विशेषांक निकालने के बारे में सोचना प्रेमचंद की दूरदर्शिता का द्योतक था। 'आत्मकथांक' में हिंदी चेतना को झंकृति देने वाले कवियों और साहित्यकारों ने अंतरंग और बहिरंग सामग्रियां प्रस्तुत की हैं। इस विशेषांक के पूर्व हिंदी आत्मकथा के क्षेत्र में सामूहिक रूप से इतना बड़ा प्रयत्न कभी नहीं किया गया था। इस संदर्भ में 'हंस' के इस विशेषांक पर हिंदी की साहित्यिक पत्रकारिता की नियामक पत्रिका 'सरस्वती' की भी सम्मति देखना अतियुक्तिपूर्ण न होगा।"[10]

प्रेमचन्द समय और समाज की नब्ज को गहराई से पहचानते थे, इसलिए 'हंस' मुख्यतः तत्कालीन हिंदी कथा साहित्य का प्रतिनिधि पत्र हो गया, किंतु इसका अर्थ यह नहीं की 'हंस' में कविता, एकांकी, आलोचना, निबंध आदि साहित्य रूपों का अभाव था। साहित्य के विविध रूपों का सामंजस्य 'हंस' में रहता था। 'हंस' के द्वारा प्रेमचंद ने हिंदी कथा साहित्य को बहुत ऊँचे धरातल पर पहुँचा दिया। दर्जनों कहानी, लेखकों को प्रेमचन्द ने विचारों में सामंजस्य न होने के वाबजूद उन्हें साहित्य–सर्जना के लिए प्रोत्साहित किया। 'हंस', बहुत जल्द ही विविध भारतीय भाषाओं की श्रेष्ठ रचनाओं का प्रतिनिधित्व पत्र बन गया। सन् 1936 ई० में प्रेमचंद की अध्यक्षता में प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना हुई। स्वभावतः 'हंस' पर प्रगतिशील विचारधारा का प्रभाव

पड़ा। बाबू विष्णु पराड़कर ने 'हंस' के माध्यम से प्रेमचंद द्वारा दिए गए साहित्यिक अवदान की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि "प्रेमचंद ने हिंदी साहित्य को जनता का साहित्य बना दिया। प्रेमचंद के पात्र जनवर्ग के प्रतिबिंब हैं। प्रेमचंद के विचार वर्गों को उठाने और मिलाने के भगीरथ प्रयत्न के द्योतक हैं। प्रेमचंद स्वयं जनता के प्रतीक हैं। उनका यह उज्जवल प्रतीक तब तक रहेगा, जब तक हिंदी रहेगी और उसके बोलने वाले रहेंगे। प्रेमचंद ने मुक्त रूप से राष्ट्र की समस्याओं को देखा–जाना, परखा और अपने विवेक से उसका समाधान प्रस्तुत किया। प्रेमचंद स्वराज और जनकल्याण के लिए प्रतिबद्ध थे।" कई बार 'हंस' पर प्रतिबंध लगाए गए, सेठ गोविंद दास के नाटक, विचार स्वातंत्रय के प्रकाशन के कारण अंग्रेज सरकार ने एक हजार की जमानत मांगी है। लेकिन विपरीत आर्थिक परिस्थितियों के वाबजूद प्रेमचन्द ने अर्थ दंड चुकता कर 'हंस' के प्रकाशन की निरंतरता को कायम रखा। बहरहाल, प्रेमचंद के बाद शिवरानी देवी, पराड़कर, जैनेन्द्र कुमार, शिवदान सिंह चौहान, श्रीपत राय, अमृतराय और नरोत्तम नागर 'हंस' के संपादक बने। "सन 1942 ई0 के आंदोलन के दौरान कठोर सरकारी प्रतिबंधों की अवज्ञा करने के लिए 'हंस' ने अपना फैसला सुनाया–"देश की प्रत्येक संस्था, संगठन और व्यक्ति की यह आवाज होनी चाहिए कि कांग्रेस को कानूनी घोषित किया जाए, राष्ट्रीय नेताओं और दूसरे सभी देश–भक्तों को रिहा किया जाए, जापान से लड़ने के लिए जनता को संगठित करने हेतु तुरंत राष्ट्रीय सरकार का निर्माण किया जाए। मजदूर, किसान, विद्यार्थी और नगर की जनता अपनी मांगों के आधार पर, संगठन बनाकर–इन नारों को देश के कोने–कोने में गुंजा दें। अपने संगठित प्रदर्शनों, सभाओं और आंदोलनों द्वारा नौकरशाही ही को दमन करने से रोकें।"[11]

निष्कर्ष रूप में यह कहना उचित होगा कि प्रेमचंद युग में दिखाई पड़ने वाली साहित्यिक पत्रकारिता का स्वरूप समय सापेक्ष होता हुआ कई आयामों से जुड़कर परिवर्तित होता रहा। जिस साहित्यिक भाषा और जिस रचना शैली का विधान आज हो रहा है, उसके पीछे सैकड़ों वर्षों की प्रयत्नशीलता और वैचारिक बिंदुओं में आने वाले परिवर्तन काम करते रहे हैं। प्रेमचंद से लेकर स्वतंत्रता पूर्व और स्वतंत्रता युग तक जो रचनाधार्मिता और संपादकीय कर्मशीलता प्रवृत्तिमान रही है इससे साहित्यिक पत्रकारिता को बढ़ावा तो मिला ही है साथ ही मानक भाषा की तलाश और नई प्रयोगधर्मिता को काफी आहत भी किया है। "प्रेमचंद की जनभाषा परिणाम स्वरूप उनके सृजन से ओझल हो गई और ऐसी भाषा शैली का प्रणयन होने लगा जो प्रेमचन्द के लेखन के स्वरूप के ही खिलाफ था। फिलहाल इन सब कमियों और खामियों के बावजूद साहित्यिक पत्रकारिता अपनी नई रूपरेखा की तलाश में सफलता हासिल करती है।"[12]

–प्रोफेसर–हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग
डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय,
लखनऊ

संदर्भ–

1. साहित्यिक पत्रकारिता और विशाल भारत, पूनम सिंह, सम्यक बुक्स, नई दिल्ली–संस्करण 2017, पृष्ठ संख्या–147–48
2. हंस' प्रथम अंक 1930– पृष्ठ संख्या 63–68
3. पत्रकारिता–इतिहास और प्रश्न–कृष्ण बिहारी मिश्र, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 81
4. कलम का मजदूर–प्रेमचंद–पृष्ठ संख्या 265
5. पत्रकारिता–इतिहास और प्रश्न–कृष्ण बिहारी मिश्र, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 74
6. शिवपूजन रचनावली, चौथा खंड–पृष्ठ संख्या 216
7. पत्रकारिता–इतिहास और प्रश्न–कृष्ण बिहारी मिश्र, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 82
8. साहित्यिक पत्रकारिता का योगदान, आर जयचंद्रन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ संख्या 52
9. साहित्यिक पत्रकारिता का योगदान, आर.जयचंद्रन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ संख्या 56
10. साहित्यिक पत्रकारिता का योगदान, आर जयचंद्रन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ संख्या 57
11. हंस, अगस्त 1942
12. साहित्यिक पत्रकारिता का योगदान, आर जयचंद्रन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ संख्या 69

ISSN No. : 0970-9398

देश में प्रचलित विविध भाषाएँ एवं बोलियाँ और उनके समक्ष चुनौतियाँ

–डॉ. विमलेश शर्मा

भाषा जीवमात्र की मनसा, वाचा अभिव्यक्ति का एकमेव सशक्त माध्यम है। यह अभिव्यक्ति व्यक्त व अव्यक्त भाषा दो प्रकारों से संभव होती है। अभिव्यक्ति जब हाव–भाव और शारीरिक संचालन द्वारा प्रकट होती है तो उसे अमूर्त भाषा कहा गया और जब वही शाब्दिक रूप से अभिव्यक्त होने लगी तो उसे मूर्त या व्यक्त भाषा कहा गया। भाषा की उत्पत्ति का इतिहास उतना ही पुराना है जितना मनुष्य की उत्पत्ति का इतिहास है। वैश्विक स्तर पर मनुष्य का इतिहास और वर्तमान भौगोलिक सीमान्तों में आबद्ध रहा है परन्तु भाषाओं का इतिहास सीमाबद्ध होते हुए भी सीमातीत है। इसके पीछे राजनैतिक प्रभाव, वर्चस्व की नीति, आक्रमण और विस्थापन अनेक कारण रहे हैं।

संसार में अनेक भाषाएँ व्यवहृत हैं। यद्यपि इन भाषाओं का यथातथ्य आकलन एक दुष्कर कार्य है तथापि भाषाविदों ने विश्व में 6000 से अधिक भाषाओं के अस्तित्व की कल्पना की है। इन भाषाओं के अध्ययन को धर्म, जाति, क्षेत्र, महाद्वीप की दृष्टि से वर्गीकृत करने का प्रयास किया गया। जिसके लिए दो पद्धतियों को भाषा–वैज्ञानिकों ने मान्यता प्रदान की– 1. आकृतिमूलत और 2. पारिवारिक। भाषाओं की आकृति और स्वरूप बदलते रहने के कारण आकृतिमूलक वर्गीकरण मान्य नहीं हुआ और आंतरिक संरचना और भाषाओं के इतिहास के आधार पर आधारित पारिवारिक वर्गीकरण स्वीकार्य हुआ जिसके आधार पर ही भाषा का अध्ययन, सर्वेक्षण और उसकी उत्पत्ति के संदर्भों के बारे में निरन्तर शोध किए जा रहे हैं। भारतीय भाषाओं के अध्ययन से पूर्व उन्हें वैश्विक परिप्रेक्ष्य में देखना आवश्यक है।

संसार की समस्त भाषाओं को पारिवारिक वर्गीकरण के आधार पर चार भाषा खण्डों में बाँटा गया है–

1. यूरेशिया खण्ड– इसमें यूरोप एवं एशिया के भाषा परिवार यथा– भारोपीय परिवार (भारत और यूरोप), द्रविड़, बुरुशस्की परिवार, यूराल अल्ताई परिवार, काकेशी परिवार, चीनी तिब्बती परिवार, जापानी कोरियाई परिवार, हाइपरबोरी अल्युत्तरी परिवार, बास्क परिवार, सामी हामी परिवार शामिल हैं।
2. अफ्रीका खण्ड– इसमें चार प्रमुख भाषा–परिवार समावेशित हैं–बुशमैन, बौंटू, सूडान और हेमेटिक–सेमिटिक।
3. प्रशान्त महानगरीय–खण्ड–इसके अन्तर्गत मुख्यतः मलय बहुद्वीपीय परिवार, पापुई परिवार, आस्ट्रेलियाई या आस्ट्रो एशियाटिक परिवार तथा दक्षिणपूर्व एशियाई परिवार शामिल हैं।
4. अमरीकी खण्ड–अमरीका के भाषा–परिवार की भाषाओं के लगभग सौ परिवार स्वीकार किए गए हैं।

उक्त वर्गीकरण से विदित होता है कि कुछ भाषा–परिवार दो–दो भाषा–खण्डों में समावेशित हैं। यह अन्तर्सम्बन्ध भाषा की प्रकृति और एकरूपता के आधार पर है। इस वर्गीकरण की सहमति और असहमति के संदर्भ में भाषाविदों के अलग–अलग मत हैं तथापि वर्तमान में भाषायी वर्गीकरण हेतु 13 भाषा–परिवार सर्व–स्वीकृत हैं–

1. भारोपीय 2. द्रविड़ 3. चीनी 4. सेमेटिक–हेमेटिक 5.यूराल–अल्टाइक 6.काकेशियन 7. जापानी–कोरियाई 8.मलय–पोलेशियन 9. ऑस्ट्रो–एशियाटिक 10. बुशमैन 11. बाँटू 12. सूडान और 13. अमेरिकी।

भारतीय भाषाओं के संदर्भ में हम भारोपीय परिवार पर बात करेंगे जिसे कुछ विद्वान भारत–हिट्टाइट परिवार भी कहते हैं। सभ्यता, संस्कृति, वैचारिकी की दृष्टि से यह भाषा–परिवार अत्यन्त महनीय है। इस परिवार में जनसंख्या की व्यापकता, साहित्यिक समृद्धता, वैज्ञानिक प्रगति, राजनैतिक प्रभुत्व और प्राचीनता के आधार पर

अनेक महत्त्वपूर्ण भाषाओं का संकुल समावेशित है। संस्कृत, अंग्रेजी, जर्मन, फ्रांसीसी और रूसी इनमें अग्रणी भाषाएँ हैं। भाषा–विज्ञान की दृष्टि से भी यह परिवार सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। "सन् 1886 में बंगाल की रॉयल–एशियाटिक सोसाइटी के सम्मुख सर विलियम जोन्स ने पहली बार ग्रीक और लातिन से संस्कृत के घनिष्ठ संबंध की घोषणा की थी और इसी समय उन्होंने इन तीनों के एक मूल भाषा से विकसित होने की अवधारणा प्रस्तुत की थी। विलियम जोन्स के इस भाषण से ही तुलनात्मक भाषा–विज्ञान का प्रारम्भ होता है।"[1]

भारोपीय परिवार को केंतुम और सतम् दो वर्गों में विभाजित किया गया है। केंतुम वर्ग में उन परिवारों को रखा गया है, जिनमें कंठ्य ध्वनियाँ विद्यमान है तथा सतम् में उन्हें जिनमें कंठ्य ध्वनियाँ संघर्षी बन गयी हैं। भारतीय आर्यभाषा, जिसके अंतर्गत हम भारतीय आर्यभाषाओं का अध्ययन करते हैं, इसी सतम् वर्ग की भारत–ईरानी उपशाखा के भारतीय उपभाषा वर्ग में आती है।

भारतीय उपभाषा वर्ग की भाषाएँ आर्यों से सम्बद्ध हैं और आर्य उस संस्कृति से सम्बद्ध है जो भारत में प्राचीनतम है। यद्यपि आर्यों का मूल निवास विवादास्पद है। भारतीय आर्य भाषा का इतिहास आर्यों के भारत आगमन से प्रारम्भ होता है। आर्यों की भाषा संस्कृत ही रही है। इस प्रकार संस्कृत भारत की प्राचीनतम भाषा है। भारतीय आर्य–भाषा के प्रारम्भ का अनुमानित समय 1500 ई.पू. के आस–पास है। अध्ययन की दृष्टि से इस भारतीय आर्य–भाषा को तीन वर्गों में विभाजित किया गया है–

1. प्राचीन भारतीय आर्यभाषा (1500 ई.पू. से 500 ई.पू.)
2. मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा (500 ई.पू.–1000 ई.पू.)
3. आधुनिक भारतीय आर्यभाषा (1000 ई. से वर्तमान समय तक)

प्राचीन आर्य भाषा

प्राचीन भारतीय आर्यभाषा का समय ई.पू. 1500 से ई.पू. 500 तक माना गया है। इस काल में वैदिक संस्कृत का समय ई.पू.1500 से ई.पू. 800 तक तथा लौकिक संस्कृत का समय ई.पू. 799 से ई.पू. 500 तक माना गया है। आर्य भाषा का संबंध ईरान से बहुत अलग नहीं है। इसका कारण ईरान के एक हिस्से का भारत से जुड़ा होना है। आर्यभाषा का प्राचीनतम रूप वैदिक संहिताएँ हैं। वैदिक संहिताएँ अनेक ऋषियों की स्तुतियों का कालान्तर में संकलित रूप है। श्रुति परम्परा में रहने के कारण ही इनमें निरन्तर परिवर्तन हुए। यह भाषाई परिवर्तन हम वेदों में ही देख सकते हैं यथा– ऋग्वेद के मंडलों (प्रथम और नवम् मण्डल) में ही भाषा के पूर्ववर्ती और परवर्ती रूप दिखाई देते हैं। काव्यभाषा या साहित्यिक भाषा होने के कारण यह भाषा उस समय की बोल–चाल की भाषा से अलग है और व्यवस्थित है।

इसी क्रम में सूत्रग्रंथों (700 ई.पू.) में भाषा के विकसित रूप के दर्शन होते हैं। इसी भाषा के उदीच्य (पंजाब) रूप में प्रयुक्त रूप (संस्कृत के रूप से अपेक्षाकृत अधिक परिनिष्ठित एवं पंडितों में मान्य रूप) को पाँचवी शताब्दी के आस–पास नियमबद्ध किया गया जो लौकिक संस्कृत का सर्वमान्य आदर्श रूप बन गया। पाणिनी की व्याकरणिक दृष्टि से यही नियमबद्ध रचना 'अष्टाध्यायी' के नाम से प्रसिद्ध है। एक व्यवस्थित कलेवर प्रदान करने के लिए अर्वाचीन से लेकर वर्तमान तक संस्कृत भाषा पाणिनी के अवदान की ऋणी है। भाषा बहता नीर है, यही कारण है कि हर युग में बोलचाल की भाषा का प्रभाव संस्कृत में समाहित होता गया जिसकी झलक हम रामायण, महाभारत, पुराण–साहित्य और कालिदास के काव्यों में देखते हैं। लौकिक संस्कृत लोक की, जनमानस की भाषा है। लौकिक का मानकीकरण भी हुआ अतः उसमें एकरूपता है जबकि वैदिक में इसका अभाव है। अन्य व्याकरणिक भिन्नताओं के साथ ही एक महत्त्वपूर्ण तथ्य जो भाषा के विकास की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है वह यह है कि वैदिक संस्कृत में विजातीय शब्द केवल आस्ट्रिक और द्रविड़ से आए जबकि लौकिक में इनके अतिरिक्त यूनानी, रोमन, अरबी, तुर्की, ईरानी, चीनी आदि भाषाओं का समावेश भी मिलता है।

वैदिक भाषा की तीन बोलियाँ थी–पश्चिमोत्तर, मध्यदेशी तथा पूर्वी। इनसे इतर लौकिक संस्कृत की एक अन्य दक्षिणी बोली भी विकसित हुई, इस प्रकार प्राचीन आर्य भाषाकाल में चार बोलियाँ व्यवहृत हुईं–

पश्चिमोत्तर, मध्यदेशी, पूर्वी तथा दक्षिणी।

मध्यकालीन आर्य–भाषा

भाषा के प्रवाहमान रूप के कारण ही वैदिक संस्कृत से लौकिक संस्कृत अस्तित्व में आई। लौकिक संस्कृत चूँकि साहित्यिक भाषा के पद पर प्रतिष्ठित हुई, अतः जनमानस ने एक नवीन भाषा का गठन किया। सरलीकरण की प्रवृत्ति के तहत हुआ यह भाषायी परिवर्तन ई.पू. 500 के आस–पास स्पष्ट परिलक्षित होता है। यही समय मध्यकालीन आर्यभाषा काल माना जाता है। जनपदीय भाषाओं के परिवर्धन–संवर्धन ने 500 ई.पू. से 1000 ई. तक के समय को विभिन्न प्राकृतों और तत्पश्चात् अपभ्रंश के रूप में विकसित किया, जिन्हें निम्न भाषिक वर्गों में विभक्त किया जा सकता है–

1. पालि या प्रथम प्राकृत (500 ई.पू. से 200 ई. तक)
2. प्राकृत या द्वितीय प्राकृत (201 ई. से 600 ई. तक)
3. अपभ्रंश या तृतीय प्राकृत (601 ई. से 1000 ई. तक)

1. पालि या प्रथम प्राकृत – पालि या प्रथम प्राकृत के विकास एवं विश्लेषण का उल्लेख अशोक के अभिलेख एवं पालि साहित्य में देखा जाता है। साहित्यिक रूप में त्रिपिटक, अट्ठकथा, विसुद्धिभग्ग, दीपवंस एवं मिलिन्दपञ्हों जैसे ग्रंथों का प्रणयन पालि भाषा में हुआ। भारत के अतिरिक्त नेपाल, लंका, बर्मा, स्याम, चीन आदि देशों में भी बौद्ध धर्म के प्रचार के कारण पालि का भी प्रचार हुआ। पालि शब्द स्थानवाचक नहीं है अतः यह नहीं पता चलता कि पालि किस प्रदेश की बोली पर आधारित भाषा है। इस व्युत्पत्ति के संदर्भ में अनेक मत है जिनमें विधुशेखर भट्टाचार्य ने उसकी व्युत्पत्ति संस्कृत के पंक्ति शब्द से मानी है जो परिवर्तित होते–होते 'पल्लि' से 'पालि' बन गई। 'पल्लि' का अर्थ 'गाँव की भाषा' भी होता है। अशोक के शिलालेखों में भी पालि भाषा का प्रयोग हुआ है जिसे 'अभिलेखी प्राकृत' भी कहा जाता है। पालि भाषा की सम्पूर्ण सामग्री को अशोकी अभिलेख और अशोकेतर अभिलेख दो भागों में विभक्त किया गया है।

2. द्वितीय प्राकृत – पालि की प्रतिक्रिया और जनभाषाओं के बढ़ते दबाव के कारण 'द्वितीय प्राकृत' अस्तित्व में आई। द्वितीय प्राकृत में अपभ्रंश एवं तथाकथित अवहट्ट भाषा आती है। प्राकृत की व्युत्पत्ति प्रकृति से मानी गई। हेमचंद्र के अनुसार प्रकृति संस्कृत है और उससे उत्पन्न या आगत भाषा प्राकृत है। (प्रकृषिः संस्कृतम्, तत्र भवं, तत् आगतं वा प्राकृतम्। संस्कृतान्तर प्राकृतमधिक्रियते।) मार्कण्डेय भी, 'प्रकृतिः संस्कृतम् तत्रभवं प्राकृत मुच्यते' कहकर इसी मत की पुष्टि करते हैं। दशरूपककार धनिक भी, 'प्रकृतेः आगतं प्राकृतं। प्रकृतिः संस्कृतम्' कहकर इसी तथ्य को प्रतिभाषित करते हैं। इस प्रकार उक्त विद्वान् प्राकृत की उत्पत्ति संस्कृत सापेक्ष मानते हैं। इसके विपरीत नमिसाधु सकल जगत् के जन्तुओं में व्याकरण आदि संस्कारों से रहित सहज वचन व्यापार को प्रकृति कहते हैं। व्युत्पत्ति की अवधारणाओं के सापेक्ष प्राकृत के अनेक भेद–प्रभेद हैं जिनमें शौरसेनी, पैशाची, अर्धमागधी, मागधी, पैशाची, ब्राचड़, खस, टक्क और केकय प्रमुख हैं। प्राकृत का भेद–निरूपण संस्कृत नाटकों में प्राप्त प्राकृत भाषा के स्वरूप के आधार पर किया गया। भरत ने सात देशभाषाओं का उल्लेख किया है– मागधी, अवन्ती, प्राच्या, शौरसेनी, अर्धमागधी, वाह्लीका और दाक्षिणात्या परन्तु भाषा–वैज्ञानिक स्तर पर इनमें से पाँच प्रमुख भेद स्वीकरणीय हैं–शौरसेनी, पैशाची, महाराष्ट्री, अर्धमागधी और मागधी।[2]

1. शौरसेनी – यह प्राकृत शूरसेन अथवा मथुरा के आस–पास बोली जाती थी। शौरसेनी मध्यदेश की भाषा होने के कारण संस्कृत के अधिक निकट रही। संस्कृत के नाटकों के गद्यांशों में इसी का प्रयोग हुआ है। संस्कृत नाटकों में गद्यभाषा के रूप में स्त्री और विदूषक पात्रों द्वारा यह व्यवहृत हुई। 'कर्पूरमंजरी' तथा अश्वघोष के नाटकों में इसकी प्रचुरता मिलती है। दिगम्बर सम्प्रदाय के जैन ग्रंथों में भी तत्सम गर्भित शौरसेनी प्राकृत प्रयुक्त हुई है।

2. पैशाची – महाभारत में जिस 'पिशाच' जाति का उल्लेख हुआ है। उनके बोल–चाल की भाषा प्राकृत–भाषा कहलाती है। ग्रियर्सन इसका प्राचीनतम स्थान पश्चिमोत्तर पंजाब तथा अफगानिस्तान मानते हैं। कुछ भाषाविद् इसकी उत्पत्ति कैकय प्रदेश से मानते

ISSN No. : 0970-9398

हैं। चीनी, तुर्किस्तान के शिलालेखों तथा कुवलयमाला में प्राप्त रूपों के आधार पर इसे प्राकृतों में प्राचीनतम माना गया है। बाणभट्ट ने इसे 'भूतभाषा' कहा है। कुछ विद्वानों के अनुसार गुणाढ्य की वृहत्कथा (बड्डकहा) मूलतः पैशाची में लिखी गयी थी।

3. **मागधी**– संस्कृत नाटकों में निम्न श्रेणी के पात्रों द्वारा व्यवहृत यह मगध की भाषा रही है। मगध के आस–पास की भाषा होने के कारण ही इसे मागधी कहा जाता है। इसका निकटवर्ती संबंध महाराष्ट्री से जुड़ा हुआ है। अश्वघोष के नाटकों में इसके प्रचुर साक्ष्य मिलते हैं। इस भाषा में विरचित साहित्य सामग्री अत्यल्प मात्रा में उपलब्ध हुई है। प्राकृत वैयाकरणों के अनुसार 'चाण्डाली' तथा 'शावरी' मागधी की विकृतियाँ हैं और 'शाकारि' इसकी विभाषा है।

4. **अर्ध–मागधी**– यह काशी कोसल–प्रदेश की भाषा थी जिसे जैन आचार्यों ने 'आर्षी' भी कहा। जैन आचार्यों ने इसे आदि भाषा माना। अश्वघोष के नाटक 'शारिपुत्र प्रकरण 'में इसके प्रयोग का प्रमाण, संस्कृत नाटकों में इस भाषा के व्यवहार को दर्शाता है। जैन ग्रंथों में भी यह उल्लेख है कि भगवान् महावीर के उपदेशों की भाषा अर्धमागधी थी। अर्धमागधी वस्तुतः 18 देशी–भाषाओं का मिश्रण मानी गई है। बौद्धकाल में यह भाषा समूचे उत्तर–भारत की सम्पर्क भाषा थी। अर्धमागधी पूरब (मागधी) और पश्चिम (शौरसेनी) को जोड़ने का काम करती है अतः दोनों ही भाषाओं का प्रभाव भी इस पर स्पष्ट परिलक्षित होता है।

5. **महाराष्ट्री**– वैयाकरणों द्वारा आदर्श प्राकृत की संज्ञा से विभूषित महाराष्ट्री, साहित्यिक प्राकृतों में सर्वाधिक सम्पन्न है। इसका मूल निवास स्थान महाराष्ट्र प्रदेश से माना जाता है। संस्कृत नाटकों के पद्य अंश महाराष्ट्री प्राकृत में मिलते हैं। सेतुबंध तथा गड्डबहो, हाल की गाहा सत्तसई तथा वज्जालग्ग जैसी काव्यात्मक रचनाओं की भाषा महाराष्ट्री प्राकृत ही है। हिंदी के विकास में इस प्राकृत का महत्त्वपूर्ण अवदान है।

6. **केकय, टक्क, खस और ब्राचड़ अपभ्रंश**– केकय प्रदेश की प्राचीन भाषा 'केकय' कहलाती है। यह प्रदेश वर्तमान पाकिस्तान में अवस्थित है। वहाँ की लहँदा भाषा का विकास भी केकय से ही हुआ है।

पंजाब प्रदेश के एक विशेष भू–भाग में पनपी हुई प्राकृत 'टक्क' कहलाती है। इसका कुछ भू–भाग पाकिस्तान में सम्मिलित है। 'खस' प्राकृत का उल्लेख अत्यन्त कम मिलता है। डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी ने तथा कतिपय अन्य विद्वानों ने इसे मान्यता प्रदान की है। उनके अनुसार हिमाचल प्रदेश, कुमायूँ, गढ़वाल तथा नेपाल में बोली जाने वाली आधुनिक भाषाओं का विकास 'खस' प्राकृत से हुआ है। इन्हीं प्राकृतों में ब्राचड़ प्राकृत से ब्राचड़ अपभ्रंश की उत्पत्ति मानी जाती है।

3. **तृतीय प्राकृत अथवा अपभ्रंश**– आधुनिक आर्यभाषा की महत्त्वपूर्ण कड़ी अपभ्रंश शब्द का सर्वप्रथम उल्लेख पंतजलि के महाभाष्य में मिलता है। "भूयांसोअय शब्दाः अल्पीयांसः शब्दा इतिः। एकैकस्य हि शब्दस्य बहोअपभ्रंशाः, तद्यथा गोरित्यस्य शब्दस्यस गावी, गोणी, गोता, गोपोतलिके त्यादयोवहवोअपभ्रंशाः।" अर्थात् अप शब्द बहुत हैं, शब्द कम हैं। शब्द का अर्थ पाणिनीय व्याकरण से शुद्ध एवं सुसंस्कृत शब्दों से है परन्तु अपभ्रंश का अर्थ संस्कारच्युत व असाधु शब्द से है। आलोचना शास्त्र में भरत के नाट्यशास्त्र में अपभ्रंश के पहले–पहल उदाहरण मिलते हैं। भरत ने इसे **'आभीरोक्ति'** भी कहा है। छठी–सातवीं शताब्दी में भामह अपभ्रंश को संस्कृत और प्राकृत के साथ रखते हैं, यह इस बात का प्रमाण है कि संस्कृत, प्राकृत से अलग, अपभ्रंश ने इस समय तक अपनी साहित्यिक महत्ता स्थापित कर ली थी। 'संस्कृत प्राकृतं चायन्दपभ्रंश इति त्रिधा।'3 सातवीं शताब्दी में दण्डी ने आभीर विभाषा को काव्यात्मक रूप से प्रतिष्ठित करते हुए कहा– 'आभीरादिगिरः काव्येष्वपभ्रंशाः इति स्मृताः।' उद्योतन सूरी ने भी कुवलयमाला में संस्कृत के साथ–साथ अपभ्रंश को भी साहित्यिक भाषा स्वीकार किया है। नवीं शताब्दी में आचार्य रुद्रट देशभेद से इसके अनेक भेद बताते हैं, जिससे अपभ्रंश के विस्तार का पता चलता है। दशवीं शती में राजशेखर कल्पित काव्य–पुरुष का जनन अपभ्रंश को मानते हैं। ग्याहरवीं शताब्दी में प्राकृत वैयाकरण इसे शिष्ट वर्ग की भाषा बताते हैं और बारहवीं शताब्दी में हेमचन्द्र अपभ्रंश का व्याकरण लिखते हैं। इस प्रकार भिन्न–भिन्न कालों में इसे अपशब्द, विभाषा, लोक भाषा, शिष्ट और साहित्यिक भाषा के अर्थ में स्वीकार किया गया है। अपभ्रंश का महत्त्व

इसलिए भी अधिक है कि संस्कृत के पश्चात् यह दीर्घ कालावधि तक जनमानस द्वारा व्यवहृत होती रही, साहित्यिक भाषा बनी और आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं की जन्मदात्री भी बनी।

4. **अवहट्ट** –दसवीं शताब्दी में अपभ्रंश के समानान्तर जन–साधारण में लोकप्रिय और सक्रिय भाषा ने बारहवीं शताब्दी तक अपनी गरिमा प्राप्त कर अपभ्रंश को अपदस्थ करने में सफलता प्राप्त की। जनसाधारण की बोली का यही मिश्रित रूप अवहट्ट कहलाया। अपभ्रंश हेमचन्द्र के व्याकरण के साथ रूढ होकर केवल साहित्यिक भाषा रह गई। ज्योतिरीश्वर ठाकुर वर्ण–रत्नाकर में अवहट्ट को छः भाषाओं में से एक भाषा मानते हैं। इस भाषा की प्रमुख रचनाएँ हैं– संदेश रासक, प्राकृत–पैंगलम्, पुरातन प्रबन्ध–संग्रह, उक्ति–व्यक्ति प्रकरण, वर्ण–रत्नाकर, कीर्तिलता, चर्यापद तथा ज्ञानेश्वरी।

3. आधुनिक भारतीय आर्यभाषा–

अपभ्रंश से दसवीं शती के आसपास भाषिक–चेतना में स्पष्ट बदलाव परिलक्षित होता है। इसे ही संक्रमण काल या अवहट्ट काल कहा गया। संक्रमण काल में आधुनिक आर्यभाषाओं का जन्म हुआ, जिसमें हिंदी, बंगला, असमिया, उड़िया, गुजराती, सिंधी, पंजाबी, मराठी और पहाड़ी प्रमुख हैं। इन भाषाओं में अनेक विदेशी ध्वनियों का आगमन हो गया, लिपि में परिवर्तन हुआ, शब्द–रूपों और धातु–रूपों में अंतर आया। गुजराती और मराठी को छोड़कर शेष भाषाओं में दो लिंग रह गए, इस प्रकार आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ निरन्तर सरलीकरण की ओर उन्मुख हुईं।

भारतीय आर्यभाषाओं के अध्ययन, विवेचन और विश्लेषण का कार्य पाश्चात्य विद्वानों द्वारा किया गया। "विलियम जोन्स (1786) ने संस्कृत की महत्ता तो प्रतिपादित की ही, साथ ही इसी बहाने सम्पूर्ण भारत की भाषाओं का अध्ययन और हिंदी के महत्त्व को रेखांकित किया। कैरे ने भारत में 33 भाषाओं की खोज की। मुंडा भाषा की खोज का श्रेय मैक्समूलर को है। इसी कड़ी में आगे काल्डवेल आते हैं। जिन्होंने दक्षिण–भारतीय भाषाओं–तमिल, तेलुगू, मलयालम, कन्नड़ को संस्कृत से अलग द्रविड़ परिवार की भाषा सिद्ध किया। बीम्स ने 1867 में इस देश की सभी भाषाओं का विवरण प्रस्तुत किया। 1880 में डॉ. ए.एफ. हार्नले ने प्रतिपादित किया कि आर्यभाषा आर्यों के साथ बाहर से आई।"[4] हार्नले, ग्रियर्सन और सुनीति कुमार चटर्जी के वर्गीकरण के आधारस्वरूप अपभ्रंश से निम्न आधुनिक आर्य भाषाओं तथा उपभाषाओं के प्रार्दुभूत होने की कल्पना की जाती है–

1. शौरसेनी से–गुजराती (भाषा), पश्चिमी–हिंदी (उपभाषा), राजस्थानी (उपभाषा), पहाड़ी (उपभाषा)
2. अर्धमागधी से– पूर्वी हिंदी (उपभाषा)
3. मागधी से– बिहारी (उपभाषा), बंगाली (भाषा), असमी (भाषा)
4. महाराष्ट्री से– मराठी (भाषा)
5. पैशाची से– लहँदा (भाषा, कैकय अपभ्रंश से), पंजाबी (टक्क अपभ्रंश से)
6. ब्राचड़ से – (सिंधी भाषा)

इन अपभ्रंश के क्षेत्रीय रूपों से विकसित आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं, उपभाषाओं और उनकी लिपियों का संक्षिप्त परिचय निम्नानुसार है–

1. **सिंधी**– सिंधु से सिंध शब्द की व्युत्पत्ति हुई है और सिंध प्रदेश की भाषा सिंधी कहलाती है। बिचोली, सिराइकी, लारी, थारेली और कच्छी सिंधी की प्रमुख बोलियाँ हैं। सिंधी की स्वयं की कोई लिपि नहीं होने के कारण कभी वह विकृत फारसी में, कभी गुरुमुखी में तो कभी नागरी में लिखी जाती रही है।

2. **लहँदा**– लहँदा का तात्पर्य है, उतरता या ढलता हुआ। 14वीं शताब्दी में इसका साहित्य प्राप्त होता है। पंजाब के पश्चिमी क्षेत्र में बोली जाने के कारण इसका नाम लहँदा पड़ा। यह गुरुमुखी एवं फारसी लिपियों में लिखी जाती है। वर्तमान में यह देवनागरी में भी लिखी जा रही है।

3. **पंजाबी**– पाँच आब से बने क्षेत्र अर्थात् पंजाब प्रदेश की भाषा 'पंजाबी' है। इस क्षेत्र में रावी, सतलुज, व्यास, चेनाब और झेलम पाँच नदियाँ हैं। इसलिए इसे पंजाब कहते हैं। माझी, डोगरी, मालवाई, पोवाधी, राठी, भट्टियानी इसकी प्रमुख बोलियाँ हैं। 13वीं शताब्दी से पंजाबी का साहित्य प्राप्त होना प्रारम्भ होता है। पंजाबी की लिपि

गुरुमुखी है व प्रमुख बोली डोगरी की लिपि टाकरी है।

4. **मराठी**– महाराष्ट्र प्रदेश की भाषा मराठी है। इसकी मूल लिपि मोड़ी है परंतु इसका साहित्य और वर्तमान रूप देवनागरी में मिलता है।

5. **गुजराती**– गुजरात क्षेत्र में गुर्जर जाति का प्रभुत्व था, वहाँ की भाषा होने के कारण ही इसका नाम गुजराती पड़ा। गुजराती की प्रमुख उपभाषाएँ हैं– झालावाड़ी, सोरठी, गोहिलवाड़ी एवं काठियावाड़ी। गुजराती की अपनी लिपि है जो गुजराती के नाम से प्रसिद्ध है। यह लिपि कैथी एवं देवनागरी से पर्याप्त साम्य रखती है।

6. **बंगला**– मागधी प्राकृत के अपभ्रंश रूप से बंगला विकसित है। साहित्यिक दृष्टि से यह भारत की महत्त्वपूर्ण भाषा है। यह प्राचीन देवनागरी और बंगला लिपि में लिखी जाती है।

7. **असमी**– असमी या असमिया असम की भाषा है। यह मागधी प्राकृत से पूर्ण समानता रखती है। असमी की लिपि बंगला से बहुत अधिक मिलती–जुलती है।

8. **उड़िया**– उड़ीसा प्रदेश की भाषा उड़िया है। मागधी के दक्षिणी रूप से विकसित उड़िया की भी बंगला से काफी निकटता है।

9. **हिंदी**– आधुनिक आर्य भाषाओं में हिंदी का अन्यतम स्थान है। इसी हिंदी प्रदेश के भाषा–परिवार का अध्ययन कर भारत की भाषिक स्थिति की विवेचना की जा सकती है।

इनके अतिरिक्त द्रविड़ भाषाओं में तमिल, तेलुगू, कन्नड़, मलयालम, आस्ट्रो–एशियाई भाषाओं में संथाली हो तथा तिब्बती–बर्मी में नेपाली, मणिपुरी, मिजो, म्हार, नागा आदि प्रचलित हैं।

हिंदी–भाषा परिवार का वर्गीकरण–

तात्विक दृष्टि से हिंदी को पाँच उपभाषाओं और उनकी अनेक बोलियों के भेद–प्रभेदों में बाँटा गया है। यथा– 'पश्चिमी हिंदी, पूर्वी हिंदी, राजस्थानी हिंदी, पहाड़ी हिंदी, बिहारी हिंदी।' इन उपभाषाओं के अन्दर अनेक बोलियों समावेशित हैं।

उपभाषाएँ	**बोलियाँ**
1. पश्चिमी हिंदी	खड़ी बोली, ब्रजभाषा, हरियाणवी, बुँदेली और कन्नौजी
2. पूर्वी हिंदी	अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी
3. राजस्थानी हिंदी	मारवाड़ी, हाड़ौती, ढूँढाड़ी, मेवाती, मेवाड़ी और बागड़ी
4. पहाड़ी हिंदी	पश्चिमी पहाड़ी, गढ़वाली, कुमायूँनी
5. बिहारी	मैथिली, मगही, भोजपुरी

इस प्रकार वर्तमान में हिंदी, बंगाली, तेलुगु, मराठी, तमिल, उर्दू, कन्नड़, मलयालम, उड़िया, पंजाबी, असमी, भीली, संथाली, गोंड, सिंधी, नेपाली, कोंकणी, तुलु, कुरुख, मेड़ते और बोड़ो भाषाएँ तथा दस लाख से कम वाली भाषाओं में खानदेशी, हो, खासी, मुंडारी, कोकबराक भाषा, गारो, कुई, मीज हलाबी, कोरकू, मुंडा, मिशिंग, कार्बी, सावरा, तांगखुल, सेमा आदि भाषाएँ 2001 की जनगणना के अनुसार व्यवहृत हैं।

इन भाषाओं की अनेक बोलियाँ हैं। भाषा और बोलियों की स्थिति जानने के लिए भाषा और लिपि के सूक्ष्म अंतर को जानना भी अत्यावश्यक है क्योंकि भाषा का क्षेत्र व्यापक है तथा बोलियों का सीमित। भाषा का व्यवहार अधिक दूर तक होता है और बोली का अपेक्षाकृत कम दूर तक। एक भाषायी क्षेत्र में अनेक बोलियाँ आ सकती हैं परन्तु एक बोली के क्षेत्र में अनेक भाषाएँ नहीं आ सकती। बोली का प्रयोग दैनिक व्यवहार में होता है व भाषा का प्रयोग शिक्षा, साहित्य, शासन आदि के लिए होता है। अगर हिंदी भाषा की बोलियों और उपभाषा की बात करें तो यह विदित होता है कि उत्तर भाषा की भाषाओं में बोली निरंतरता है, इसका तात्पर्य है कि जैसे–जैसे किसी भी दिशा में जाते हैं, स्थानीय भाषा धीरे–धीरे बदलती जाती है। 2011 भाषायी सर्वेक्षण के आँकड़ों के अनुसार 780 भाषाएँ और 66 लिपियाँ भारत में प्रचलित हैं। इस भाषायी सर्वेक्षण में किए गए शोध के आधार पर असम, गुजरात, महाराष्ट्र और पश्चिमी बंगाल सर्वाधिक भाषायी विविधता वाले प्रदेश हैं। डॉ देवी के अनुसार 2011 सूचकांक के आधार पर

122 ऐसी भाषाएँ हैं जो 10000 से अधिक लोगों द्वारा बोली जाती है। 122 भाषाओं के अतिरिक्त जो 10000 से कम लोगों के बीच व्यवहृत हैं वे जनजाति प्रदेशों और पूर्वोत्तर के अंतरंग प्रदेशों की भाषाएँ हैं। देवी इसी सर्वेक्षण आधार पर बताते हैं कि जैविक विविधता भाषायी सघनता का विशेष आधार है। "इसी आधार पर झारखण्ड के पास अपनी एक या दो लिपि है परन्तु 16 भाषाएँ हैं जबकि पूर्वोत्तर में हर व्यक्ति के पास अपनी अलग भाषा है और इस प्रकार वहाँ सर्वाधिक भाषिक सघनता दिखाई देती है। हालांकि 2011 भाषायी सर्वेक्षण के आकड़े अभी तक अनुपलब्ध हैं; परन्तु इस पर हुई चर्चा से स्पष्ट है कि यह सर्वेक्षण अनेक भाषाओं, बोलियों और लिपियों के समाप्त होने की ओर भी संकेत करता है।"[5] राजस्थानी भाषा जिसकी अनेक बोलियाँ है जिनमें मेवाती, बागड़ी, मेवाड़ी, ढूँढाड़ी, हाड़ौती, मारवाड़ी प्रमुख हैं, में ढूँढाड़ी इस समय अपने अस्तित्व को लिए जूझ रही है। 2011 के भाषायी सर्वेक्षण के अनुसार बागड़ी की अनेक उपबोलियाँ हैं। गुजरात में 50 भाषाएँ बोली जाती है जो कि सर्वाधिक भाषा विविधता वाला प्रान्त है।

यह सच है कि उपेक्षा, जैविक विविधता, रोजगार के साधनों के अभाव से जनजातियों के विस्थापन आदि अन्यान्य कारणों से अनेक भाषाएँ विलुप्त हो रही हैं। परन्तु आम समाज में भाषा के विलुप्त होने के कारणों पर दुःख या रोष नहीं देखा जाता। एक भाषा के मृत होने पर हज़ार सालों का इतिहास भी नष्ट हो जाता है। गत 50 वर्षों में भारत की लगभग 20 फीसदी भाषाएँ विलुप्ति की कगार पर है। 1961 की जनगणना के बाद 1652 मातृभाषाओं की एक सूची बनी थी, उसके पश्चात् ऐसी किसी सूची का निर्माण नहीं हुआ। गणेश देवी बताते हैं कि भोजपुरी सर्वाधिक तेजी से विकसित होने वाली भाषा है। मुंबई में करीब 300 भाषाएँ हैं। सर्वे और अनुसूची में न आने के कारण अनेक भाषाएँ लुप्त होने के कगार पर मान ली गई हैं। हर भाषा की एक विशिष्ट जीवन दृष्टि होती है। भाषा एक आर्थिक पूँजी भी होती है अतः भाषाओं के संरक्षण के प्रयास किए जाने चाहिए। हर क्षेत्र में भाषाओं से जुड़े विषयों को पढ़ने के लिए विशेष जगह होनी चाहिए, प्रशासन द्वारा उसे विशेष प्रोत्साहन मिलना चाहिए। डॉ देवी बोली को भी भाषा कहने के पक्षधर इसलिए हैं कि उनका मानना है कि विश्व की किसी भी लिपि का प्रयोग किसी भी भाषा में हो सकता है अतः जो भाषा प्रिंटिग तकनीक में आई ही नहीं वह भाषा का अंग नहीं भाषा ही है।

1952 के पश्चात् हमारे देश में भाषा के आधार पर प्रांत बने। परन्तु भाषायी संरक्षण, संवर्धन के लिए कोई नीति नहीं बन पाई है। हमने सूची में केवल 22 भाषाएँ रखी हैं, केवल उन्हें ही सुरक्षा देने के बज़ाय हर भाषा को बिना किसी भेदभाव के सुरक्षा दी जाए तो भाषाओँ और लिपियों को मृत्यु के कगार पर जाने से बचाया जा सकता है। आज भाषा को बचाने के लिए अनेक चुनौतियाँ हैं जिसमें आठवीं अनुसूची में शामिल होने की प्रतिस्पर्धा एक बड़ी चुनौती है। क्योंकि इसमें शामिल होते ही उस भाषा की अन्य बोलियों की उपेक्षा हो जाती है, अतः इस प्रतिस्पर्धा से बच भाषा के लिए एक सौहार्दपूर्ण परिवेश निर्मित करना होगा। तटीय इलाकों में जनजातियों के विस्थापन को रोककर जनजातीय भाषाओं को बचाया जा सकता है। वहाँ विस्थापन की समस्या से जूझना प्रशासन के समक्ष एक बड़ी चुनौती है।

—सहायक आचार्य हिंदी
राजकीय कन्या महाविद्यालय, अजमेर

संदर्भ—

1. संसार के भाषा—परिवार और भारतीय उपशाखा— डॉ राजमणि शर्मा पृ.15
2. भाषाविज्ञान एवं भाषाशास्त्र, डॉ. कपिलदेव द्विवेदी, पृ.469
3. काव्यालंकार—भामह, 1—26
4. हिंदी भाषा इतिहास और स्वरूप, डॉ. राजमणि शर्मा—पृ. 81
5. www.thewirehindi.com

ISSN No. : 0970-9398

स्वाधीनता संग्राम में महिला पत्रकारों की भूमिका

–डॉ. अनु चौहान

सार:

भारत के स्वाधीनता संग्राम की जब भी बात होती है तो इतिहास में वीरता, बलिदान और इससे जुड़ी अनगिनत कहानियां गूंज उठती हैं। यह वही कहानियां हैं जिनके नायक–नायिकाओं के त्याग के परिणामस्वरूप आज भारत आजादी का अमृत महोत्सव मनाते हुए अमृत काल 2047 में विकसित भारत की परिकल्पना को साकार करने की दिशा में अग्रसर है। बावजूद इसके जबकि सारा देश अमृत काल की कार्ययोजना को तैयार कर उसे पूरा करने की दिशा में प्रयासरत है, जरूरी हो जाता है कि हम इतिहास के पन्नों में दर्ज उन महिला नेत्रियों के प्रयासों को भी करीब से जानें–समझें जोकि किन्हीं कारणों से आज तक उनके योगदान के अनुरूप पहचान पाने में असमर्थ रहीं। ऐसी महिला शक्ति जो स्वाधीनता संग्राम के कालखंड में अपनी कलम की ताकत के सहारे अंग्रेजी हुकूमत के समक्ष मजबूती के साथ खड़ी थी, लेकिन उनके योगदान की दास्तान कहीं छाया में ही छिपी रह गई।

यकीनन स्वतंत्रता संग्राम में महिला पत्रकारों के प्रयास अद्वितीय थे क्योंकि पराधीन भारत में, इन महिलाओं ने न केवल विदेशी उत्पीड़न के खिलाफ झंडा बुलंद किया बल्कि समाज की ऐसी बाधाओं को भी तोड़ा, जिनके चलते महिलाएं उस कालखंड में घरेलू दायरे तक ही समिति कर दी जाती थीं। स्वतंत्रता संग्राम में इन महिलाओं ने जिस तरह से प्रज्वलित दिलों और संतुलित कलमों के साथ नारी उत्थान व सशक्तीकरण सहित आगे बढ़ते हुए स्वतंत्रता की असाधारण यात्रा को तय किया वो उल्लेखनीय है। इन महिलाओं ने अपने अपने कालखंड में सामाजिक मानदंडों को चुनौती देते हुए उन सभी बंधनों को तोड़ दिया जो उन्हें पीछे की ओर धकेलते थे। आज के दौर में इन महिलाओं और इनकी कहानी को जानना इसलिए भी जरूरी है कि जब भारत विकसित भारत बनने की राह पर अग्रसर है तब उस अमृतकाल के सपने को साकार करने में आधी आबादी भी गर्व व सम्मान के साथ अपनी क्षमताओं का अधिकतम योगदान सुनिश्चित करें।

प्रस्तावना:

स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका की बात तो अक्सर होती है, बावजूद इसके हमारे समक्ष जब पहचान की बात आती है तो इस श्रेणी के अंतर्गत भी ऐसी महिलाओं के नाम सामने आने लगते हैं जो शायद आज भी स्थानीय स्तर पर ही पहचानी जाती हैं। इसे विडंबना ही कहा जाएगा कि स्वाधीनता संग्राम केंद्रित इतिहास में ऐसी महिला नेत्रियों को आज तक वह स्थान प्राप्त नहीं हो सका है जिसकी वे हकदार थी। इन भूली–बिसरी नायिकाओं में रानी गैडिंलूरू, वेलु नचियाररू व कित्तूर चेन्नम्मारू के नाम आते हैं। ऐसा नहीं है कि इनकी पहचान नहीं बस वह पहचान स्थानीय स्तर तक ही समिति रह गई है जबकि इतिहास में उनके योगदान को इससे कहीं अधिक महत्व प्रदान किया जाना आवश्यक है।

रानी गैडिंलूरू एक नागा आध्यात्मिक और राजनीतिक नेता थीं, जिन्होंने भारत में ब्रिटिश शासन के खिलाफ विद्रोह किया और वे नागा धर्म के अनुयायियों को इसाई बनाने के भी सख्त खिलाफ थीं। मात्रा 13 वर्ष की आयु में वे हेराका धार्मिक आंदोलन में शामिल हो गईं, जिसकी शुरुआत उनके चचेरे भाई ने की थी। बाद में इस आंदोलन ने राजनीतिक आंदोलन का रूप ले लिया, जिसके जरिए अंग्रेजों को मणिपुर तथा आसपास के नागा क्षेत्रों से भगाने का प्रयास किया गया। गिरफ्तारी के समय उनकी आयु 16 वर्ष थी। अंग्रेजों ने उन्हें आजीवन कारावास की सजा दी। पांच वर्ष बाद 1937 में नेहरू जी उनसे मिलने गए और वायदा किया कि वे उन्हें कारागार से मुक्ति दिलाएंगे। उन्होंने ही उन्हें रानी का खिताब प्रदान किया। रानी गैडिंलूरू को 1947 में रिहा कर दिया गया और उसके बाद वे अपने समुदाय

के लिए काम करती रहीं। इसी तरह वेलु नचियार का नाम भी सामने आता है जिनका जन्म 3 जनवरी, 1730 में तमिलनाडु के रामनाथपुरम में हुआ था। वेलु नचियार ऐसी पहली रानी थीं, जिन्होंने सिपाही विद्रोह से पहले अनेक वर्षों तक औपनिवेशक शासकों के खिलाफ संघर्ष किया। हैदर अली और गोपाला नायकर के सहयोग से उन्होंने अंग्रेजों के खिलाफ युद्ध छेड़ा और विजयी रहीं। उन्होंने ही पहले मानव बम की परिकल्पना की और सन 1700 के उत्तरार्द्ध में प्रशिक्षित महिला सैनिकों की पहली सेना का गठन किया था। ऐसी ही एक अन्य महिला नायिका थी कित्तूर चेन्नम्मा। इनका जन्म कात्ती बेलगावी, कर्नाटक में 23 अक्तूबर, 1778 को हुआ। वे कित्तूर की रानी थीं। वे पहली भारतीय महिला शासक थीं, जिन्होंने 1824 में ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के खिलाफ सशस्त्र विद्रोह का नेतृत्व किया। जब अंग्रेजों ने कित्तूर का खजाना और हीरे–जवाहरात जब्त करने की कोशिश की, तो एक युद्ध भड़क उठा जिसमें ब्रिटिश सैनिकों के साथ एक कलेक्टर भी मारा गया। दो ब्रिटिश अधिकारियों को बंधक बनाया गया। दूसरे हमले में चेन्नम्मा को गिरफ्तार कर जेल में डाल दिया गया, जहां उनकी मृत्यु हो गयी।

उपर्युक्त वर्णित महिला नेत्रियों के सक्रिय योगदान के साथ–साथ इतिहास में ऐसी नायिकाएं भी मौजूद हैं जिन्होंने अपनी लेखनी व संचार के अन्य माध्यमों के सहारे स्वतंत्रता संग्राम की लौ को जलाए रखा और उनकी उपस्थिति और सक्रियता के प्रभाव से महिला पुरुष सभी इस लड़ाई में आहुति के लिए प्रेरित हुए। इन महिलाओं को महिला पत्रकार के रूप में भी देखा जाता है। लेकिन हमने ब्रिटिश राज के दौरान स्वाधीनता संग्राम में योगदान देने वाली इन भारतीय महिला पत्रकारों के बारे में कुछ भी क्यों नहीं पढ़ा, क्या भारतीय महिलाएं इस मुश्किल पेशे को अपनाने में सक्षम नहीं थीं या इसके विपरीत यह धारणा कि भारतीय महिला पत्रकार भारतीय स्वतंत्रता के बाद ही परिदृश्य में आई, यह पूरी तरह से गलत है। ब्रिटिश राज के दौरान पत्रकारों के रूप में महिलाओं ने स्वाधीनता संग्राम में अपनी सक्रिय भूमिका निभाई बावजूद इसके उनके योगदान को कहीं न कहीं नजरअंदाज किया गया। दरअसल, 1850 के दशक से कई भारतीय महिलाओं ने महिला पत्रिकाओं का संपादन किया और कमोबेश उनकी भूमिका अनुकरणीय के अलावा कुछ नहीं रही। इन पत्र, पत्रिकाओं व संचार के माध्यमों के जरिए महिला पत्रकारों ने अपनी–अपनी तरह से आजादी की लड़ाई में योगदान दिया।

शोध–प्रविधि

प्रस्तुत शोध में शोध प्रविधि की दृष्टि से ऐतिहासिक दृष्टि का प्रयोग किया गया है। इस पद्धति के अंतर्गत स्वाधीनता संग्राम और उस दौर की पत्रकारिता तथा उसमें सक्रिय स्वतंत्रता वीरांगना महिला पत्रकारों की भूमिका व स्थिति का अवलोकन किया गया है। ये महिला पत्रकार किस तरह के सामाजिक परिवेश से आती थीं और उन्होंने किस तरह इस स्वाधीनता संग्राम में सक्रिय रूप से अथवा अपनी लेखनी के माध्यम से योगदान दिया। शोध में विशेष रूप ऐसी नायिकाओं का उल्लेख करने का प्रयास किया गया है जिनके योगदान व कृत्यों की जानकारी पुरुषों की अपेक्षा अभी भी बहुत ही कम देखने को मिलती है।

मार्गरेट एलिजाबेथ नोबल या सिस्टर निवेदिताः का जन्म 28 अक्टूबर, 1868 को आयरलैंड में हुआ था। उनके परिवार का आयरिश स्वतंत्रता आंदोलन से घनिष्ठ संबंध था। निवेदिता का पत्रकारिता से संबंधित कार्य डेढ़ दशक से भी अधिक समय तक देखने को मिलता है। कई बार वह अपने लेखन के लिए अलग–अलग छद्म नामों का इस्तेमाल करती थीं। उनके शुरुआती लेख कुछ प्रांतीय ब्रिटिश पत्रिकाओं में छपे जोकि अलग–अलग विषयों पर केंद्रित थे। सिस्टर निवेदिता ने न्यू इंडिया, डॉन, इंडियन रिव्यू, मॉडर्न रिव्यू, प्रबुद्ध भारत, हिंदू रिव्यू, मैसूर रिव्यू, बेहार हेराल्ड, द बंगाली जैसे कई समाचार पत्रों और पत्रिकाओं में नियमित रूप से योगदान दिया। पूर्व और पश्चिम, सिंध जर्नल, हिंदू, बालभारती, अमृत बाजार पत्रिका, स्टेट्समैन, एडवोकेट, ट्रिब्यून, मराठा, टाइम्स ऑफ इंडिया और बॉम्बे क्रॉनिकल आदि में भी सिस्टर निवेदिता ने पत्रकारिता के माध्यम से योगदान दिया।

मोक्षदायनी देवीः को भारत की पहली महिला पत्रकार माना जाता है। उन्होंने वर्ष 1848 में बांग्ला महिला नामक पत्रिका का प्रकाशन शुरू किया। इसी तरह चेनम्मा तुमरि को कन्नड़, आसिफ जहां को उर्दू, तुनाबाई

ISSN No. : 0970-9398

को मराठी, रेवा राय को ओडिशी, के.रामलक्ष्मी को तेलुगू, जालु कांगा को गुजराती और कल्याणी अम्मा को मलयालम भाषा की पहली महिला पत्रकार के रूप में पहचान मिली है। इन सभी महिलाओं ने क्षेत्रीय भाषाओं के स्तर पर पत्रकारिता के माध्यम से अपने–अपने कालखंड में भारत के स्वतंत्रता संग्राम में आम जन के बीच आजादी की लौ जलाए रखने का कार्य किया।[1]

हेमंत कुमारी देवीः का जन्म 1868 में एक ब्रह्म समाजी नवीन चंद्र राय के घर में हुआ। वह हिंदी की पहली महिला पत्रकार थीं, जो महिलाओं के लिए इलाहाबाद से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'सुगृहिणी' की संपादक बनीं। उनकी पत्रिका 'सुगृहिणी' के पहले अंक में संपादकीय की शुरुआती पंक्तियों में एक विशेष संदेश था। संदेश में कहा गया था, हे मेरी प्यारी बहनों, अपने दरवाजे खोलो और देखो कि कौन तुमसे मिलने आया है। यह आपकी एक बहन है जिसका नाम 'सुगृहिणी' है। वह आपके पास आई है क्योंकि आप उत्पीड़ित और अनपढ़ हैं और बंधन में हैं, उसका स्वागत करें और उसे आशीर्वाद दें। माँ तुम्हारी और "सुगृहिणी' की सहायता करें। उन दिनों भी हिंदी क्षेत्र एक पिछड़ा क्षेत्र था, जहाँ महिलाओं के बीच निरक्षरता स्थानिक थी और यहाँ तक कि अच्छे परिवारों में भी अधिकांश महिलाओं को कोई औपचारिक शिक्षा नहीं मिली। ब्रह्म–समाज की मानसिकताएं जिसने महिलाओं की शिक्षा को प्रोत्साहित किया, निस्संदेह विभिन्न प्रकाशनों के उद्भव के पीछे एक प्रमुख कारक था। हेमंत कुमारी देवी की मातृभाषा बंगाली थीं। उनकी शिक्षा आगरा में रोमन कैथोलिक कॉन्वेंट और बाद में लाहौर और कलकत्ता में हुई। उन्हें हेमंत कुमारी चौधरनी के नाम से भी जाना जाता था। 1906 में, वह पटियाला चली गयी, जहां वह 1924 तक रहीं। उन्हें नगर आयुक्त के रूप में देहरादून स्थानांतरित कर दिया गया, जहां 1953 में उनकी मृत्यु हो गयी।

पंडिता रमाबाईः महाराष्ट्र के पश्चिम प्रांत में समाज सुधारक अनंत शास्त्री की पुत्री के रूप में जन्म लिया। अनंत शास्त्री द्वारा अपनी पत्नी को शिक्षित करने के कारण ब्राह्मण समाज द्वारा उन्हें बहिष्कृत कर दिया गया था। स्त्री शिक्षा के प्रचारक पिता की मृत्यु के बाद रमाबाई और उनके भाई ने पिता के छोड़े हुए काम को आगे बढ़ाया। उनकी विद्वता का यश सुनकर कलकत्ता के ब्राह्मण समाज ने उन्हें सरस्वती सम्मान से सम्मानित किया। भाई की मृत्यु के पश्चात रमाबाई ने बंगाल के एक शूद्र वकील विपिन बिहारी मेधावी से विवाह कर लिया। एक पुत्री होने के पश्चात् रमाबाई के पति की मृत्यु हो गई और रमाबाई पुनः लौट आईं। रमाबाई ने आर्य महिला समाज की स्थापना की। 1882 में जब सरकार ने भारतीयों की शिक्षा के लिए एक कमीशन की नियुक्ति की तब पंडिता रमाबाई ने शिक्षकों के प्रशिक्षण और महिला इंस्पेक्टरों की नियुक्ति की बात जोर–शोर से उठाई। उन्होंने स्त्रियों के लिए मेडिकल चिकित्सक की आवश्यकता पर जोर दिया। साथ ही चिकित्सा विद्यालयों में स्त्रियों के प्रवेश का जोर–शोर से समर्थन किया। रमाबाई के विचारों और तर्कों की गूंज लंदन की साम्राज्ञी विक्टोरिया तक पहुंची और उनके प्रयासों का ही परिणाम था कि लेडी डफरिन ने महिलाओं के लिए चिकित्सा आंदोलन आरंभ किया।[2]

भीकाजी रुस्तम कामाः 1885 से ही भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की सक्रिय कार्यकर्ता बन गई थीं। सम्पन्न घर की पारसी युवती भीकाजी रुस्तम कामा समाज कल्याण के कार्यों में लग गयी। 1905 में लंदन पहुंची और दादाभाई नौरोजी के साथ काम करने लगी। वहीं उनकी भेंट प्रसिद्ध क्रांतिकारी श्यामजी कृष्ण वर्मा से हुई। तभी से भीकाजी ने खुले तौर पर अंग्रेजी शासन के खिलाफ भाषण देना शुरू कर दिया और वह भी उनके ही देश इंग्लैंड में। सन् 1907 में वो जर्मनी गई, वहां अंतरराष्ट्रीय और समाजवादी सम्मेलन में भारत का प्रथम राष्ट्र–ध्वज फहराया अपने देशप्रेम का परिचय दिया। अगले कई सालों तक उनकी आवाज यूरोप के अनेक देशों में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ गूंजती रही। पेरिस में उनका घर क्रांतिकारियों का प्रमुख आश्रय स्थल था। उनकी इन गतिविधियों का परिणाम था कि अंग्रेज अधिकारियों ने मैडम कामा के इंग्लैंड व भारत में प्रवेश पर रोक लगा दी थी। एक पत्रकार व संपादक के रूप में मैडम कामा ने फ्रांस में ही रहकर वन्दे मातरम् पत्र का प्रकाशन किया। इस प्रकाशन के माध्यम से वे स्वतंत्रता का जयघोष और क्रांतिकारियों का अभिनंदन करती रहीं। पैंतीस वर्ष की अवधि तक निष्कासित जीवन बिताने के बाद सन् 1935 में उन्हें इस शर्त पर भारत आने दिया गया कि वे यहां राजनीति

में भाग नहीं लेंगी। रुग्णावस्था में भारत लौटीं और चौहत्तर वर्षीय भीकाजी 1936 में चल बसीं।[3]

सरला देवीः बंगाल के प्रख्यात ठाकुर खानदान में जन्मीं। उनकी मां भी पत्रकारिता से जुड़ी थीं और वे स्वर्ण कुमारी देवी भारती नामक पत्रिका का संपादन करती थी। तेइस वर्ष की उम्र में सरला देवी मैसूर में लड़कियों के एक स्कूल में पढ़ाने के लिए चली गयीं, ताकि वे अपना जीवन स्वतंत्रता के साथ व्यतीत कर पाएं। लेकिन इसके कुछ समय पश्चात वे वापस बंगाल लौटी और अब भारती के सम्पादन की बागडोर उनके हाथों में आ गई थी। सरला देवी ने आगे चलकर अपनी पत्रकारिता के माध्यम से राष्ट्रवादी आंदोलन में प्रमुख भूमिका निभाई।

उषा मेहताः का जन्म 24 फरवरी, 1920 को हुआ। वे अपने पिता के भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में शामिल होने से इतना प्रेरित हुईं कि वह बचपन से राजनीति में आ गईं जिसके परिणाम यह हुआ कि वे वानर सेना के अन्य बच्चों के साथ पुलिस के लॉकअप तक जा पहुंची। अंग्रेजी, गुजराती, हिंदी और मराठी भाषा में पारंगत उषा ने स्वतंत्रता संग्राम में भारत छोड़ो राष्ट्रीय आंदोलन को वाणी देने का काम करने वाले गुप्त रेडियो के संचालन का काम किया। मेहता और उनके सहयोगियों द्वारा संचालित रेडियो स्टेशन ने ऐसी खबरों का प्रसारण किया जिन्हें आधिकारिक समाचार एजेंसियों द्वारा सेंसर किया गया था या यूं कहें कि अंग्रेजी शासन द्वारा दबा दिया गया था। ऐसी खबरें जो देशभर में भारतीयों के लिए आशा और प्रोत्साहन के संदेश बनकर सामने आती थीं। इस दौर में उषा मेहता और उनके रेडियो प्रसारण ने देशवासियों में आजादी की लौ को जलाए रखने का काम बखूबी किया था।

सुभद्रा कुमारी चौहानः सुभद्रा कुमारी चौहान भारत के स्वतंत्रता संग्राम से जुड़ा ऐसा नाम है जिनकी रचना 'खूब लड़ी मर्दानी वो तो झांसी वाली रानी' ने 1857 की क्रांति और उसमें रानी लक्ष्मीबाई के योगदान को इस संसार के समक्ष सदैव के लिए अविस्मरणीय बना दिया। सुभद्रा कुमारी चौहान महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन में हिस्सा लेने वाली पहली भारतीय महिला थीं। उनके देशप्रेम के चलते उन्हें कई बार जेल भी जाना पड़ा। लेखिका सुभद्रा कुमारी चौहान की महज 44 की उम्र में ही मृत्यु हो गयी थी बावजूद इसके उनका कहना था कि मेरे मरने के बाद भी धरती छोड़ने की मैं कल्पना नहीं करती हूं, मैं चाहती हूं कि मेरी एक समाधि हो, जिसके चारों तरफ मेला लगा हो, बच्चे खेल रहें हों, स्त्रियां गा रही हों और खूब शोर हो रहा हो। सुभद्रा कुमारी चौहान ने भी नारी शीर्षक से पत्रिका निकाली थी।

महादेवी वर्माः हिंदी साहित्य जगत में अपनी एक अलग ही पहचान रखने वाली महादेवी वर्मा का जन्म 1907 में फर्रूखाबाद, उत्तर प्रदेश के एक हिंदू परिवार में हुआ था। साहित्य के प्रति उनका प्रेम बचपन से ही देखने को मिलता है। जहां तक बात पत्रकारिता की है तो उन्होंने अपने पत्रकारिता कौशल के माध्यम से भी बखूबी स्वराज्य की भावना को जागृत करने का कार्य किया। उन्होंने चांद के माध्यम से स्वराज की आवश्यकता पर बल देते हुए लिखा था– स्वराज्य की आवश्यकता भारतवासियों को इसलिए है कि विदेशी सरकार उनके अभाव अभियोगों को समझने में असमर्थ है। यदि आज यहां स्वराज्य होता तो लाखों हिंदुस्तानी दुर्भिक्ष के कारण दाने–दाने को तरसकर प्राण न गंवाते। स्वराज्य के अभाव से ही प्रतिवर्ष 45 करोड़ रुपये इस दरिद्र देश से इंग्लैंड चले जाते हैं और इनके बदले भारत में एक भी कौड़ी तक नहीं आती है। जहां पांच करोड़ मनुष्यों को सालभर में एक समय भी पेट भर कर भोजन नहीं मिलता, उनके पास जाड़े में ओढ़ने के लिए कम्बल तक नहीं है जहां के करोड़ों किसान अरहर, उड़द, चना और मूंग बोते हैं पर उसके स्वाद से नितांत अनभिज्ञ रहते है जिन्हें टैक्स देने के लिए बाध्य होकर अन्न बेचना पड़ता है, जहां के शासक शासितों से सहानुभूति नहीं रखते उस देश की विपत्तियों की तुलना किस देश से हो सकती है। ऐसी स्थिति में स्वराज्य के बिना भारत की गति नहीं हैं। जिस प्रकार रोगी को औषधि की, भूखे को अन्न की और दरिद्र को धन की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार भारत को स्वराज्य की आवश्यकता है। भारतवासियों के लिए दो ही मार्ग हैं। चाहे वे स्वराज्य लाभ कर अपना मनुष्यत्व बनाये रखें अथवा जंगली मनुष्य की भांति पशुओं की श्रेणी में सम्मिलित हो जाएं दोनों बातें भारतवासियों के अधीन हैं।[4] निश्चय ही राष्ट्रीय आंदोलन के संदर्भ में महादेवी के ये विचार बड़े ही क्रांतिकारी और ओजस्वी हैं।

ISSN No. : 0970-9398

निष्कर्ष

भारत के स्वतंत्रता संग्राम में आमजन तक आजादी की अलख जगाने में पत्रकारिता का योगदान सदैव ही महत्वपूर्ण रहा। संचार के विभिन्न माध्यमों से क्रांतिकारियों व आजादी के लिए लड़ने वालों ने अपना योगदान दिया। ऐसे में जब बात आधी दुनिया की आती है तब इस पावन यज्ञ में महिला पत्रकारों की भूमिका को लेकर अक्सर प्रामाणिक रूप में साक्ष्यों की अनुपलब्धता व विभिन्न अन्य कारणों के परिणामस्वरूप उनके योगदान को उतनी अधिक पहचान नहीं मिली पाती है जितने की वे हकदार हैं। हमने अपने शोध में पाया कि आजादी के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से लेकर भारत के आजाद होने तक के कालखंड में विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं, हिंदी व अंग्रेजी माध्यम में देश–विदेश में महिलाओं ने बखूबी पत्रकार के रूप में एक सक्रिय स्वतंत्रता सेनानी की भूमिका का निर्वहन किया। उन्होंने अपने प्रयासों से कभी अखबार, पत्रिका का प्रकाशन कर, कभी अपने लेखों के जरिए, तो कभी गुप्त रेडियो प्रसारण के माध्यम से अंग्रेजी शासन पर चोट की। इतिहास के पन्नों को खंगालने पर पता चलता है कि संचार के विभिन्न उपलब्ध माध्यमों के स्तर पर महिला पत्रकारों ने अपनी–अपनी क्षमता व योग्यता अनुरूप जो भूमिका निभाई वो अविस्मरणीय है और उसे देखते हुए यह बेहद जरूरी है कि ऐसी कलम योद्धाओं को कभी भी विस्मरित न होने दिया जाए और इन्हें भी आजाद भारत के इतिहास में वही स्थान दिया जाए, जिसकी वो हकदार हैं।

–पोस्ट डॉक्टर फेलो

भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद्
(आईसीएसएसआर), नई दिल्ली

संदर्भ–

1. अनुजा, डॉ. मंगला, आधी दुनिया की पूरी पत्रकारिता, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली.
2. चौहान, डॉ. अनु, महिला पत्रकारः कल और आजकल, स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली.
3. मेहरोत्रा, दीप्ति प्रिया, भारतीय महिला आंदोलन, सम्पूर्णा ट्रस्ट, नई दिल्ली.
4. वर्मा, महादेवी, वर्ष 1936 संपादकीय विचार, चांद पत्रिका.

प्रपत्र–4 (देखिए नियम–8) **पं.सं. 3246/77**

प्रेस तथा पुस्तक पंजीकरण अधिनियम

समाचार पत्रों का पंजीकरण (केंद्रीय) नियम

''राजभाषा भारती'' के स्वामित्व तथा विवरणों की सूचना

1.	प्रकाशन का स्थान	नई दिल्ली
2.	प्रकाशन अवधि	त्रैमासिक
3.	मुद्रक का नाम	इन्दु कार्ड्स एण्ड ग्राफिक्स
4.	क्या भारत का नागरिक है?	भारतीय नागरिक
5.	प्रकाशन का नाम व पता	राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, एन.डी.सी.सी.–2 भवन, चौथा तल, बी विंग, नई दिल्ली–110001
6.	संपादक का नाम व पता	डॉ. धनेश द्विवेदी, उप संपादक, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, एन.डी.सी.सी.–2 भवन, चौथा तल, बी विंग, नई दिल्ली–110001
7.	उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।	अप्रयोज्य

मैं, डॉ. धनेश द्विवेदी घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

ह./–
प्रकाशक का हस्ताक्षर

कवर डिजाइन एवं टाइपसेटिंग–इन्दु कार्ड्स एण्ड ग्राफिक्स, चावड़ी बाजार, दिल्ली–6

ISSN No. : 0970-9398

बोलियों से समृद्ध होती हिंदी

–विकास कुमार बघेल

भारत अनेक विविधताओं से परिपूर्ण एवं समाहित है। यहां पर विभिन्न प्रकार के धर्म को मानने वाले और अनेक जातियों में विभाजित लोग, जिनकी अपनी विभिन्न प्रकार की बोलियां हैं, बड़ी सादगी और सामांजस्य के साथ कदम से कदम मिलाते हुए भारत की समृद्धि में लगातार बढ़ोत्तरी की ओर अग्रसर हैं।

हिंदी प्राचीन समय से हिंदुई या हिंदवी के नाम से भी जानी जाती है। हिंदी भाषा की उत्पत्ति 10वीं शताब्दी के आस–पास मानी जाती है और आज तक अविरल पूरे भारत के अधिकांश भाग में समझी और बोली जाने वाली भाषा के रूप में एकछत्र अपना स्थापत्य स्थापित करती आ रही है। इसकी उपयोगिता का अंदाज इसी से लगाया जा सकता है कि सिर्फ भारत में ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में हिंदी सीखने वालों की संख्या में निरंतर बढ़ोत्तरी देखी जा रही है। आज पूरा जगत भारत में अपना निवेश एवं व्यापारिक लाभ देख रहा है।

सर्वविदित है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात देश के कई राज्यों को एक–जुट करने के लिए एक भाषा की आवश्यकता थी। जोकि सर्वाधिक बोली और समझी जाती हो, जिसे सभी के लिए सीखना और समझना दोनों ही आसान हो। तब हमारे सामने एक ही भाषा थी 'हिंदी' जोकि सर्वाधिक बोली और समझी जाती थी। जिस पर सर्वसम्मिति से हिंदी भाषा को राष्ट्रभाषा बनाने के लिए निर्णय लिया गया। परंतु दक्षिण क्षेत्र के राजनैतिक एवं आपसी स्वार्थ एवं सत्ता के लोलुपों ने हिंदी को राष्ट्रभाषा बनने में अड़चन पैदा कर दी, जिसका खामियाजा अभी तक हिंदी को भुगतान पड़ रहा है।

भारत के बारे में यह कहावत बिल्कुल सही चरित्रार्थ होती है कि "चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर भाषा" बदल जाती है। हमारे देश में अनेक प्रकार की विभिन्न जाति और धर्म को मानने वाले लोगों द्वारा बोलियां बोली जाती हैं, एक अनुमान के अनुसार भारत में लगभग ढाई हजार के लगभग बोलियां बोली जाती हैं। जिसमें हिंदी पट्टी पर सबसे ज्यादा बोली जाने वाली हिंदी एवं उसकी उपभाषाएं है।

भारत के विभिन्न प्रांतों के जनपदों की अनेक बोलियां और उनकी उपभाषाएं हैं जैसे ब्रजभाषा, अवधी, बुंदेली, बघेली, कन्नोजी, खड़ी बोली, हरियाणवी, राजस्थानी, मारवाड़ी, मगही, छत्तीसगढ़ी, मालवी, नागपुरी, खोरठा, पंचपरगनियां, कुमाउंनी, मेवाती, फीजी हिंदी, भोजपुरी इत्यादि इनमें से कुछ में उच्च श्रेणी के साहित्य की रचना भी हुई जो अमर कृतियों में जानी जाती है। यह बोलियां हिंदी की विविधता में एकता का परिचायक है जो उनकी शक्ति भी है और ये हिंदी की जड़ों को गहरा और सशक्त बनाती हैं।

हिंदी के मुख्य दो भेद हैं–'पश्चिमी हिंदी' और 'पूर्वी हिंदी'– 'पश्चिमी हिंदी' का विकास शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है। इसके अंतर्गत पांच बोलियां हैं– खड़ी बोली, हरियाणवी, ब्रजभाषा, कन्नोजी और बुंदेली। "खड़ी बोली" मुख्यतः मेरठ, रामपुर, मुरादाबाद, देहरादून, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, बिजनौर, बागपत के आसपास बोली जाती है। "हरियाणवी" बोली मुख्यतः जाटू या हरियाणवी भी कहते हैं। यह पजांब के दक्षिण पूर्व में बोली जाती है। इसके अलावा यह हरियाणा एवं दिल्ली में अधिकतर बोली जानी वाली भाषा है।

"ब्रजभाषा" बोली मुख्यतः मथुरा, आगरा, अलीगढ़, हाथरस, एटा, मैनपुरी, फिरोजाबाद, बंदायू, बरेली, धोलपुर, झांसी इत्यादि क्षेत्रों में प्रचुरता से बोली जाती है। इसी ब्रजभाषा में सबसे ज्यादा हिंदी साहित्य का विकास हुआ है और इसे ब्रजभाषा न कहकर साहित्यकारों ने "साहित्य भाषा" का दर्जा दिया है। "कन्नोजी" भाषा गंगा के तटीय क्षेत्रों में बहुतायत में बोली जाती है–जैसे इटावा, फर्रुखाबाद, शाहजहां पुर, कानपुर हरदोई, पीलीभीत, बनारस, लखनऊ के कुछ क्षेत्रों में मुख्यतः अवधी और ब्रजभाषा एवं खड़ी बोली का समन्वय देखा जा सकता है। "बुंदेली" भाषा बुंदेलखंड की उपभाषा है। यह बुंदेलखंड एवं उसके आस–पास के क्षेत्रों बोली जाती है– झांसी, जालौन, सागर, नृसिंहपुर, ओरछा, ग्वालियर, इत्यादि में ब्रजभाषा एवं खड़ी बोली का मिश्रण देखा जा सकता है।

पूर्वी हिंदी की तीन शाखाएं है–अवधी, बघेली एवं छत्तीसगढ़ी।

ISSN No. : 0970-9398

"अवधी" भाषा मुख्यतः कानपुर, लखनऊ, बाराबंकी, रायबरेली, प्रयागराज, अमेठी, कौशाम्बी, अमेठी, बहराइच, चित्रकूट इत्यादि में प्रयोग की जाती है। "बघेली" भाषा अधिकतर नागौद, अनूपपुर, रीवा, मेहर, उमरिया, सतना एवं शहडोल में इसका असर देखा जा सकता है। "छत्तीसगढ़ी" भाषा जैसा कि इसके नाम से प्रतीत होता है अधिकतर नांदगाव, कांकेर, बिलासपुर, रायगढ़, महासमुंद, रायपुर और सरगुजा इत्यादि में इसके बोलने वाले लोग मिल जाएंगे।

इन भाषाओं को हमारे साहित्यकारों ने बड़ा ही सम्मान एवं आदर दिया है क्योंकि इन भाषाओं में अधिकतर धार्मिक ग्रंथों का सृजन हुआ है। इसलिए इसे पूज्यनीय भाषा भी कहा जाता है। इस भाषा को साहित्यिक दृष्टि से बेहद ही समृद्ध भाषा का दर्जा प्राप्त हुआ है।

राजस्थान की मुख्यतः चार उपभाषाएं अर्थात बोली हैं– मेवाती, मालवी, जयपुरी एवं मारवाड़ी है। बिहार में भी सामान्यताः तीन भाषाएं प्रचलित हैं –भोजपुरी, मगही एवं मैथली जिसमें भोजपुरी बोलने वालों की संख्या अधिकतर है। पहाड़ी भाषाएं जोकि अधिकतर पहाड़ों पर रहने वाले लोग इस्तेमाल करते हैं जिसमें नेपाली, परंबतिया, कुमाउंनी और गढ़वाली। इसके अलावा पश्चिमी पहाड़ी लोग अधिकतर उप बोलियों के रुप में मंडियाली, चाम्वियाली, क्योंथली, कांगड़ी, बघाटी, बिलासपुरी, कुल्लवी एवं सिरमौरी।

अन्य हिंदी भाषाई क्षेत्रों के रूप में दक्षिण प्रांतों के राज्य शामिल हैं जिनमें हिंदी भाषा का मिलाजुला रूप देखा जा सकता है–दक्खिनी हिंदी, बम्बईयां हिंदी, कलकतिया हिंदी तथा शिलंगी हिंदी (बाजारी भाषा)।

हिंदी की ये सभी उपभाषाएं (बोलियां) एक दूसरे से इतनी गुँथी हैं कि कभी–कभी यह पहचानना मुश्किल हो जाता है कि यह हमारी बोली नहीं अपुति माला में गुंथी हुई श्रृंगार रुपी बोलियां हैं जो भारत माता के गले के हार का अनुभव एवं उनके सौंदर्य का वर्णन कराती है जोकि 'अनेकता में एकता' का बोध और उसकी संपूर्णता को संजोए हुए है। सूर, कबीर तुलसी, के पदों की लोकप्रियता इस का उच्चतम उदाहरण है।

भारत देश में हिंदी कई प्रकार से जुबानी भाषा में, बोली जाती है जिसको हम मातृभाषा और प्रांत भाषा के रुप में देख और सुन सकते है। यहां हिंदी के कुछ प्रकार का वर्णन दिया जा रहा है, जैसे 'ठेठ हिंदी'– भाषा अथवा भाषा का वह स्वरुप जिसमें हिंदवी (हिंदी) के अलावा और किसी बोली का पुट न हो, इसमें अन्य बोलियों का समावेश नहीं होता है। दूसरी ओर इसको संस्कृत, अरबी, फारसी की शब्दावली से भी दूर रखा जाता है। 'रानी केतकी की कहानी' और 'ठेठ हिंदी का ठाठ' इसके उदाहरण दिए जा सकते हैं। इसकी विशेषता के बारे में कहा जा सकता है कि इसमें केवल हिंदी शब्दों का प्रयोग, अरबी–फारसी रहित एवं ग्रामीण बोलियों के प्रभाव से मुक्त है।

'खड़ी बोली'– इसका पहला प्रयोग लल्लू जी लाल द्वारा लिखित साहित्य 'प्रेमसागर' में प्रयोग देखा जा सकता है। इसके अलावा 'नासिकेतोपाख्यान' सदल मिश्र की सुप्रसिद्ध रचना में भी खड़ी बोली का प्रभाव देखा जा सकता है। इस भाषा का मूलाधार आगरा एवं दिल्ली के क्षेत्र में देखा जा सकता है। इसकी विशेषता के बारे में कहा जा सकता है कि यह खड़ीबोली, ब्रजभाषा और रेख्ता दोनों से ही भिन्न एक बोलचाल की भाषा थी, यह गंवारू भाषा नहीं थी बल्कि इसे व्यावहारिक तथा उत्कृष्ट भाषा की श्रेणी में रखा जा सकता है जिसमें साहित्यिक ग्रंथों तक की रचना संभव थी। इसमें शब्दों को जोड़ देने से रेख्ता का रूप बन जाता है और उन्हें छोड़ देने से हिंदुवी का।

'शुद्ध हिंदी'– शुद्ध हिंदी में तद्भव एवं तत्सम शब्दों का भी प्रयोग देखा जा सकता है पर इसमें विदेशी शब्दों का प्रयोग नहीं किया जा सकता।

यह तो स्पष्ट हो चुका है कि विभिन्न प्रांतों के लोगों द्वारा उनके रहन–सहन एवं बोलचाल के आधार पर भाषाओं की उत्पत्ति एवं बोलियों का विकास हुआ है जिसका हमारे साहित्यिक शास्त्रों में उल्लेख मिलता है। एक हजार वर्ष से पूर्व जो भाषाएं बोली जाती थी उनको समझना और लिखना नामुकिन था। जब देश में विदेशियों का आगमन हुआ तो उनके द्वारा लाई गई अरबी–फारसी, उर्दू एवं अंग्रेजी के साथ ही हिन्दुस्तान की भाषाओं के संमिश्रण से आज की हिंदी भाषा एवं बोली का सदर्श्य देखा जा सकता है। आज सारी क्षेत्रीय उपभाषाएं हिंदी की समृद्धि का स्त्रोत बन गई हैं। सभी उपभाषाएं एवं बोलियां एक दूसरे से अन्योन्याश्रित भाव से गुंथी हुई हैं, इनका आपस में सीधा संबंध है। इन बोलियों के अस्तित्व को हिंदी के साथ परिपूरक भाव से लेना चाहिए।

–वरिष्ठ अनुवादक
भारतीय रेल विद्युत इंजीनियरिंग संस्थान (इरीन),
एक लहरा रोड, नासिक रोड–422101

ISSN No. : 0970-9398

जंग-ए-आजादी, हिंदी साहित्य और राष्ट्रीयता

–निशा सहगल

लेखनी प्रत्येक काल में समाज का मार्गदर्शन करती आई है। जब–जब समाज दिग्भ्रमित होता है, राजनीति पथ भ्रष्ट होती है और जनसाधारण किंकर्तव्यविमूढ़ की अवस्था में आता है, तब–तब लेखनी के सिपाही उठकर लेखनी के माध्यम से इन सब का मार्गदर्शन करते हैं। भारत की जंग–ए–आजादी भी इसका अपवाद नहीं है। पराधीनता के उस काल में जब सर्वत्र पराभव ही पराभव दिखाई देता था, तब हमारे देश में अनेकों ऐसे साहित्यकार उत्पन्न हुए, जिन्होंने अपनी पवित्र लेखनी के माध्यम से हमारे समाज का मनोबल और आत्मबल बनाए रखने का प्रशंसनीय कार्य किया। जंग–ए–आजादी के इस महायज्ञ में साहित्यकारों ने तत्कालीन समाज में चेतना के ऐसे बीज बोये, जिनके अंकुरों की सुवास से सुवासित वृक्षों ने उस झंझावात को जन्म दिया, जिसने समाज के हर वर्ग को इस आंदोलन में ला खड़ा किया। यह युग एक ऐसा युग था जब देश में व्याप्त उथल–पुथल को हिंदी साहित्य का विषय बनाकर कवि अपने दोहरे दायित्व का निर्वहन कर रहे थे। वे एक ओर तो राष्ट्र के प्रति अपने स्वधर्म का निर्वाह राष्ट्रीय भावनाओं को अपनी रचनाओं का विषय बनाकर कर रहे थे तो वहीं दूसरी ओर राष्ट्रव्यापी स्वातंत्र्य चेतना को युवाओं की धड़कनों में अपनी कलम के द्वारा अनवरत उद्दीप्त कर रहे थे। यह समय तत्कालीन समाज के जन–मानस में चेतना और ऊर्जा भरने का समय था। अतः वे अपनी वाणी से जनमानस में नई चेतना और ऊर्जा का संचार करने में जुटे थे। साहित्यकारों द्वारा रचित कविताएं अपने ढंग से काम कर रही थीं। वहीं गद्य रचनाओं के माध्यम से साहित्यकार आत्म गौरव, आत्म निर्भरता, चरित्र–निर्माण, सांप्रदायिक सौहार्द्र, एकता और अखंडता जैसी भावनाओं को जनमानस की अंतचेतना में समाहित करने का पुनीत कार्य कर रहे थे।

जंग–ए–आजादी का असाधारण महत्व इस तथ्य में भी है कि इसके दौरान अनेक सामाजिक–राजनीतिक कार्यकर्ता और नेता ही सक्रिय नहीं थे, बल्कि समाज के विभिन्न वर्गों, विशेष रूप से लेखक, कवि, पत्रकार, कलाकार, साहित्यकार भी भारत मां की बेड़ियां काटने के लिए समर्पित थे। आजादी उनका प्रथम उद्देश्य था और जिस क्षेत्र विशेष में उनकी सक्रियता थी, उसे भी इस महान लक्ष्य के लिए समर्पित कर दिया। इससे उनकी प्रतिभा और कला को नई ऊंचाईयां मिलीं। एक ऐसी ऊंचाई जो महान लक्ष्य और उसकी निश्छल साधना की स्वाभाविक उपज होती है। पर यह अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है कि इतिहासकारों ने साहित्यकारों के समर्पण और उनकी कलात्मक ऊंचाईयों को अनदेखा किया और उन्हें विशेष रूप से रेखांकित नहीं किया। हमारी भारतीय शिक्षा व्यवस्था में यूरोपीय इतिहास पढ़ाते समय फ्रांसीसी क्रांति के संदर्भ में साहित्यकारों के योगदान को पाठ्यक्रम में स्थान दिया गया है, परंतु भारतीय स्वाधीनता आंदोलन के संदर्भ में साहित्यकारों के योगदान को पाठ्यक्रम में शामिल नहीं किया गया है। यहां तक कि हिंदी आलोचना में भी इन सभी लेखकों के संपूर्ण योगदान पर आज तक कोई मुकम्मल किताब नहीं है। नतीजा यह हुआ कि उनके विस्तृत योगदान के बारे में नई पीढ़ी को पता नहीं चलता।

आज कितने लोगों को मालूम है कि आजादी की लड़ाई में 400 से अधिक साहित्यिक किताबें जब्त हुई थीं। माधव प्रसाद सप्रे पहले व्यक्ति थे जिन पर सन् 1905 में राजद्रोह का मुकदमा दर्ज हुआ था। माखनलाल चतुर्वेदी 12 बार जेल गए थे और 69 बार उनके घर की तलाशी ली गई थी। राहुल सांकृत्यायन जी 4 बार जेल गये और जेल में ही उन्होंने कई किताबों की रचना की। यशपाल की तो बरेली जेल में शादी ही हुई थी और उन्होंने विश्व साहित्य का अध्ययन जेल में रहकर किया। सुभद्रा जी 17 साल की उम्र में ही गिरफ्तार हुईं और सन् 1942 के आंदोलन में अपने नाटककार पति लक्ष्मण सिंह के साथ जेल गईं। नवीन जी ने भगत सिंह को हिंदी–उर्दू की शिक्षा दी जिसके कारण भगत सिंह "मतवाला" में बलवंत सिंह के नाम से लिखते थे। इसी प्रकार की न जाने कितनी प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष

आहुतियां स्वाधीनता संग्राम के यज्ञ कुंड में दी गई, परंतु इन आहुतियों से भी ज्यादा महत्वपूर्ण इन कलम के सिपाहियों का रचनात्मक सहयोग रहा जिसके बल पर उन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन में आजादी की चेतना फैलाई। स्वदेश व स्वधर्म रक्षा एवं स्वराज की स्थापना के लिए साहित्यकार उस समय एक ओर तो राष्ट्रीय भावों को अपनी रचनाओं का विषय बना रहे थे, वहीं दूसरी ओर राष्ट्रीय चेतना को हवा भी दे रहे थे। स्वतंत्रता आंदोलन के आरंभ से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति तक के 90 वर्षों के भिन्न–भिन्न चरणों में राष्ट्रीय भावनाओं से ओत–प्रोत रचनाओं की कोख में स्वातंत्र्य चेतना का विकास होता रहा।

जंग–ए–आजादी का काल भारतीयों के लिए विषम संघर्ष का समय था। चूंकि देश ऐसे साम्राज्यवादियों के चंगुल में फंसा था, जिनकी शासन–पद्धति प्राचीन काल के विदेशियों से मुख्यतः भिन्न थी। अंग्रेजों से पहले जितने भी विदेशी आक्रमणकारी यहां आए, वे या तो लूटमार करके वापस चले गये या इस देश में ही रहकर इस देश के हो गए। इसके विपरीत अंग्रेज शासक यहां रहते हुए भी यहां के निवासी नहीं बन सके। उनका प्रमुख उद्देश्य था भारतवर्ष का शोषण करके अपने देश की श्रीवृद्धि करना। भारतीयों में उनके प्रति आक्रोश का होना स्वाभाविक था। यह आक्रोश धीरे–धीरे बढ़ता हुआ स्वाधीनता संग्राम के रूप में फूट पड़ा। फलस्वरूप इस युग की राष्ट्रीय–सांस्कृतिक साहित्य धारा में दो भावनाएं पूरी शक्ति के साथ व्यक्त हुईं। एक तो साहित्यकारों ने भारत की आंतरिक विसंगतियों और विषमताओं को दूर करने के लिए भारतवासियों से आह्वान किया और दूसरी ओर जनता को विदेशी शासन से मुक्ति पाने के लिए स्वाधीनता संग्राम में कूद पड़ने की प्रेरणा दी। कवियों ने अपनी कविताओं के द्वारा वर्तमान अवनति का वर्णन कर जनता को देश की दुर्दशा से परिचित कराया और देशवासियों को उन्नति की ओर अग्रसर होने का संदेश देते हुए देश की पूर्व गौरव दीप की रक्षा का उद्धबोधन किया। राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त लिखते हैं–

"किस भांति जीना चाहिए, किस भांति मरना चाहिए,
सो सब हमें निज पूर्वजों से याद करना चाहिए।
पद–चिह्न उनके यत्नपूर्वक खोज लेना चाहिए,
निज पूर्व गौरव–दीप को बुझने न देना चाहिए।"

गुप्त जी द्वारा "भारत–भारती" में अतीत, वर्तमान और भविष्य का ऐसा बिंब प्रस्तुत किया गया है कि जिसे पढ़ते ही मुर्दे व्यक्ति में भी चेतना का संचार हो जाए। इसमें अतीत काल के इतिहास को पढ़ने हेतु नई पीढ़ी को प्रेरित किया गया है। वर्तमान को साधते हुए भविष्य का संधान कर मार्ग प्रशस्त किया गया है। भारतवर्ष में अनेक धर्म और जाति के लोग निवास करते हैं। उनकी एकता के बिना राष्ट्रोन्नति असंभव है। अतः स्वाधीनता आंदोलन को सफल बनाने के लिए जातीय एकता और अखंडता एक अनिवार्य तत्व है, इसलिए कवि ने भातृत्व का संदेश देते हुए लिखा है–

"जैन, बौद्ध, पारसी, यहूदी,
मुसलमान, सिख, ईसाई,
कोटि कण्ठ से मिलकर कह दो,
हम सब हैं भाई–भाई।"

जंग–ए–आजादी के संदर्भ में सुभद्रा जी का राष्ट्रीय काव्य हिंदी साहित्य में बेजोड़ है। वे एक नारी के रूप में ही रहकर साधारण नारियों की आकांक्षाओं और भावों को व्यक्त करती हैं। बहन, माता, पत्नी के साथ–साथ एक सच्ची देश सेविका के भाव उन्होंने व्यक्त किए हैं। उनकी अभिव्यक्ति में सरलता, अकृत्रिमता और स्पष्टता दिखाई देती है। उनमें एक ओर जहां नारी–सुलभ गुणों का उत्कर्ष है, वहीं वह स्वदेश प्रेम और देशाभिमान भी है जो हर एक भारतीय नारी में होना चाहिए। "सभा का खेल" कविता में खेल–खेल में राष्ट्रभाव जगाने का कितना सहज प्रयास कवयित्री ने किया है, वह देखते ही बनता है। मात्र छः पंक्तियों में सन् 1885 से सन् 1945 तक के 60 वर्षों के आंदोलन को चित्रित कर दिया गया है। इस संदर्भ में हम चंद्रगुप्त और चाणक्य के प्रसंग को भी ले सकते हैं–

"सभा–सभा का खेल,
आज हम खेलेंगे जीजी आओ,
मैं गांधी जी, छोटे नेहरू,
तुम सरोजिनी बन जाओ।
मेरा तो सब काम
लंगोटी गमछे से चल जाएगा,
छोटे भी खद्दर का कुर्ता

ISSN No. : 0970-9398

पेटी से ले आएगा।
मोहन, लल्लीत, पुलिस बनेंगे,
हम भाषण करने वाले,
वे लाठियां चलाने वाले,
हम घायल मरने वाले।"

इसी तरह जगन्नाथ प्रसाद "मिलिंद" ने "अगस्त क्रांति का गीत" शीर्षक कविता में स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए सर्वत्र बलिदान करने का संदेश दिया है–

"जब तक अंतिम भारतवासी जीवित बचे
आत्मबलि रण में,
और एक राम अंतिम कण हो
बाकी उसके आहत तन में।
तब तक उसके सुदृढ़ करों में झण्डा रहे
राष्ट्र का प्यारा,
स्वतंत्र सब भारतवासी,
भारतवर्ष स्वतंत्र हमारा।"

स्वाधीनता आंदोलन के वीर रस के सुविख्यात कवि श्यामनारायण "पाण्डेय" एक अप्रतिम कवि हैं। इनकी कविता "हल्दी घाटी" और "जौहर" ने आजादी के दीवानों के बीच खासी लोकप्रियता अर्जित की है। स्वतंत्रता आंदोलन अपनी परिपक्वता की ओर बढ़ रहा था। ऐसे समय में "हल्दी घाटी" ने युवाओं के उबाल खाते रुधिर में एक पवित्र आहुति का कार्य किया और "हल्दी घाटी" तत्कालीन स्वतंत्रता के पुजारियों का कंठमाल बन गई। "जौहर" कविता चित्तोड़ की रानी पद्मिनी का हृदयहारी आख्यान है। रानी पद्मिनी जो न सिर्फ राजपूती स्वाभिमान का, अपितु भारतीय नारी के उस गौरव का प्रतीक है जो अपने सतीत्व और सम्मान की रक्षा हेतु हंसते–हंसते जौहर की ज्वाला में कूदकर प्राणों को स्वाहा कर देती है। जंग–ए–आजादी के उस युग में पद्मिनी के चरित्र को कविता में प्रस्तुत करके कवि ने अपने राष्ट्रीयता के अप्रतिम भाव को व्यक्त किया है।

जंग–ए–आजादी के इस क्रम में एक और साहित्यकार का नाम जुड़ता है जिनका नाम है–रामधारी सिंह "दिनकर"। दिनकर जी भारतीय स्वातंत्र्य के प्रबल समर्थक और पोषक कवि हैं। कवि का स्वगत कथन है–"राष्ट्रीयता मेरे व्यक्तित्व के भीतर से नहीं जन्मी, उसने बाहर से आकर मुझे आक्रांत किया है।" जिस युग में उनके राष्ट्रीय काव्य व्यक्तित्व का गठन हुआ, वह भारतीय इतिहास का सर्वाधिक प्रवृत्तमय, क्रांतिकारी एवं राजसत्ता के विरुद्ध व्यापक संघर्ष का युग था। इस दृष्टि से यौवन और पौरुष का कवि दिनकर क्रांति और विध्वंस के आह्वान द्वारा भी नवसर्जन की प्रेरणा देता रहा है। राष्ट्र की प्रतिभा को लांक्षित करने वाले युगीन प्रश्नों पर उनकी पैनी दृष्टि रही है। इसका आभास हमें "बन फूलों की ओर", "कविता की पुकार" और "बागी" रचना से चल जाता है। इनमें कहीं कृषक की दयनीय दशा का वर्णन है, कहीं जेल के सींकचों में कसे आजादी के दीवानों और उनके वियोग को कलपते–रोते परिवार की मार्मिक चीत्कार है, तो कहीं देशव्यापी आर्थिक शोषण एवं किसान आंदोलन से व्यथित कवि कंठ द्वारा लोकमंगल के लिए फूट पड़ने का आह्वान है। उनकी "दिगंबरि", "असमय", "आह्वान", "हाहाकार", "भीख", "दिल्लीम" और "विपथगा" आदि सामाजिक वैषम्य एवं साम्राज्यवादी शासन के व्यापक शोषण को चित्रित करने वाली रचनाएं हैं। इस चित्रण के माध्यम से वे जन साधारण को चेतित करके उनमें राष्ट्रीय एकता की भावना जगाना चाहते हैं जिससे इन व्यवस्थाओं से लड़ा जा सके।

सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला" राष्ट्रीय काव्यधारा के ओजस्वी कवि हैं। उनकी "राम की शक्तिपूजा", "भारती वंदना", "बादल राग" आदि राष्ट्रीय प्रतिनिधित्व की रचनाएं हैं जिसमें निराला जी राष्ट्रहित के लिए मानवतावादी समाज की स्थापना को प्रमुख मानते हैं तथा भारतीयों को अतीत के गौरव का बखान करते हुए भविष्य का निर्माण करने हेतु प्रेरित करते हैं–

"भारती जय विजय करे, कनक–शस्यु–कमल धरे,
लंका पदस्थर–शतदल, गर्जितोर्मि सागर–जल,
धोता शुचि चरण युगल, स्ताव कर बहुर्थ भरे।"

बालकृष्ण "शर्मा नवीन" ने भी अपनी कविताओं के माध्यम से राष्ट्रीय भाव जागृत किया है। "विप्लव गान" में कवि लिखते हैं–

"कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ,
जिससे उथल–पुथल मच जाए।
एक हिलोर इधर से आए,

ISSN No. : 0970-9398

एक हिलोर उधर से आए।
प्राणों के लाले पड़ जाए
त्राहि–त्राहि रव नभ में छाए।"

राष्ट्र चद्रष्टाक, युग निर्माता, राष्ट्रीय भावना का संचार करने वाले रचनाकारों में एक प्रमुख नाम माखनलाल चतुर्वेदी जी का आता है, जिनकी रचनाधर्मिता का एक मात्र उद्देश्य भारतीयों के हृदय में देशप्रेम का संचार करना था। इनकी राष्ट्रीय कविताओं में कहीं भारत माता की वंदना है, कहीं शक्ति और उत्साह का आह्वान है और कहीं देश की गुलामी को लेकर गहरी पीड़ा है। स्वयं स्वराज्य प्राप्ति के आंदोलन में भाग लिया था, जनता को निकट से देखा, इसलिए उनकी कविताएं इतनी सजीव, ओजस्वी और प्रेरणामयी हैं–

"बंदी होवे वह दयाहीन,
तू भारतीय आजाद रहे,
वह स्वर्ग टूटकर गिर जाये,
यह आर्यभूमि आबाद रहे।"

स्वाधीनता आंदोलन अभिव्यक्ति में अपनी प्रशस्त राष्ट्रीयता की अभिव्यक्ति करने में हिंदी साहित्य के गद्यकार भी पीछे नहीं थे। साहित्य की काव्यतर विधाओं विशेषकर उपन्यासों, कहानियों, नाटकों और निबंधों में भी यह अभिव्यक्ति मुखर हुई है। स्वाधीनता आंदोलन के परिप्रेक्ष्य में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की अभिव्यक्ति को निबंधकारों और नाटककारों ने स्थान दिया है जिसमें भारतेंदु की "अंग्रेजों से हिदुस्तानियों का जी क्यों नहीं मिलता", "भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है?", बालकृष्ण भट्ट की "देशत्वं रक्षा का उपाय", "वर्तमान महादुर्भिक्ष", "चरित्र शोधन", "आत्मगौरव", "स्त्रियां और उनकी शिक्षा", लाला श्रीनिवास दास की "समझ की भूल", "भारतखंड की समृद्धि", बालमुकुंद गुप्त की "शिव शंभु के चिट्ठे", "महादुर्भिक्ष" आदि और नाटकों में भारतेंदु कृत "अंधेर नगरी", "भारत दुर्दशा", "राधाचरण गोस्वामी कृत "बूढ़े मुंह मुहासे लोग देखें तमाशे", अम्बिका दत्त व्यास कृत "भारत सौभाग्य", गोपाल राम गहमरी कृत "देश–दशा", प्रसाद कृत "चंद्रगुप्त", "अजातशत्रु", हरिकृष्ण प्रेमी कृत "शिवा–साधना", "रक्षाबंधन", बदरीनाथ भट्ट कृत "वेनु चरित्र", रामकुमार वर्मा कृत "शिवाजी", "महाराणा प्रताप", जगन्नाथ प्रसाद मिलिंद कृत "प्रताप प्रतिज्ञा", उदयशंकर भट्ट कृत "विक्रमादित्य", "सागर विजय", चतुरसेन कृत "राजसिंह" प्रमुख हैं।

स्वाधीनता आंदोलन आंदोलन के संदर्भ में जब हम हिंदी नाटकों और प्रहसनों की बात करते हैं तो नाटकों और प्रहसनों में राष्ट्रीय भावना को सर्वप्रथम स्थान देने का श्रेय भारतेंदु जी को है। नाटकों में यथा स्थान और यथा अवसर देश की राष्ट्रीय भावना को उत्सृजित करने वाले दृश्य उपस्थित करते रहे हैं। कहीं–कहीं तो सामाजिक समस्याओं का चित्रण केवल साधन मात्र है या कथानक बढ़ाने मात्र, परंतु कृतियों में राष्ट्रीय भावना की उत्तेजना का उद्देश्य स्पष्ट और पुष्टक है। "प्रेम जोगिनी' नाटक में सूत्रधार कहता है–"क्या इस कलम–वन–रूप भारतभूमि को दुष्टल गजों ने उसकी इच्छा बिना ही छिन्न–भिन्न कर दिया? जब नादिर, चंगेज खां ऐसे निर्दयों ने लाखों निर्दोष जीव मार डाले तब वह सोता था?" भारतेन्दु का समय विक्टोरिया का शासन काल है। इन्होंने भारतीय लोगों का ध्यान देश की गुलामी की ओर आकृष्ट किया है–"रोअहु सब मिलि कै, आवहु भारत भाई। हा ! हा!! भारत दुर्दशा न देखी जाई।" भारतेन्दु ने प्रतिकूल तत्कालीन परिस्थितियों के कारण खुले स्वर में अंग्रेज सरकार का विरोध तो नहीं किया, लेकिन अपने साहित्य के माध्यम से बार–बार इसकी ओर संकेत अवश्य किया। वह सरकार लोगों को परेशान करती थी। उसके अधिकारी जनता को लूटते थे ओर वे लोगों के पैसे से अपने घर भर रहे थे। अंग्रेज अपनी नीतियों से धीरे–धीरे सारे देश में फैलते जा रहे थे–

"चूरन साहब लोग जो खाता,
सारा हिन्द हज़म कर जाता।"

इसी युग के एक रचनाकार राधाचरण गोस्वामी ने "बूढ़े मुंह मुंहासे लोग देखें तमाशे" प्रहसन में जमींदारों के प्रति हिंदु–मुसलमान किसानों का सम्मिलित विद्रोह और समस्या निराकरण दिखाकर देशहित में अपनी राष्ट्रीय भावना को व्यक्त किया है। इसी प्रकार जयशंकर प्रसाद जी ने "अजातशत्रु" नाटक द्वारा स्वाधीनता एवं राष्ट्र–कल्याण के लिए प्रत्येक भारतवासी को अपने प्राणों की आहुति देने का आह्वान किया है–"राष्ट्र के कल्याण के लिए प्राण तक विसर्जन किया जा सकता है और हम सब ऐसी प्रतिज्ञा करते हैं।" "चंद्रगुप्त' नाटक में तो उन्होंने स्वतंत्रता को ही भारतीयों का कर्म–क्षेत्र कहा है। चंद्रगुप्त का कथन है–"यह जागरण का अवसर है। जागरण का अर्थ है कर्म–क्षेत्र में अवतीर्ण

होना ओर कर्म क्षेत्र क्या है? जीवन संग्राम।" इस जीवन के संग्राम में ही भारतीय स्वतंत्रता की झलक छिपी हुई है। नाटक में अलका देश के वीरों को स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए उद्बोधित करती हुई कहती है–

"अराति सैन्य सिंधु में,
सुबाड़वाग्नि से जलो,
प्रवीर हो जयी बनो,
बढ़े चलो बढ़े चलो।"

हरिकृष्णा प्रेमी कृत नाटक "शिवा–साधना" में शिवाजी की माता के चरित्र को बखूबी उकेरा गया है जो समय–समय पर शिवाजी को देश की स्वाधीनता और आत्म गौरव के लिए प्रेरित करती है–"उठो बेटा! मैं पिता, पति, बंधु–बांधव, सुख–स्वार्थ कुछ नहीं जानती, मैं केवल देश जानती हूं और तुम्हें मैं आदेश करती हूं कि देश की स्वाधीनता ही तुम्हारे जीवन की चरम साधना हो।" नाटक में शिवाजी का कथन भी तत्कालीन और वर्तमान भारतवासियों के लिए प्रेरणादायी और ग्राह्य है–"मेरे शेष जीवन की एक मात्र साधना होगी भारतवर्ष को स्वतंत्र कराना, दरिद्रता की जड़ खोदना, ऊंच–नीच की भावना और धार्मिक तथा सामाजिक दोनों प्रकार की क्रांति करना।"

जहां तक इस युग के कथा–साहित्य की बात है हिंदी साहित्य के कथाकारों के उपन्यासों या कहानियों में राष्ट्रीयता की भावना को एक महत्वपूर्ण विषय के रूप में प्रयुक्त किया गया है। राधाकृष्ण दास ने भी "निःसहाय हिंदू" में राष्ट्रीयता का संदेश दिया है। लज्जा राम मेहता के "आदर्श हिंदू" में राष्ट्रीयता और राष्ट्रीय एकता को सर्वोपरि माना गया है। इसमें लेखक ने सांप्रदायिक सद्भाव के साथ एक आदर्श राष्ट्र की परिकल्पना प्रस्तुत की है। स्वाधीनता आंदोलन की औपन्यासिक त्रयी रहे प्रेमचंद के तीन उपन्यास "प्रेमाश्रम", "रंगभूमि" और "कर्मभूमि" में चित्रित आंदोलन का स्वरूप पूंजीवाद और सामंतवाद के विरुद्ध है। "प्रेमाश्रम" का प्रेमशंकर, "रंगभूमि" का सूरदास और "कर्मभूमि" का अमरकांत जन आंदोलन का सूत्रपात करते हैं। ये उपन्यास राष्ट्रीय आंदोलन की प्रतिछाया हैं। प्रेमशंकर, सूरदास और अमरकांत में गांधी का प्रतिबिंब स्पष्ट देखा जा सकता है। असत्य पर सत्य की विजय, हृदय परिवर्तन, सत्याग्रह आंदोलन, चरखा और करघा, लगान बंदी आंदोलन, गांधी इरविन समझौता, नरम दलीय मनोवृत्ति, नौकरशाही का दमन, स्वराज की व्याख्या, स्वदेशी की भावना, नारी जागरण, किसान और मजदूर आंदोलन, जमींदारों का शोषण, अंग्रेजों का अत्याचार आदि अनेक यथार्थवादी राजनीतिक घटनाओं को उपन्यासकार ने चित्रित किया है।।

प्रेमचंद की कहानियों में अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ एक तीव्र विरोध तो दिखा ही, इसके अलावा दबी–कुचली शोषित व अफसशाही के बोझ से दबी जनता के मन में कर्त्तव्य–बोध का एक ऐसा बीज अंकुरित हुआ, जिसने सबको आंदोलित कर दिया। प्रेमचंद ने जन जागरण का एक ऐसा अलख जगाया कि जनता हुंकार उठी। सरफरोशी का जज्बा जगाती प्रेमचंद की बहुत सारी रचनाओं को अंग्रेजी शासन के रोष का शिकार होना पड़ा। न जाने कितनी रचनाओं पर रोक लगा दी गई और उन्हें जब्त कर लिया गया। कई रचनाओं को जला दिया गया, परंतु इन सब बातों की परवाह न करते हुए अनवरत लिखते रहे। उन पर कई तरह के दबाव भी डाले गए और नवाबराय की स्वीकृति पर उन्हें डराया धमकाया भी गया, लेकिन इन कोशिशों व दमनकारी नीतियों के आगे प्रेमचंद ने कभी हथियार नहीं डाले। उनकी रचना "सोजे वतन" पर अंग्रेज अफसरों ने कड़ी आपत्ति जताई और उन्हें अंग्रेजी खुफिया विभाग ने पूछताछ के लिए तलब किया। अंग्रेजी शासन का खुफिया विभाग अंत तक उनके पीछे लगा रहा, परंतु प्रेमचंद की लेखनी रूकी नहीं, बल्कि और प्रखर होकर स्वतंत्रता आंदोलन में विस्फोटक का काम करती रही। उन्होंने लिखा–

"मैं विद्रोही हूं,
जग में विद्रोह कराने आया हूं,
क्रांति–क्रांति का सरल सुनहरा
राग सुनाने आया हूं।"

इधर यशपाल स्वाधीनता संग्राम में क्रांतिकारी धारा के अग्रणी योद्धा और लेखक रहे। कहा जाता है कि यशपाल जी उन साहित्यकारों में हैं जो कलम और तलवार चलाने में समान सफलता प्राप्त कर चुके हैं। सन् 1940 में अपने क्रांतिकारी विचारों वाले लेखों के कारण उन्हें गिरफ्तार किया गया। उनके उपन्यासों में

क्रांति की चेतना का क्रमिक विकास देखा जा सकता है। क्रांति की यह भावना प्रथम उपन्यास "दादा कामरेड" से आरम्भ होती है, मध्य के उपन्यासों में विकसित होती है और अंतिम उपन्यास "मेरी तेरी उसकी बात" में फलीभूत होती है। सन् 1942 की राष्ट्रीय क्रांति को "देशद्रोही" उपन्यास में आत्मरक्षा के रूप में प्रस्तुत किया गया है। "देशद्रोही" उपन्यास में क्रांति की चेतना को दो आयामों में व्यक्त किया गया है–आजादी और समाजवाद। इसके अलावा सामाजिक एवं धार्मिक विसंगति का चित्रण करने वाले सियारामशरण गुप्ता कृत "अंतिम आकांक्षा", आजादी के लिए आंदोलन एवं देश–प्रेम का चित्रण करने वाली चतुरसेन शास्त्री कृत "आत्मदाह" शासनतंत्र की अव्यवस्था एवं प्रजा की पीड़ा का चित्रण करने वाली बेचन शर्मा "उग्र" कृत "सरकार तुम्हारी आंखों में" आदि उपन्यासों में तत्कालीन समस्याओं को विषय बनाकर रचनाकारों ने अपने दायित्व का निर्वाह किया।

इस क्रम में वृंदावनलाल वर्मा कृत "तातार" और "एक वीर राजपूत", चतुरसेन शास्त्री कृत "हल्दी घाटी", प्रसाद कृत "आकाशदीप", "पुरस्कार" और प्रेमचंद रचित दर्जनों कहानियां राष्ट्रीयता की भावना को लेकर लिखी गई कहानियां हैं। "पुरस्कार" कहानी में राष्ट्रप्रेम के महत्व को दर्शाया गया है। "सेवा मार्ग" मंम देश सेवा का महत्व प्रतिपादित किया गया है। "वियोग और विलाप" कहानी में तिलक और एनी बेसेंट द्वारा शुरू किए गए "होमरूल" या "स्वदेशी" आंदोलन का खुला समर्थन पूर्ण रूप से चित्रित किया गया है। "चकमा" में असहयोग आंदोलन के कार्यक्रम का चित्रण है। "सती" कहानी में एक ऐसी बहादुर बुंदेल कथा का चित्रण किया गया है जो वीरता, त्याग और देशप्रेम की प्रतीक है। "समर यात्रा" सन् 1930 के आंदोलन पर आधारित कहानी है जिसमें स्वाधीनता आंदोलन के प्रति जनोत्साह का बहुत प्रभावी चित्रण है। "होली का उपहार" कहानी में एक नवविवाहिता लड़की आजादी की लड़ाई में न केवल निडर भाव से हिस्सा लेती है, बल्कि युवकों का नेतृत्व भी करती है। इसके अलावा "ईदगाह", "पंच परमेश्वर", "आहुति", "जुलूस", "सत्याग्रह", "शतरंज के खिलाड़ी" आदि कहानियां जातीयता और राष्ट्रीयता को चित्रित करती हैं।

जंग–ए–आजादी में अपनी रचनाओं के माध्यम से विशेष भूमिका निभाने वाले साहित्यकारों की एक लंबी फेहरिस्त है, जिन्होंने राष्ट्रीयता को जिस शक्ति व उत्कृष्टता के साथ अपनी रचनाओं में व्यक्त किया है, वह बेहद सराहनीय और अनुकरणीय है। इनके योगदान को भारत के ऐतिहासिक और राजनैतिक इतिहास लिखने वाले इतिहासकार नजरअंदाज न करें। उनके इस महत्वपूर्ण कार्य को अनदेखा नहीं किया जाना चाहिए। यह हमारा दायित्व है कि तत्कालीन युग की इन महान विभूतियों के कार्यों को हमारी आने वाली नस्लों तक पहुंचाएं, क्योंकि आज के समय में भी वैसी ही धारदार रचनाओं की जरूरत है, जो जन–जन को आंदोलित कर सके, उनमें जागृति ला सके। भष्टाचार व अराजकता को दूर कर हर हृदय में भारतीय–गौरव–बोध एवं मानवीय–मूल्यों का संचार कर सके।

– डी–1209, डबुआ कालोनी,
फरीदाबाद–121001 (हरियाणा)

संदर्भ सूचीः–

1. गुप्त, मैथिलीशरण, भारत–भारती, पृष्ठ संख्या–161
2. वही, पृष्ठ संख्या–91
3. जगन्नाथ प्रसाद मिलिंद, बलिपथ के गीत, पृष्ठ संख्या–90
4. दिनकर, चक्रवाल, पृष्ठ संख्या–33
5. पाठक वाचस्पति, प्रसाद, निराला, पंत, महादेवी की श्रेष्ठ रचनाएं, पृष्ठ संख्या–99
6. भारतेंदु, भारतेंदु नाटकावली, इंडियन प्रेस, पृष्ठ संख्या–67
7. प्रसाद, अजातशत्रु, पृष्ठ संख्या–63
8. प्रसाद, चंद्रगुप्त, पृष्ठ संख्या–179
9. प्रेमी, हरिकृष्ण, शिवा साधना, पृष्ठ संख्या–23
10. वही, पृष्ठ संख्या–19
11. मिलिंद, जगन्नाथ प्रसाद, प्रताप–प्रतिज्ञा, पृष्ठ संख्या 2–90
12. वही, पृष्ठ संख्या–35

ISSN No. : 0970-9398

स्वदेशी तकनीकी से विकसित भारत की ओर

–डॉ. शंकर सुवन सिंह

भारत ऋषि परंपरा का देश रहा है। युग को चार भागों में विभाजित किया गया है– सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग और कलयुग। ये सभी युग अपनी विशेष तकनीकी और प्रौद्योगिकी के लिए जाने जाते हैं। प्राचीन भारत में विज्ञान का विकास तब हो चुका था। प्राचीन भारत के लोगों में विज्ञान के प्रति गहरी रूचि थी। उपनिषद में उल्लेख है कि प्राचीन भारतीय लोग ज्ञान प्राप्त करने के लिए बहुत उत्सुक रहते थे। वायु स्थिर क्यों नहीं रह सकती? मनुष्य का मस्तिष्क विश्राम क्यों नहीं करता? पानी क्यों और किसकी खोज में बहता है? प्राचीन भारत के लोगों का दर्शन से घनिष्ठ सम्बन्ध था। दर्शन का सम्बन्ध अनुभूति से है। प्राचीन काल के ऋषि मुनियों ने अपनी अनुभूतियों के द्वारा नए नए आविष्कार को जन्म दिया। इसका एक उदाहरण त्रेतायुग का पुष्पक विमान है। ऋषि वाल्मीकि की रामायण के अनुसार, पुष्पक विमान का प्रारूप एवं निर्माण विधि ब्रह्म ऋषि अंगीरा ने बनाई थी। पुष्पक विमान की कार्य क्षमता और उसके निर्माण का श्रेय भगवान् विश्वकर्मा को जाता है। तत्पश्चात भगवान् विश्वकर्मा ने पुष्पक विमान को भगवान् ब्रह्मा को उपहार स्वरुप सौंप दिया था। उसके बाद ब्रह्मा ने यह विमान कुबेर को भेंट स्वरुप दे दिया था। रावण ने अपने छोटे भाई कुबेर से बलपूर्वक उसकी सोने की नगरी लंका और पुष्पक विमान को ले लिया था। पौराणिक कथाओं के अनुसार यह विमान मन्त्रों के जरिये चलता था। ये विमान एक प्रकार का अंतरिक्ष यान था। ये सोने की धातु का बना था। इसे अपने मन की गति से असीमित चलाया जा सकता था। यह विमान यात्रियों की संख्या और वायु के घनत्व के अनुसार अपना आकार छोटा या बड़ा कर सकता था। पुष्पक विमान की शक्ति और क्षमता के आगे आधुनिक विमान तुच्छ प्रतीत होता है। पुष्पक विमान का विद्युत चुम्बकीय प्रभाव इतना शक्तिशाली था कि यदि आज के समय में ये उड़ान भरे तो विद्युत और संचार जैसी व्यवस्थाएं ध्वस्त हो जाएंगी। हाल ही में 5000 वर्ष पुराने विमान को अफगानिस्तान की गुफाओं में पाया गया है। दावा किया जाता है कि ये पुष्पक विमान ही है। यह जहां पाया गया है वहाँ इलेक्ट्रोमैग्नेटिक वेव (विद्युत चुंबकीय तरंग) का प्रभाव बहुत ज्यादा था जिसकी वजह से इस यान के पास जा कर कोई भी व्यक्ति वापस नहीं लौटा। पौराणिक कथाओं के अनुसार पुष्पक विमान स्ट्रेंज एनर्जी (अजीब ऊर्जा) से घिरा हुआ रहता था। श्रीलंका में भी रावण के सोने की लंका को पुरातत्व विभाग ने खोज लिया है और रामायण काल के 50 स्थानों को चिन्हित कर लिया गया है। इससे साबित होता है कि त्रेतायुग में स्वदेशी तकनीकी या प्रौद्योगिकी बहुत विकसित थी। आधुनिक वायुयान का आविष्कार दो अमेरिकी भाई (राइट ब्रदर्स) ओरविल और विल्बर ने 17 दिसंबर, 1903 को किया था। भारत का इतिहास सिंधु घाटी सभ्यता से प्रारंभ होता है जिसे हम हड़प्पा सभ्यता के नाम से भी जानते हैं। यह सभ्यता लगभग 2500 ईस्वी पूर्व दक्षिण एशिया के पश्चिमी भाग मैं फैली हुई थी, जो कि वर्तमान में पाकिस्तान तथा पश्चिमी भारत के नाम से जाना जाता है। सिंधु घाटी सभ्यता मिस्र, मेसोपोटामिया, भारत और चीन की चार सबसे बड़ी प्राचीन नगरीय सभ्यताओं से भी अधिक उन्नत थी। वर्ष 1920 में, भारतीय पुरातत्त्व विभाग द्वारा किये गए सिंधु घाटी के उत्खनन से प्राप्त अवशेषों से हड़प्पा तथा मोहनजोदड़ो जैसे दो प्राचीन नगरों की खोज हुई। हड़प्पा सभ्यता की खोज दयाराम साहनी ने वर्ष 1921 में की थी। यह पाकिस्तान के पंजाब प्रांत में मोंटगोमरी जिले में रावी नदी के तट पर स्थित है। मनुष्य के शरीर की बलुआ पत्थर की बनी मूर्तियाँ, अन्नागार और बैलगाड़ी हड़प्पा सभ्यता की महत्वपूर्ण खोज हैं। मोहन जोदड़ो को मृतकों का टीला भी कहा जाता है। इसकी खोज राखलदास बनर्जी ने वर्ष 1922 में की थी। यह पाकिस्तान के पंजाब प्रांत के लरकाना जिले में सिंधु नदी के तट पर स्थित है। विशाल स्नानागर, अन्नागार, कांस्य की नर्तकी की मूर्ति, पशुपति महादेव की मुहर, दाढ़ी वाले मनुष्य की पत्थर की मूर्ति और बुने हुए कपड़े मोहनजोदड़ो सभ्यता की महत्वपूर्ण खोजें हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि प्राचीन भारतीय स्थल शिल्पकारी, भवन निर्माण या वास्तुविद आदि जैसी तकनीकियों के प्रमाण हैं। प्राचीन भारत में सारी तकनीकियां स्वदेशी

ISSN No. : 0970-9398

हुआ करती थी। प्रकृति से प्राप्त वस्तुओं में तकनीकी का इस्तेमाल कर स्वदेशिता को बढ़ावा दे सकते हैं। इसका सबसे अच्छा उदाहरण आयुर्वेद है। आयुर्वेद शास्त्र का विकास उत्तरवैदिक काल में हुआ था।

आयुर्वेदाचार्य चरक ने 'चरक संहिता' लिखा था। इसमें विभिन्न रोगों के उपचार के लिए आयुर्वेदिक औषधियों की व्याख्या की गई है। जिन्हें सही मात्रा और तरीके से प्रयोग करने के उपाय भी दिए गए हैं। आयुर्वेद के माध्यम से स्वदेशी तकनीकी का उपयोग किया जा सकता है। ऋग्वेद में ऋचाओं का संकलन है जिनके मंत्रोच्चार से शरीर स्वस्थ्य और स्फूर्तिवान होता है। ऋग्वेद के ज्ञान से भी स्वदेशी हुआ जा सकता है। सामवेद संगीत का संकलन है जो आपको नवीनता देता है। यजुर्वेद में यज्ञ आदि कर्मकांडों का विवरण मिलता है जिससे वातावरण और समाज शुद्ध होता है। अतएव हम कह सकते हैं कि हिंदू धर्म के चारों वेद स्वदेशी होने का अच्छा उदाहरण हैं। आध्यात्मिक बल पर प्राप्त की गई शक्तियों का सबसे अच्छा उदाहरण पुष्पक विमान और हमारे वेद हैं। अपने देश में निर्मित वस्तु, विचार, अध्यात्म और प्रकृति आदि कारक स्वदेशी होने को परिलक्षित करते हैं। प्राचीन भारत सिर्फ आध्यात्मिक दर्शन के बल पर विकसित था और आज का भौतिक दर्शन के बल पर विकासशील है। जब भारत में आध्यात्मिक दर्शन, भौतिक दर्शन के साथ कदम मिलाकर चलेगा तब भारत विकासशील से विकसित भारत हो जाएगा। अध्यात्म आपकी कार्य क्षमता को बढ़ाता है। विज्ञान एक खोज है। खोज, बिना अध्यात्म के सम्भव नहीं है। अध्यात्म विज्ञान को बल प्रदान करता है। वास्को डी गामा ने मई 1498 में भारत की खोज की। वह अटलांटिक महासागर के माध्यम से भारत पहुंचने वाले पहले यूरोपीय थे। वास्कोडिगामा ने भारत की खोज की यह विज्ञान का हिस्सा है। एडिसन ने बल्ब का आविष्कार किया यह तकनीकी या प्रौद्योगिकी का हिस्सा है। कहने का तात्पर्य विज्ञान, खोज (डिस्कवरी) पर आधारित होता है। प्रौद्योगिकी या तकनीकी, आविष्कार पर आधारित होता है। विज्ञान साक्ष्य के आधार पर एक व्यवस्थित पद्धति का पालन करते हुए प्राकृतिक और सामाजिक दुनिया के ज्ञान और समझ की खोज और अनुप्रयोग है। प्रौद्योगिकी व्यावहारिक उद्देश्यों या अनुप्रयोगों के लिए वैज्ञानिक ज्ञान का उपयोग है, चाहे वह उद्योग में हो या हमारे रोजमर्रा के जीवन में। इसलिए, मूल रूप से, जब भी हम किसी विशिष्ट उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए अपने वैज्ञानिक ज्ञान का उपयोग करते हैं, तो हम प्रौद्योगिकी का उपयोग कर रहे होते हैं। थॉमस एडिसन को प्रौद्योगिकी के जनक के रूप में जाना जाता है। गैलीलियो को विज्ञान का जनक कहा जाता है। विज्ञान के विकास से प्रौद्योगिकी का विकास होता है क्योंकि बहुत सारी प्रौद्योगिकियाँ वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित होतीं हैं। 28 फ़रवरी 1928 को भारतीय वैज्ञानिक सर चंद्रशेखर वेंकट रमन ने रमन प्रभाव (रमन इफ़ेक्ट) के खोज की घोषणा की थी। अतएव राष्ट्रीय विज्ञान दिवस प्रत्येक वर्ष की फ़रवरी माह के 28 तारीख को मनाया जाता है। राष्ट्रीय विज्ञान दिवस 2024 का प्रसंग/थीम है– विकसित भारत के लिए स्वदेशी तकनीकी। स्वदेशी, स्वाभिमानी और स्वावलम्बन स्वतंत्रता का प्रतीक हैं। स्वदेशी तकनीकी अर्थात अपने देश में निर्मित तकनीकी का इस्तेमाल करना या कराना। जब हम अपने आध्यात्मिक दृष्टिकोण के साथ किसी भी स्वदेशी तकनीकी का इस्तेमाल करते हैं तो विकास की पूरी संभावना होती है। बिना अध्यात्म का विकास, विनाश का कारण बनता है। भारत एक आध्यात्मिक देश है। अतएव यहां स्वदेशी तकनीकी का इस्तेमाल भारत को पूर्णरूप से विकसित भारत की श्रेणी में खड़ा करेगा। भारत का चंद्रयान–3 मिशन स्वदेशी तकनीकी का सबसे ज्यादा जीता जागता उदाहरण है। चंद्रयान–3 भारत का एक महत्वाकांक्षी चंद्र मिशन था जो 24 अगस्त, 2023 को भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) के अनुसार, चंद्रयान 3 रोवर प्रज्ञान लैंडर से नीचे उतर गया था और भारत ने चंद्रमा पर सैर की। भारत चंद्रमा के दक्षिणी ध्रुव पर उतरने वाला पहला देश हो गया है। चंद्रयान–3 चाँद की सतह पर सॉफ्ट लैंडिंग करने का भारत का दूसरा प्रयास था। माननीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के विकसित भारत के लिए स्वदेशी तकनीकी का प्रयोग भारत के लिए राम बाण साबित होगा। अभी हाल ही में तीन स्वदेशी रूप से विकसित प्रौद्योगिकियां – थर्मल कैमरा, सीएमओएस कैमरा और फ्लीट मैनेजमेंट सिस्टम – 4 फ़रवरी 2024 को भारत में 12 उद्योगों को हस्तांतरित कर दिए गए। यह प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की विकसित भारत / 2047 पहल के नवाचार, विज्ञान और प्रौद्योगिकी विषय की दिशा में एक कदम है। पहली तकनीकी– थर्मल स्मार्ट कैमरे में विभिन्न एआई आधारित एनालिटिक्स चलाने के लिए एक इनबिल्ट डीपीयू है। स्वदेशी प्रौद्योगिकी का अनुप्रयोग स्मार्ट शहरों, उद्योगों, रक्षा, स्वास्थ्य और अन्य विभिन्न कार्य क्षेत्रों के लिए लक्षित किया गया है।

ISSN No. : 0970-9398

इस कैमरे का उपयोग क्षेत्रीय कार्यान्वयन, परीक्षण और सत्यापन सड़क यातायात अनुप्रयोगों के लिए किया गया था। प्रौद्योगिकी को एक साथ निम्नलिखित आठ उद्योगों में हस्तांतरित किया गया था। दूसरी तकनीकी– इंडस्ट्रियल विज़न सेंसर आईवीआईएस 10 जीआईजीई एक सीएमओएस आधारित विज़न प्रोसेसिंग सिस्टम है जिसमें आने वाली पीढ़ियों के औद्योगिक मशीन विज़न अनुप्रयोगों को निष्पादित करने के लिए एक शक्तिशाली ऑन–बोर्ड कंप्यूटिंग इंजन है। यह प्रौद्योगिकी मेसर्स स्पूकफिश इनोवेशन प्राइवेट लिमिटेड को हस्तांतरित की गई है। तीसरी तकनीकी– फ्लीट मैनेजमेंट सिस्टम, जिसमें फ्लेक्सीफ्लीट, पर्सनलाइज्ड ट्रांजिट रूट गाइडेंस सिस्टम के लिए परिचालन रणनीतियां शामिल हैं। फ्लेक्सीफ़्लीट का उद्देश्य संचालन को अनुकूलित करना और बड़े ऑपरेटरों और पारगमन एजेंसियों की दक्षता में वृद्धि करना है। वाहन स्थान ट्रैकिंग के अलावा, यह ओवरस्पीडिंग, जियोफेंस, इग्निशन, निष्क्रिय, रुकना और रैश ड्राइविंग जैसी विभिन्न स्थितियों के लिए अलर्ट प्रदान करता है। पर्सनलाइज्ड ट्रांजिट रूट गाइडेंस सिस्टम एक मोबाइल ऐप है जिसका उद्देश्य यात्रियों के लिए यात्रा अनुभव को बेहतर बनाना है क्योंकि यह यात्रियों को उनकी पसंद के सबसे कुशल या वैयक्तिकृत मार्ग चुनने का विकल्प प्रदान करता है। यह तकनीक एक साथ तीन उद्योगों को हस्तांतरित की गई। विश्व में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में भारत का प्रमुख स्थान है। वैज्ञानिक शोध कार्यों में शीर्ष पांच देशों में भारत भी अपना एक स्थान रखता है। विश्व बौद्धिक सम्पदा संकेतक रिपोर्ट 2022 के अनुसार भारत में पेटेंट आवेदनों में सराहनीय वृद्धि हुई है। विश्व में पेटेंट दाखिल करने सम्बन्धी गतिविधि में भारत का सातवां स्थान है। भारत में अब तक पेटेंट दाखिल करने वालों की संख्या 1 लाख से ऊपर हो गई है। ये स्वदेशी तकनीक को साबित करने का अच्छा प्रमाण है। देश में विज्ञान प्रौद्योगिकी पारिस्थितिकी तंत्र की मजबूती के कारण आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, खगोल विज्ञान, सौर और पवन ऊर्जा, जलवायु संसाधन में अपार संभावनाएं विकसित हुई हैं। देश की नयी शिक्षा नीति में विज्ञान शिक्षा के व्यावहारिक पक्ष और तकनीकी दक्षता पर विशेष बल दिया गया है। विज्ञान के क्षेत्र में भारत सरकार द्वारा इंस्पायर योजना शुरू की गई। इंस्पायर योजना का उद्देश्य छात्रों को विश्वविद्यालय स्तर पर विज्ञान के क्षेत्र में अनुसंधान में कैरियर बनाए के लिए प्रोत्साहित करना है। नेशनल रिसर्च फाउंडेशन के प्रावधानों को 5 फ़रवरी 2024 को स्वदेशी अनुसंधानों को बढ़ावा देने के लिए लागू किया गया था। विज्ञान के उच्च शिक्षा क्षेत्र में महिलाओं को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार द्वारा किरण कार्यक्रम आरम्भ किया गया। कोविड 19 महामारी के समय भारत ने को–वैक्सीन बनाकर पूरे विश्व में स्वदेशिता की मिसाल कायम की थी। स्वदेशी तकनीक को जन–जन तक पहुंचाने में विज्ञान और तकनीकी संचारकों की अहम् भूमिका होती है। अतएव इसी क्रम में हम भी स्वदेशी तकनीकी की महत्ता को अपने आलेख के द्वारा जन जन तक पहुंचा रहे हैं। भारत का भविष्य स्वदेश तकनीक के विकास से संवरेगा और निखरेगा। देश के रक्षा अनुसंधान और विकास संगठन (डी आर डी ओ) ने वर्ष 2022 में देश के रक्षा कवच में चार चाँद लगाए थे। वर्ष 2022 में डी आर डी ओ ने स्वदेशी तकनीक से निर्मित मानव रहित विमान का सफलता पूर्वक परीक्षण किया था। चंद्रयान–3 भारत का महत्वाकांक्षी और सफल चंद्र मिशन था। चंद्रयान–3 का चंद्रमा के दक्षिणी ध्रुव की सतह पर सॉफ्ट लैंडिंग कराने का भारत का सफल प्रयास रहा। चंद्रमा के इस हिस्से तक पहुंचने वाला भारत एकमात्र देश है। चंद्रयान–3 के माध्यम से, भारत का लक्ष्य अपनी तकनीकी कौशल, वैज्ञानिक क्षमताओं और अंतरिक्ष अन्वेषण के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को प्रदर्शित करना था। चंद्रयान–3 का सफल परीक्षण स्वदेशी तकनीक का सर्वोत्तम उदाहरण है।

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) ने मछली पकड़ने की नौकाओं से आपातकालीन संदेश भेजने के लिए समुद्र में मछुआरों के लिए आपदा चेतावनी प्रेषित्र (डीएटी) नामक एक स्वदेशी तकनीकी समाधान विकसित किया है। संदेश एक संचार उपग्रह के माध्यम से भेजे जाते हैं और एक केंद्रीय नियंत्रण स्टेशन (आईएनएमसीसीः भारतीय मिशन नियंत्रण केंद्र) में प्राप्त होते हैं, जहां मछली पकड़ने की नौका की पहचान और स्थान के लिए चेतावनी संकेतों को डिकोड किया जाता है। निकाली गई जानकारी को भारतीय तटरक्षक (आईसीजी) के तहत समुद्री बचाव समन्वय केंद्रों (एमआरसीसी) को अग्रेषित किया जाता है। इस जानकारी का उपयोग करके एमआरसीसी संकट में मछुआरों को बचाने के लिए खोज और बचाव अभियान शुरू करने के लिए समन्वय करता है। इसके अलावा, उपग्रह संचार और उपग्रह नौवहन में तकनीकी विकास का लाभ उठाते हुए इसरो ने उन्नत क्षमताओं और दूसरी पीढ़ी के डीएटी

(डीएटी–एसजी) के लिए विकसित होने वाली सुविधाओं के साथ डीएटी में सुधार किया है। डीएटी–एसजी में समुद्र से संकट चेतावनी सक्रिय करने वाले मछुआरों को वापस सूचना की पुष्टि भेजने की सुविधा है। यह उसे उसके पास आने वाले बचाव का आश्वासन देता है। समुद्र से विपदा संकेत प्रसारित करने के अलावा, डीएटी–एसजी में नियंत्रण केंद्र से संदेश प्राप्त करने की क्षमता है। इसका उपयोग करते हुए, खराब मौसम, चक्रवात सुनामी या किसी अन्य आपात स्थिति की घटना होने पर समुद्र में मछुआरों को अग्रिम चेतावनी संदेश भेजे जा सकते हैं। इस प्रकार, मछुआरे घर वापस जा सकेंगे या सुरक्षित स्थानों पर जा सकेंगे। इसके अलावा, संभावित मछली पकड़ने के क्षेत्रों (पीएफजेड) के बारे में जानकारी नियमित अंतराल पर डीएटी–एसजी का उपयोग करके मछुआरों को भी प्रेषित की जाती है। डाट–एसजी को ब्लूटूथ इंटरफेस का उपयोग करके मोबाइल फोन से जोड़ा जा सकता है और मोबाइल में एक ऐप का उपयोग करके संदेश मूल भाषा में पढ़े जा सकते हैं। केंद्रीय नियंत्रण केंद्र (आईएनएमसीसी) में सागरमित्र नामक एक वेब आधारित नेटवर्क प्रबंधन प्रणाली है जो पंजीकृत डेटा–एसजी का डेटाबेस बनाए रखती है और एमआरसीसी को नाव के बारे में जानकारी प्राप्त करने, वास्तविक समय में विपदा में नाव का समन्वय करने में मदद करती है। इससे भारतीय तटरक्षक को बिना किसी देरी के संकट के समय खोज और बचाव कार्य करने में मदद मिलती है। कृषि क्षेत्र में भारत ने स्वदेशी तकनीक का इस्तेमाल कर भारत के किसानों को सहूलियत दी है। जेनेटिक इंजीनियरिंग ने एक पौधे या जीव को दूसरे पौधे या जीव या इसके विपरीत स्थानांतरित करने में सक्षम बना दिया है। इस तरह की इंजीनियरिंग फसलों में कीटों (जैसे बीटी कॉटन) और सूखे के प्रतिरोध को बढ़ाती है। प्रौद्योगिकी के माध्यम से किसान दक्षता और बेहतर उत्पादन के लिये प्रत्येक प्रक्रिया का विद्युतीकरण करने की स्थिति में हैं।

डिजिटल कृषि मिशन: कृषि क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता, ब्लॉकचेन, रिमोट सेंसिंग और जी आई एस तकनीक, ड्रोन व रोबोट के उपयोग जैसी नई तकनीकों पर आधारित परियोजनाओं को बढ़ावा देने हेतु सरकार द्वारा वर्ष 2021 से वर्ष 2025 तक के लिये यह पहल शुरू की गई है।

एकीकृत किसान सेवा मंच (यू एफ एस पी): यह कोर इंफ्रास्ट्रक्चर, डेटा, एप्लीकेशन और टूल्स का एक संयोजन है जो देश भर में कृषि पारिस्थितिकी तंत्र में विभिन्न सार्वजनिक व निजी आईटी प्रणालियों की निर्बाध अंतःक्रियाशीलता को सक्षम बनाता है।

कृषि में राष्ट्रीय ई–गवर्नेंस योजना: यह एक केंद्र प्रायोजित योजना है, इस योजना को वर्ष 2010–11 में 7 राज्यों में प्रायोगिक तौर पर शुरू किया गया था। इसका उद्देश्य किसानों तक समय पर कृषि संबंधी जानकारी पहुँचाने के लिये सूचना और संचार प्रौद्योगिकी का उपयोग कर भारत में तेज़ी से विकास को बढ़ावा देना है। जैसे–जैसे दुनिया क्वांटम कंप्यूटिंग, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, बिग डेटा और अन्य नई तकनीकों की ओर बढ़ रही है, भारत के पास आईटी दिग्गज होने का लाभ उठाने और कृषि क्षेत्र में क्रांति लाने का एक ज़बरदस्त अवसर है। भारतीय वैदिक तकनीक का उपयोग कर हमे स्वदेशी होने का गौरव प्राप्त है। वैदिक ग्रन्थ इसका अच्छा उदाहरण है। हवन से हम वातावरण को शुद्ध कर सकते हैं। राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली और इसके आसपास के इलाकों में प्रदूषण के बेहद खतरनाक स्तर पर चिंता जताते हुए विशेषज्ञों ने घर के वातावरण से प्रदूषित हवा को शुद्ध करने के लिए वैदिक तकनीक का सुझाव दिए। इंटरडिसिप्लनरी जर्नल ऑफ यज्ञ रिसर्च में प्रकाशित शोध में दावा किया गया है कि वेदों और उपनिषदों समेत प्राचीन ग्रंथों में वर्णित यज्ञ नामक तकनीक विशेष रूप से अंदर के पर्यावरण में कणिका तत्व (पीएम) स्तर को कम कर सकती है जो वायु प्रदूषण का कारण है. यज्ञ एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें मंत्रों के लयबद्ध जप के साथ जड़ी–बूटियों को आग में छोड़ा जाता है। प्रारंभिक सबूतों के अनुसार, यज्ञ वायु प्रदूषण से उत्पन्न सल्फर डाइऑक्साइड और नाइट्रोजन डाइऑक्साइड के स्तर के साथ ही सूक्ष्मजीवों जैसे जैविक वायु प्रदूषकों को कम कर देती है। विकसित भारत/2047 के राष्ट्र कल्याण के लक्ष्य को साकार करने में स्वदेशी तकनीकी की अहम् भूमिका होगी। इसी के चलते हमारा राष्ट्र विकसित भारत कहलाएगा। अतएव हम कह सकते हैं कि स्वदेशी तकनीक, विकसित भारत का पर्याय है। आध्यात्मिक दृष्टिकोण से स्वदेशी तकनीकी का उपयोग, विकसित भारत को परिलक्षित करेगा।

–असिस्टेंट प्रोफेसर
सैम हिग्गिनबॉटम यूनिवर्सिटी
ऑफ़ एग्रीकल्चर टेक्नोलॉजी एंड साइंसेज,
नैनी, प्रयागराज (उत्तर प्रदेश)

ISSN No. : 0970-9398

फ्रेडरिक पिन्काट-विदेशी धरती के महान हिंदी साधक व उन्नायक

— अखिलेश आर्येन्दु

ब्रजभाषा में लिखी उनकी कविता से यह अनुमान लगाना अत्यंत कठिन है कि सात समुंदर पार कोई अहिंदी भाषा–भाषी अंग्रेज बिना किसी गुरु के मार्गदर्शन के क्या छंद–बद्ध कविता भी लिख सकता है? जन्म यदि पाश्चात्य देश इंग्लैंड की संस्कृति, भाषा और मज़हब के वातावरण में हुआ हो, तब तो यह और भी अद्भुत घटना है। विचारणीय है जिस व्यक्ति की प्रारम्भिक शिक्षा अंग्रेजी भाषा और शिक्षालय में हुई हो, जो न मातृभाषा के रूप में हिंदी या अन्य भारतीय भाषाओं को पढ़ा–लिखा और समझा हो, फिर भी भारत की एक मधुर भाषा में छंदबद्ध कविता लिखता है। उन्होंने हिंदी और देश सुधार के कार्य भारत–भूमि पर रहकर नहीं किए लेकिन जितना किया वह किसी महान् भारतीय हिंदी सेवी से कम नहीं किया। इसलिए फ्रेडरिक आज भी हिंदी साहित्य के इतिहास में उसी प्रकार से स्मरण किए जाते हैं जैसे अन्य विदेशी हिंदी–सेवी या विद्वान।

फ्रेडरिक पिंकाट का जीवन जिस प्रकार हिंदी और भारतीय संस्कृति के लिए समर्पित रहा उससे यही अनुमान लगाया जा सकता है कि फ्रेडरिक इस जन्म में अंग्रेजों की भूमि पर अवश्य पैदा हुए थे लेकिन पूर्व जन्म के उनके संस्कार निश्चित ही भारतीय रहे होंगे। जो इतने प्रबल हुए कि उन्होंने अंग्रेजी और अंग्रेजियत के स्थान पर हिंदी और हिंदी संस्कृति को जीवन का अंग बनाया। हिंदी भाषा और साहित्य से परिचित होने और हिंदी को अपनाने के उपरान्त वे तत्कालीन साहित्यकारों के कृतित्व और व्यक्तित्व से भी परिचित हुए। इसी क्रम में वे भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र और अन्य साहित्यकारों से भी परिचित हुए। महान् हिंदी सेवी फ्रेडरिक पिंकाट द्वारा भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र को एक पत्र में ब्रज भाषा में लिखी उनकी यह कविता आज भी हिंदी इतिहास का अंग मानी जाती है। छंदमय कविता को पढ़कर कवि फ्रेडरिक की प्रतिभा का अंदाजा लगाया जा सकता है।

बैस बंस अवतंस श्री बाबू हरिचन्द जू।
छीर नीर कलहंस टुक उत्तर लिखि देव मोहि।।
पर उपकार में उदार अवनी में एक,
भाषत अनेक यह राजा हरिचन्द है।
विभव बड़ाई बपु बसत विलास लखि,
कहत यहाँ के लोग बाबू हरिचन्द्र है।
चन्द वैसो अमिय अनंदकर आरत को,
कहत कविंद वह भारत को चन्द है।
कैसे अब देखें, को बतावें, कहां पावैं, हाय,
कैसे वहां आवें, हम कोई मतिमंद हैं।
श्रीयुत सकल कविंद कुल नुत बाबू हरिचन्द।
भारत हृदय सतार नभ उदय रहो जनु चन्द।।

(हिंदी साहित्य का इतिहास–शुक्ल पृष्ठ 482)

ब्रज भाषा की उनकी ये पंक्तियां पिंकाट के भारतेंदु बाबू के प्रति अतिशय प्रेम की अभिव्यक्ति ही नहीं हैं अपितु हिंदी संसार के प्रति लगाव का भी द्योतक है। दूसरी बात, ब्रजभाषा में उनका कविता लिखने का उद्देश्य उनके हिंदी और देवनागरी लिपि के प्रति अत्यंत अनुराग की अभिव्यक्ति ही नहीं है अपितु स्वदेशवासियों से पुरानी ब्रजभाषा का व्यवहार छुड़ाना और उर्दू के हिमायतियों से अरबी लिपि छोड़कर नागरी लिपि को ग्रहण कराना था। पिंकाट साहब एक समझौता चाहते थे कि एक पक्ष अपनी प्रिय बोली को त्याग दे और दूसरा पक्ष अपनी अभ्यस्त लेखन रीति का त्याग करे। इसमें उनका अत्यंत व्यापक उद्देश्य छिपा दिखता है। जिसमें एक विशाल प्रान्त के मानसिक प्रयत्नों में एकता आएगी और उत्तर भारत के बौद्धिक विकास की सबसे बड़ी बाधा दूर हो जाएगी। फ्रेडरिक एक ऐसे हिंदी सेवक और लेखक व नागरी सेवक नहीं हैं जिन्होंने कभी किसी लालच, मोह या दबाव में हिंदी व देवनागरी को छोड़कर उर्दू या अरबी का प्रभाव ग्रहण किया हो। ऐसा लगता है जैसे देवनागरी लिपि और हिंदी को वे पूर्व जन्म के संस्कारों से आप्लावित लेकर आए थे। हमें यह कहने व मानने में हिचक नहीं होनी चाहिए कि आप का सम्पूर्ण जीवन अदभुत और कर्मवीरों वाला था। एक अंग्रेज हिंदी और देवनागरी के लिए इतना अनुरागी (दिवाना) बन जाए कि वह हिंदी और देवनागरी सेवा को ही जीवन का एक मात्र लक्ष्य और उद्देश्य मान ले, यह कोई अविश्वसनीय घटना ही मानी जाएगी।

फ्रेडरिक जी के संबंध में अभी और शोध की आवश्यकता है। मात्र पढ़ कर उनके संबंध में बहुत कुछ नहीं जाना जा सकता है। हिंदीतर भाषा–भाषी भारत–इतर हिंदी सेवकों ने हिंदी का कितना विकास किया, उनको हिंदी से कितना प्रेम था और अत्यंत कठिन परिस्थितियों में भी उन्होंने झंझावातों की परवाह न करते हुए भी भारत और हिंदी के लिए स्वयं को समर्पित कर दिया था, इसके लिए हिंदी साहित्य का विस्तृत इतिहास के साथ उनके द्वारा

ISSN No. : 0970-9398

किए गए ऐतिहासिक कार्यों के लिए उनके सम्पूर्ण कृतित्व व व्यक्तित्व की गहन जानकारी भी आवश्यक है। इन्हीं हिंदी प्रेमियों, हिंदी सेवकों व लेखकों में फ्रेडरिक पिंकाट का नाम हिंदी इतिहास के पन्नों में टंकित है। उन्होंने हिंदी के लिए अपना जो सर्वोत्तम अवदान समर्पित किया, वह कई तरह के निजी स्वार्थों से ऊपर उठकर था।

फ्रेडरिक पिंकाट का जन्म 1826 ईस्वी में इंग्लैंड में हुआ था। अर्थाभाव के कारण पिंकाट बहुत अधिक शिक्षा नहीं प्राप्त कर सके। जीविका चलाने के लिए एक प्रेस में कम्पोजिटर हो गए लेकिन घर पर ही स्वतंत्र रूप से स्वाध्याय करते हुए संस्कृत, तमिल, बंगला, मलयालम, ब्रज, हिंदी आदि भाषाओं पर अधिकार कर लिया। यह इनके ज्ञानार्जन के लिए ही नहीं अपितु भारत को समझने के लिए वरदान सिद्ध हुआ। बचपन से ही स्वाध्याय और लेखन की प्रवृत्ति होने के कारण 1872 ई. में विभिन्न पत्रिकाओं में लिखना प्रारम्भ कर दिया था। हिंदी के प्रति अथाह प्रेम और श्रद्धा के कारण इंग्लैंड वालों को हिंदी सिखाने के उद्देश्य से 'हिंदी मेनुअल' नामक एक व्याकरण की पुस्तक लिखी। यह इतनी लोकप्रिय हुई कि इसके कई संस्करण निकले। यह पुस्तक तत्कालीन किसी अंग्रेज विद्वान् की लिखी हिंदी की प्रथम पुस्तक थी। इस पुस्तक का ही प्रभाव था कि अनेक अंग्रेजों ने इनकी पुस्तक से हिंदी सीखी। इस पुस्तक की लोकप्रियता ऐसी थी कि यह इंग्लैंड के सिविल सर्विस पाठ्यक्रम के लिए भी स्वीकृत थी। इसके अतिरिक्त हिंदी में दो पुस्तकें और लिखीं– (1) बालदीपक, चार भाग और (2) विक्टोरिया चरित। बालदीपक बिहार के हिंदी पाठ्यक्रम में लगी थी। इससे समझा जा सकता है कि उनकी हिंदी पर पकड़ किस कदर मजबूत थी।

फ्रेडरिक पिंकाट अपने तत्कालीन चर्चित प्रमुख साहित्यकारों –राजा लक्ष्मणसिंह, भारतेंदु बाबू हरिश्चन्द, श्रीधर पाठक, अयोध्या प्रसाद उपाध्याय, प्रताप नारायण मिश्र, कार्तिक प्रसाद खत्री आदि से हिंदी से सम्बंधित भिन्न–भिन्न विषयों जैसे हिंदी, हिंदुस्तानी, उर्दू के बारे में, सद्यः प्रकाशित कृतियों पर समय–समय पर सम्मति, प्रोत्साहन और प्रशंसात्मक पत्र–व्यवहार हुआ करता था। इंग्लैंड में हिंदी के कार्यों और स्थितियों की चर्चा एक पत्र के माध्यम से वे 1888 में करते हुए श्रीधर पाठक को लिखे पत्र में कहते हैं– "बीस साल पूर्व यूरोप के लोगों के बीच मैं लगभग अकेला था जो हिंदी के लिए सरकार के ऊपर दबाव डालता रहा। दस वर्ष पूर्व डॉ. हाल के सहयोग से सेक्रेटरी ऑफ स्टेट को यह मनवाने में सफल रहा कि इंग्लैंड छोड़ने के पूर्व (भारत में आने वाले अंग्रेजों को) हिंदी की एक परीक्षा उत्तीर्ण करना अनिवार्य किया जाए।" इस पत्र के अतिरिक्त पिंकाट अपने तत्कालीन प्रमुख साहित्यकारों से निरन्तर पत्र–व्यवहार किया करते थे। तत्कालीन हिंदी रचनाकारों से जब उन्हें उनकी लिखी हुई पुस्तकें मिलती थीं तो उनको आनंद का ठिकाना नही रहता। इस सम्बंध में उन्होंने भारतेन्दु हरिश्चन्द को 20 मार्च 1883 ईस्वी में एक पत्र लिखा– इन पोथियों (भारतीय साहित्यकारों की पुस्तकें) को पाने से मैं सबसे अधिक आनंदित हुआ और आनंद के कारण दो हैं। एक तो इन ग्रंथों के पढ़ने से मुझे हिंदी का अधिक ज्ञान होगा और दूसरा इनको पाने से स्पष्ट रूप से मालूम पड़ा कि हिंदुस्तान के लोगों में कोई स्वदेशी अनुराग है। किसी न किसी रूप में आप सबने सुना कि मैं हिंदी का विद्यार्थी हूँ तो आपने स्वदेशानुरागिता से ही मेरा उपकार उस अच्छी रीति से किया है। बिना शंका मैं आपके अनुग्रह को सदा याद रखूँगा।

वे अंग्रेजों द्वारा भारतीयों पर ढाए जा रहे जुल्म, शोषण, अनीति और हिंसा से बहुत दुखी और व्यथित रहा करते थे। जब तत्कालीन भारतीय पुलिस के अत्यंत अमानवीय व्यवहार को सुना तो वे इतने व्यथित हुए कि उन्होंने पुलिस की क्रूरता को उजागर करने के लिए लाहौर से प्रकाशित दैनिक ट्रिब्यून के सम्पादक को पत्र लिखा और वह पत्र प्रकाशित भी हुआ। अर्थात् वे हिंदी और देवनागरी के प्रति ही अत्यंत अनुराग नहीं रखते थे अपितु भारतीय समाज की दीन दशा पर भी चिंतित रहा करते थे। उनके साहित्य अनुराग, हिंदी व देवनागरी की सेवा व प्रचार–प्रसार से आचार्य राम चन्द्र शुक्ल भी प्रभावित थे। श्री शुक्ल ने हिंदी साहित्य के इतिहास में उनके योगदान का मूल्यांकन निम्न प्रकार किया है– अब भारत की देश भाषाओं के अध्ययन की ओर इंग्लैंड के लोगों का भी ध्यान अच्छी तरह जा चुका था। उनमें जो अध्ययनशील व विवेकी थे, जो अखंड भारतीय साहित्य–परम्परा और भाषा–परम्परा से अभिज्ञ हो गए थे, उन पर अच्छी तरह प्रकट हो गया था कि उत्तर भारत की असली स्वाभाविक भाषा का स्वरूप क्या है। इन अंग्रेज विद्वानों में फ्रेडरिक पिंकाट का स्मरण हिंदी–प्रेमियों को सदा बनाए रखना चाहिए। आचार्य शुक्ल की इस बात से यह समझा जा सकता है कि तत्कालीन हिंदी संसार में फ्रेडरिक साहब की हिंदी व देवनागरी सेवा का प्रभाव तत्कालीन हिंदी साहित्य के मूर्धन्य साहित्यकारों पर कितना गहरे तक था।

बिहार में मुजफ्फरपुर में खड़ी बोली पद्य का आंदोलन अयोध्या प्रसाद खत्री ने चलाया। बिहार में यह अपने तरह का नया आंदोलन था। इस आंदोलन में श्री पिंकाट ने समर्थन ही नहीं दिया अपितु उसके समर्थक और पोषक बनकर उसके महत्व को स्थान–स्थान पर रेखांकित भी किया। आप पहले विदेशी हिंदी सेवक थे जिन्होंने खड़ी बोली में पद्य रचना की उपयोगिता और महत्व को ठीक से

समझा। इस आंदोलन का हिंदी साहित्य में इसलिए भी महत्व है कि जब बहुभाषाविद् ग्रियसन ने हिंदी खड़ी बोली में पद्य रचना को व्यर्थ का श्रम बताया, तब आप ही ने इसके भविष्य के विषय में आश्वस्त होकर खत्री जी का साथ दिया। इस आंदोलन की सार्थकता को जन गण तक पहुंचाने के उद्देश्य से खत्री जी की खड़ी बोली में पद्य़ शीर्षक वाली लघु पुस्तिका को स्वयं–संपादित ही नहीं किया अपितु डब्ल्यू. एच. ऐलेन एंड कम्पनी से प्रकाशित भी कराया। शायद यह प्रथम अवसर था जब पिंकाट महोदय ने अंग्रेजी के शब्दों का हिंदी में ठीक–ठीक अनुवाद कर हिंदी विद्वानों के मध्य प्रतिष्ठा प्राप्त की। जिनमें ठेठ हिंदी का अनुवाद प्योर हिंदी और खड़ी बोली का अनुवाद करेक्ट स्पीच किया। इससे यह पता चलता है कि वे हिंदी अनुवाद को भी हर प्रकार से दुरुस्त देखना चाहते थे। खड़ी बोली को वे खरी बोली के रूप में खड़ा करना चाहते थे। जिसमें वे काफी हद तक सफल भी हुए। वे खड़ी बोली की उन्नति में उर्दू को बाधक मानते थे। इसका कारण वे तत्कालीन सरकार द्वारा उसे पोषण न प्राप्त होना और संरक्षण न मिलना मानते थे। उन्होंने देखा की हिंदी क्षेत्र के लोग ही हिंदी के प्रति वैसी श्रद्धा का भाव नहीं रखते जिससे हिंदी की प्रगति उत्तम प्रकार से हो, तो वे दुखी मन से भारतीयों को सम्बोधित करते हुए लिखते हैं–विगत 20 वर्षों में इसने बरबस सबका ध्यान अपनी ओर खींचा है, चूंकि इसमें लोच, शक्ति और ओज है। इसके बावजूद इसकी प्रगति का धीमा होना अत्यंत दुखदायी है। पिंकाट महोदया लिखते हैं– खड़ी बोली की स्थिति हिंदी की अन्य बोलियों के बीच वैसी है जैसी अंग्रेजी की अन्य बोलियों के बीच लंदन की बोली की।

पं. श्रीधर पाठक की पुस्तक एकांतवासी योगी की समीक्षा करते हुए जून 1888 की इंडियन मैगजीन में उन्होंने लिखा–स्पष्टतः यह एक विवेकी पुरुष का प्रयास है जो अपने देशवासियों को प्रेमालाप के अतिरेक से हटाकर प्रकृति की संतोषप्रद सुंदरता से परिचित कराता है। ऐसे प्रयास से हर प्रकार से बढ़ावा दिया जाना चाहिए, क्योंकि भाव–परिवर्तन का परिणाम यदि साकार हुआ तो भारत के लिए बहुत हितकारक सिद्ध होगा। वे हिंदी गद्य का विकास हिंदी के विकास के लिए उत्तम समझते थे। उन्होंने इस संबंध में लिखा है, –गद्यकार अपने देश की शक्ति हैं, जो सात्विक मानसिक खुराक प्रदान करता है, जिसके कारण देश महान् बनता है। पिंकाट ने हितोपदेश मूल संस्कृत से अंग्रेजी में अनुवाद को संशोधित कर 1897 ई. में प्रकाशित कराया था। वहीं पर इतिहास, पुरातत्त्व और इतिहास के लुप्त होते हुए विषयों के प्रति उनकी सतर्क दृष्टि सदैव बनी रही। लल्लूलाल कृत प्रेमसागर के ईस्टविक द्वारा किए गए अंग्रेजी अनुवाद को उन्होंने संशोधित कर अपने आमुख के साथ 1897 में प्रकाशित कराया। इसमें वे हिंदी की उपेक्षा पर दुःख व्यक्त करते हुए कहते हैं–यह भारत का दुर्भाग्य है कि अपने महत्व के अनुरूप हिंदी को प्रोत्साहन नहीं दिया जाता, केवल व्यापारी, अध्यापक और मिशनरी की आवश्यकता के दबाव में इसके अध्ययन पर ध्यान देते हैं। फ्रेडरिक महोदय का हिंदी प्रेम कितना गहरा था इसे उनके उर्दू में संपादित पत्र आईनए सौदागरी में हिंदी के लिए कुछ सुरक्षित रखे पन्नों में उनके लेख तथा भारत के हिंदी अखबारों जैसे हिंदुस्तान, आर्यदर्पण, भारतमित्र से प्राप्त प्रमुख उद्धरण भी छपते थे। हिंदी के लिए किसी अन्य विदेशी हिंदी सेवी ने इस प्रकार से हिंदी को विदेश में आधार देने का कार्य संभवतः नहीं किया। उनके हिंदी और हिंदुस्तान के प्रेम ने उन्हें नवम्बर 1895 ई. में भारत बुलवा ही लिया। यहां वे हिंदी की उन्नति के लिए कार्य करते हुए, 'रोहा घास' जिसके रेशों से कपड़े की बुनाई के लिए उत्तम सूत प्राप्त होते थे, की विकसित तकनीक से खेती कराने तथा व्यवसाय के लिए आए, लेकिन भारत आना उनके लिए कल्याणकारी सिद्ध नहीं हुआ। यहां वे अस्वस्थ रहने लगे और मां भारती और भारत मां की सेवा करता हुआ यह सरस्वती पुत्र 7 फरवरी 1896 को इस धरा धाम से हमेशा के लिए चला गया।

फ्रेडरिक पिंकाट के अथाह परिश्रम, अनुराग और हिंदी देवनागरी को यूरोप में प्रतिष्ठित करने के पावन लक्ष्य के कारण हिंदी और देवनागरी उन्नीसवीं शताब्दी में भारत से बाहर अपना पांव पसारने में सफल ही नहीं रही अपितु प्रतिष्ठित भी हुई। आश्चर्य की बात यह है कि यह उस देश में हुआ जिसका भारत गुलाम था। जहाँ अंग्रेजी ही धर्म, कर्म, दिनचर्या, संस्कृति, समाज और शोध की भाषा थी, लेकिन पिंकाट जैसे हिंदी के पुरोधा ने हिंदी को सींचा व सुधार ही नहीं किया अपितु यूरोप में इसकी पावन प्रतिष्ठा दिलाने के लिए अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगा दी। आज जब हिंदी अनेक भाषाओं के शब्दों को ग्रहण कर समृद्ध हो रही है पिंकाट साहब का हिंदी शुद्धता पर बल स्मरण हो रहा है। आज हिंदी की शुद्धता के लिए पिंकाट जैसी ही हस्ती की आवश्यकता है।

–समालोचक एवं पत्रकार
विश्वास नगर, शाहदरा दिल्ली–110032

ISSN No. : 0970-9398

बैंकों में बढ़ते साइबर अपराध और उनकी रोकथाम के उपाय

– राजीव कुमार

"सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में,
है बचके जरा रहना।
कब घटित हो जाए साइबर अपराध,
सदैव सतर्क रहना।।"

वर्तमान युग सूचना प्रौद्यागिकी का युग है। आज जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रौद्योगिकी ने अपनी विशिष्ट पहचान बनायी है। यह प्रौद्योगिकी की ही देन है कि हम हजारों किलामीटर दूर बैठे व्यक्ति से फोन या मोबाइल इत्यादि के माध्यम से ऑडियो या वीडियो कॉल कर बातें कर सकते हैं। भारत सहित पूरे विश्व में फैली कोरोना महामारी ने वर्ष 2020 और 2021 में जान एवं माल दोनों की काफी क्षति की है। एक अनुमान के मुताबिक हमारे देश में लगभग 10 लाख लोग इस महामारी का शिकार हुए थे।

उस समय केवल प्रौद्योगिकी ही एकमात्र सहारा बनकर सामने आयी थी जिससे हमारे देश सहित पूरी दुनिया की अर्थव्यवस्था चली, भले ही उसकी रफ्तार थोड़ी धीमी रही। हालांकि, इसके बाद इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या में बहुत अधिक वृद्धि हुई है। इसके साथ ही, स्माइर्ट फोन के माध्यम से ही बच्चों ने घर पर रहकर पढ़ाई की। मार्च 2020 में इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या 55% थी, जो कि जनवरी 2024 में बढ़कर लगभग 85% हो गयी।

भारत में बैंकिंग व्यवस्था :

बैंकिंग में साइबर अपराध इत्यादि को समझने से पूर्व भारत में बैंकों के इतिहास के बारे में थोड़ा जानकारी प्राप्त करना समीचीन होगा। वर्ष 2023 में भारत ने अपनी आजादी का 75वां अमृत महोत्सव मनाया है। हमारे देश में आजादी से पूर्व बैंकिंग व्यवस्था अत्यन्त सीमित थी। देश के कुछ गिने–चुने लोगों के पास ही बैंकिंग सुविधा हुआ करती थी। इसमें भी ज्यादातर रसूखदार लोग ही हुआ करते थे। गरीब या एक आम आदमी का बैंकिंग या बैंकों से दूर–दूर तक कोई लेना देना नहीं होता था। हमारे देश में अंग्रेजों के आधिपत्य के बाद वर्ष 1770 में बैंक ऑफ़ हिन्दुस्तान की स्थापना की गई थी हालांकि, यह बैंक 1832 में बंद हो गया। उसके बाद भारत में बैंकिंग प्रणाली को तैयार करने के उद्देश्य से बैंकों की स्थापना की गई। वर्ष 1806 में 'बैंक ऑफ़ बंगाल', 1840 में 'बैंक ऑफ बाम्बे' तथा 1843 में 'बैंक ऑफ मद्रास' की स्थापना की गई।

इन तीनों बैंकों के विलय के बाद 1921 में इसे 'इंपीरियल बैंक ऑफ़ इंडिया' नाम दिया गया। हालांकि, 01 जुलाई, 1955 को इंपीरियल बैंक ऑफ़ इंडिया का राष्ट्रीयकरण किया गया तथा इसका नाम बदलकर भारतीय स्टेट बैंक (स्टेट बैंक ऑफ़ इंडिया) कर दिया गया। इसके बाद, देश में हुए वाणिज्यिक बैंकों के राष्ट्रीयकरण के तहत वर्ष 1969 में 14 बैंकों तथा वर्ष 1980 में अन्य 8 बैंकों को राष्ट्रीयकृत किया गया। पिछले 8 वर्ष में कुछ सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के आपस में विलय के बाद आज सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की संख्या मात्र 12 रह गई है जिसमें भारतीय स्टेट बैंक भी शामिल है।

बैंकिंग में साइबर अपराध :

इसमें कोई शक नहीं है कि आज सूचना प्रौद्योगिकी ने जीवन के सभी क्षेत्रों को प्रभावित किया है। बैंकिंग भी इससे अछूता नहीं है। आज बैंकिंग भी पूरी तरह से प्रौद्योगिकीयुक्त बन चुकी है। आज बैंकिंग में अधिकांश कामकाज ऑनलाइन या प्रौद्योगिकी की सहायता से किए जा रहे हैं। बैंकों को किसी भी देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ कहा जाता है। हालांकि, कुछ कार्यों जैसे ऋण प्रदान करते समय साक्ष्यों इत्यादि की पहचान या व्यक्ति की पहचान करने हेतु ग्राहक की शाखा में उपस्थिति अनिवार्य मानी जाती है। लेकिन, अब डिजिटल ऋण को बढ़ावा देने के लिए ग्राहक से मिले बगैर उसे ऋण प्रदान करने पर जोर है। यह भी सत्य है कि जहां प्रौद्योगिकी ने बैंकिंग को फर्श से अर्श पर पहुंचाने का कार्य किया

है, वहीं बैंकिंग में होने वाली भौतिक धोखाधड़ियों की अपेक्षा साइबर अपराधों में बेतहाशा वृद्धि हुई है।

साइबर अपराध : वास्तव में, साइबर अपराध वह अपराध होता है जिसमें किसी न किसी रूप में इलेक्ट्रानिक उपकरणों या सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ (यूएनओ) के अनुसार–''साइबर अपराध वर्तमान में अपराधों में सबसे जघन्य अपराध हैं, जो विश्व समुदाय और मानवता के लिए एक बहुत गंभीर खतरा है।'' दिसम्बर 2023 में दैनिक भास्कर में प्रकाशित खबर के अनुसार, हमारे देश में कोरोना महामारी के बाद साइबर अपराधों में 24 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी दर्ज की गई है। इससे यह स्पष्ट होता है कि आजकल अपराधी साइबर तरीके से लोगों को नुकसान पहुंचाने में ज्यादा लगे हुए हैं। अपराधी प्रवृत्ति के लोग इसे अवसर मानकर समाज में भय का वातावरण तैयार कर रहे हैं। इन अपराधों पर तत्काल नियंत्रण किया जाना आवश्यक है। बैंकिंग में प्रौद्योगिकी के बढ़ते उपयोग के कारण, आपराधिक प्रवृत्ति के लोग आम जनमानस के साथ बैंकिंग में भी बड़ी मात्रा में साइबर अपराध कर रहे हैं। इसलिए, किसी ने बिल्कुल सही कहा है कि ''सावधानी हटी, दुर्घटना घटी''।

पुराने समय में घरों, दुकानों आदि में चोरी, डकैती होती थी, किन्तु आज आमने सामने की चोरी, लूटपाट का स्थान साइबर अपराध ने ले लिया है। ऐसा नहीं है कि आजकल चोरी, लूटपाट, डकैती पूरी तरह से बंद हो गयी हैं। इसे इस प्रकार भी कहा जा सकता है –

''चोर डाकू लूटेरे एवं झपटमार आदि,
थे लूटते धन पहले सामने आकर,
साइबर अपराधी करते हैं धोखाधड़ी,
सूचना जानकारी आदि चुराकर।।''

विभिन्न प्रकार के अपराधों को करने वाले हमारी छोटी से छोटी चूक का लाभ उठाते हैं और असावधानी बरतने वालों के साथ धोखाधड़ी आदि करते हैं। इसी को ध्यान में रखते हुए ही, भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा जून 2016 में बैंकों में घटित होने वाले साइबर अपराधों एवं उन्हें रोकने आदि के लिए विस्तृत दिशा–निर्देश जारी किए गए थे। इसके माध्यम से आरबीआई ने सभी बैंकों को अपने इंटरनेटबैंकिंग संबंधी नियमों को अधिक सुदृढ़ करने के लिए कहा था। आरबीआई द्वारा प्रत्येक बैंक में साइबर अपराध संबंधी मामलों की तात्कालिक रिपोर्ट प्रेषित करने के भी निर्देश दिए गए थे। इसके बाद से तो मानो सभी बैंक काफी सतर्क हुए किन्तु अभी भी साइबर अपराधों को रोकने के लिए और अधिक सतर्कता एवं सावधानी बरतने की आवश्यकता है। साइबर अपराधों से निपटना आज हम सभी के लिए विशेष चुनौती है।

साइबर अपराध के विभिन्न स्वरूप : इन्हें बैंकिंग के परिप्रेक्ष्य में इस प्रकार समझा जा सकता है :

1. **साइबर स्टॉलिंग** : किसी व्यक्ति द्वारा इलेक्ट्रानिक संचार माध्यमों का उपयोग करना जिससे वह किसी व्यक्ति से बार–बार संपर्क करता है और उसकी व्यक्तिगत या निजी जानकारी प्राप्त करने का प्रयास करता है। इसे ही साइबर स्टॉलिंग कहा जाता है।
2. **विशिंग** : यह एक ऐसा प्रयास है कि जिसमें ग्राहक की आईडी, नेट बैंकिंग पासवर्ड, एटीएम/क्रेडिट कार्ड पिन, ओटीपी, एटीएम या क्रेडिट कार्ड समाप्ति तिथि, सीवीवी, आधार कार्ड नं., पैन कार्ड नं. इत्यादि को फोन के माध्यम से प्राप्त किया जाता है। इस प्रकार, ग्राहक की महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त कर साइबर अपराध को अंजाम दिया जाता है।
3. **साइबर बिलिंग** : इलेक्ट्रानिक अथवा संचार माध्यमों के उपयोग अर्थात् कंप्यूटर, मोबाइल फोन, लैपटॉप इत्यादि के माध्यम से किया जाने वाला ऐसा शोषण है जिससे ग्राहक को काफी मानसिक परेशानी होती है। यहॉ एक बात बहुत महत्वपूर्ण है कि मानसिक रूप से किया गया शोषण शारीरिक शोषण से अधिक गहरा होता है। क्योंकि शरीर पर लगी चोट का घाव तो भर जाता है लेकिन मन पर लगी चोट का घाव जीवन में कभी भी नहीं भर पाता है।
4. **स्मिशिंग** : स्मिशिंग एक प्रकार की धोखाधड़ी है जिसमें धोखेबाज व्यक्ति फर्जी फोन के माध्यम से पीड़ित को कॉलबैक करता है, जिसमें फर्जी वेबसाइट या फोन के माध्यम से फर्जी विषय

सामग्री दिखाई जाती है।

5. **डेबिट कार्ड या क्रेडिट कार्ड संबंधी धोखाधड़ी** : किसी दूसरे व्यक्ति के एटीएम या क्रेडिट कार्ड के माध्यम से अनधिकृत रूप से खरीदारी करने या पैसा निकालने के लिए इस प्रकार की धोखाधड़ी का उपयोग किया जाता है। इसमें डेबिट या क्रेडिट कार्ड संबंधी जानकारी धोखाधड़ी से प्राप्त कर ली जाती है।

5. **व्यक्तिगत पहचान की चोरी करना:** किसी अन्य व्यक्ति के इलेक्ट्रानिक हस्ताक्षर, पासवर्ड या अन्य किसी विशिष्ट पहचान का उपयोग करते हुए उसे चुराना ही व्यक्तिगत पहचान की चोरी माना जाता है। इसमें अत्यन्त सतर्क रहने की आवश्यकता है।

6. **फिशिंग** : यह एक ऐसी धोखाधड़ी है जिसमें ग्राहक आईडी, पिन, क्रेडिट/डेबिट कार्ड नंबर, कार्ड समाप्ति तिथि, सीवीवी नं. आदि ईमेल के माध्यम से मांगने का प्रयास किया जाता है जो कि देखने में तो सही प्रतीत होता है लेकिन वह एकदम धोखाधड़ी ही होती है जिससे भविष्य में काफी नुकसान होता है।

7. **स्मैसिंग** : जब कोई व्यक्ति ईमेल, एसएमएस, एमएमएस एवं अन्य किसी ऐसे ही इलेक्ट्रानिक माध्यम से कोई अनधिकृत वाणिज्यिक मेल प्राप्त करता है तो उसे स्मैसिंग कहते हैं। वे इसके माध्यम से किसी व्यक्ति या सेवा को खरीदने के लिए अनुरोध करते हैं या वेबसाइट देखने के लिए अनुरोध करते हैं जहाँ पर बैंक खाते, एटीएम या क्रेडिट कार्ड आदि का विवरण चुराए जाने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार, हैकर्स सामान्य लोगों की जानकारी का गलत उपयोग करके उन्हें काफी नुकसान पहुंचाते हैं।

8. **रैनसमवेयर** : यह एक कम्प्यूटर वायरस है जोकि डेस्कटॉप, लैपटॉप, मोबाइल फोन इत्यादि जैसे संचार माध्यमों में स्टोर की गई फाइलों इत्यादि को नुकसान पहुंचाता है, जिससे वह डाटा या ऑकड़े होल्ड हो जाते हैं। पीड़ित व्यक्ति को उसकी फाइल वापस करने या उसकी डिवाइस को सही स्थिति में पाने के लिए उनसे पैसा मांगा जाता है। इसमें अपराधी जल्दी से पकड़ में भी नहीं आता है और उनका पता लगाना भी बहुत कठिन होता है।

9. **वायरस, वार्मस एवं ट्रोजन होर्स** : कम्प्यूटर वायरस एक प्रोग्राम है जिससे कम्प्यूटर की फाइल को नुकसान पहुंचता है या उसमें बदलाव आ जाता है। वार्मस एक ऐसा मैलेसियस प्रोग्राम है जो कि स्थानीय डिवाइस, नेटवर्क शेयर इत्यादि पर बार बार उसकी कॉपी करता है। ट्रोजन होर्स कोई वायरस नहीं है। यह एक त्रुटिपूर्ण प्रोग्राम है जो कि दिखने में ठीक लगती है। इसके माध्यम से व्यक्तिगत एवं गोपनीय जानकारी चुराने का प्रयास किया जाता है। इस तरह, कम्प्यूटर वायरस आदि से बहुत सावधान रहना चाहिए और सभी कम्प्यूटरों में एंटी वायरस अवश्य होना चाहिए ताकि कम्प्यूटर में उपलब्ध महत्वपूर्ण डाटा सुरक्षित रह सके।

10. **ईमेल स्पूफिंग** : अक्सर आपके इनबॉक्स या स्पैम बॉक्स में कई तरह के ईनाम देने वाले या बिजनेस पार्टनर बनाने वाले या फिर लॉटरी निकलने संबंधी मेल आते हैं। ये सभी मेल किसी दूसरे व्यक्ति के ईमेल या फर्जी ईमेल आईडी के जरिए किए जाते हैं। किसी दूसरे के ईमेल पते का उपयोग करते हुए गलत उद्देश्य से दूसरों को ईमेल भेजना इसी अपराध की श्रेणी में आता है। हैकिंग, फिशिंग, स्पैम और वायरस, स्पाईवेयर फैलाने के लिए इस तरह के फर्जी ईमेल का अधिक उपयोग किया जाता है। इसका उपयोग दूसरे लोगों को बदनाम करने के लिए किया जाता है।

11. **हैकिंग** : किसी कम्प्यूटर, डिवाइस, इंफॉर्मेशन सिस्टेम या नेटवर्क में अनधिकृत रूप से घुसपैठ करना और डेटा से छेड़छाड़ करना 'हैकिंग' कहलाता है। यह 'हैकिंग' उस सिस्टिम की फिजिकल एक्सेस और रिमोट एक्सेस के जरिए भी हो सकती है। जरूरी नहीं कि ऐसी 'हैकिंग' के दौरान उस सिस्टटम को नुकसान पहुंचा

ही हो। अगर कोई नुकसान नहीं भी हुआ है, तो भी सिस्टम में घुसपैठ करना साइबर अपराध के अंतर्गत आता है, जिसके लिए सजा का प्रावधान है। अभी हाल ही में, देश के सबसे बड़े अस्पताल एम्स दिल्ली का पूरा डाटा हैक कर दिया गया था। इससे वहॉं के मरीज व डॉक्टर सभी काफी परेशान हो गये थे।

12. **स्पाईवेयर** : अक्सर कंप्यूटर में आए वायरस और स्पाईवेयर को हटाने पर लोग ध्यान नहीं देते हैं। उनके सिस्टरम से होते हुए ये वायरस दूसरों तक पहुंच जाते हैं। हैकिंग, डाउनलोड, कंपनियों के अंदरूनी नेटवर्क, वाईफाई कनेक्शनों और असुरक्षित फ्लैश ड्राइव, सीडी के जरिए भी वायरस फैल जाते हैं। वायरस बनाने वाले अपराधियों की पूरी एक इंडस्ट्री है, जिनके खिलाफ सरकार द्वारा समय–समय पर कड़ी कार्रवाई की जाती है। हालांकि, इस दिशा में कोई संगठन बनाकर इस प्रकार की चुनौतियों से निपटा जाना ज्यादा कारगर सिद्ध होगा।

साइबर अपराध संबंधी कानून:

हाल के वर्षों में, भारत में साइबर अपराधों में तेजी से बढ़ोत्तरी हुई है। सरकार ऐसे मामलों को लेकर बहुत गंभीर है। भारत में साइबर अपराध के मामलों में सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 और सूचना प्रौद्योगिकी (संशोधन) अधिनियम, 2008 लागू है, मगर इसी श्रेणी के कई मामलों में भारतीय दंड संहिता (आईपीसी), कॉपीराइट कानून, 1957, कंपनी कानून, सरकारी गोपनीयता कानून और यहां तक कि आतंकवाद निरोधक कानून के तहत भी कार्रवाई की जा सकती है। साइबर अपराध के कुछ मामलों में भारत सरकार के सूचना प्रौद्योगिकी विभाग की ओर से जारी किए गए आई.टी. नियम, 2011 के तहत भी कार्रवाई की जाती है। इस कानून में निर्दोष लोगों को साजिशों से बचाने के लिए भी इंतजाम किए गए हैं, लेकिन स्मार्ट मोबाइल फोन, कंप्यूटर, इंटरनेट और दूरसंचार इस्तेमाल करने वालों को हमेशा सतर्क रहना चाहिए। उक्त विभिन्न प्रकार के साइबर अपराधों के लिए सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम 2000 की धारा 77बी, सूचना प्रौद्योगिकी (संशोधन) अधिनियम 2008 की धारा 42 (ए), धारा 66, 66 डी, आईपीसी की धारा 268 379, 405, 406, 417, 419, 420 और 465 के तहत अपराध साबित होने पर 3 वर्ष की जेल या 5 लाख रुपये तक जुर्माना या दोनों हो सकते हैं। देश की सुरक्षा को खतरा पहुंचाने के लिए फैलाए गए वायरस पर आतंकवाद से जुड़ी धारा 66 (एफ) भी लगाई जाती है। इसके अतिरिक्त आईपीसी की धाराएं भी लगाए जाने का प्रावधान है। दोष साबित होने पर 3 वर्ष तक की जेल या जुर्माना या दोनों हो सकते हैं।

दिनांक 28.11.2023 को नागपुर से प्रकाशित दैनिक भास्कर में छपे एक समाचार के अनुसार, वित्त सचिव ने बताया कि दिन–प्रतिदिन साइबर धोखाधड़ी के मामले बढ़ते जा रहे हैं। वित्त मंत्रालय, वित्तीय सेवाएं विभाग ने साइबर अपराध से निपटने के लिए सभी बैंकों में एक नोडल अधिकारी नियुक्त करने के लिए कहा है। इस संबंध में भारत सरकार, वित्त मंत्रालय, वित्तीय सेवाएं विभाग द्वारा धोखाधड़ी संबंधी मामलों से जुड़े 70 लाख मोबाइल कनेक्शन्स को डिस्कनेक्ट किया गया है। ये आंकड़े राष्ट्रीय अपराध नियंत्रण ब्यूरो से प्राप्त डाटा के आधार पर लिए गए हैं। इन मामलों में कुल 900 करोड़ रुपए बचाया गया है जिससे 3.5 लाख पीड़ितों को लाभ पहुंचा है। भारत सरकार साइबर अपराध से निपटने के लिए पूरी तरह से कृत संकल्प है। देश के आम नागरिकों के खून पसीने की गाढ़ी कमाई को सुरक्षित रखना सरकार का कर्तव्य है। इसी को ध्यान में रखते हुए, सभी बैंकों को अपने अपने बैंक में साइबर सेल को और अधिक दुरुस्त करना ही होगा। इस प्रकार की खबरों को आप समाचार–पत्रों में रोजाना पढ़ सकते हैं। ऐसी घटनाओं से सबक लेते हुए सतर्क रहने की नितांत आवश्यकता है।

उपर्युक्त के अतिरिक्त विभिन्न फर्जी वेबसाइटों के माध्यम से खरीदारी करवाने हेतु इंटरनेट बैंकिंग या एटीएम डेबिट/क्रेडिट कार्ड आदि का उपयोग किया जाता है जिससे ग्राहकों के साथ धोखाधड़ी होती है। साइबर अपराधों की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है और इसके शिकार वे लोग या ग्राहक ज्यादा होते हैं जिन्हें तकनीकी ज्ञान कम होता है या जिनमें सतर्कता एवं सूचना प्रौद्योगिकी संबंधी नियमों, कानूनों की जानकारी कम होती है। प्रौद्योगिकी के इस युग में किसी भी ग्राहक को अधिक सतर्क एवं

ISSN No. : 0970-9398

सजग रहने की आवश्यकता है अन्यथा उन्हें भारी नुकसान उठाना पड़ सकता है। आजकल अधिकांश लेनदेन ऑनलाइन हो रहे हैं। बैंकिंग के इस बदलते स्वरूप से बैंकिंग धोखाधड़ियों की संख्या भी काफी बढ़ी है। बैंकों में लगातार बढ़ते अपराधों में साइबर अपराध सर्वाधिक हैं।

साइबर अपराधों को रोकने संबंधी आवश्यक सुरक्षात्मक उपायः

साइबर अपराधों से होने वाली विभिन्न धोखाधड़ियों से बचने के लिए सतर्कता, सावधानी एवं तत्संबंधी जानकारी बहुत आवश्यक है। सुरक्षात्मक उपाय ही धोखाधड़ियों से बचने का सबसे सुगम तरीका भी है। इससे संबंधित कुछ आवश्यक सुरक्षात्मक उपाय इस प्रकार हैं –

1. कभी भी अपने बैंक खातों की जानकारी किसी अन्य व्यक्ति को न दें।
2. कभी भी अपने एटीएम डेबिट/क्रेडिट कार्ड की जानकारी किसी अन्य व्यक्ति से साझा न करें।
3. अपनी केवाईसी संबंधी जानकारी कभी भी किसी के साथ साझा न करें।
4. इंटरनेट का सदैव ही सुरक्षित उपयोग करना सुनिश्चित करें।
5. मोबाइल या अपने कम्प्यूटर में पिन, खाता संबंधी जानकारी न रखें।
6. किसी भी व्यक्ति से अपनी व्यक्तिगत या वित्तीय जानकारी साझा न करें।
7. एटीएम से पैसा निकालते समय किसी भी अनजान व्यक्ति से सहायता न लें।
8. साइबर कैफे में कभी भी इंटरनेट बैंकिंग संबंधी लेनदेन न करें।
9. लॉटरी निकलने संबंधी मेल या फोन कॉल का कभी भी जवाब न दें।
10. विभिन्न अनजान ईमेल आदि को ओपन न करें।
11. असुरक्षित वेबसाइट से कभी भी कुछ डाउनलोड न करें।
12. अपने कम्प्यूटर में कभी भी निशुल्क एंटीवायरस सक्रिय न करें। हमेशा स्टैंडर्ड कंपनी का एंटी वायरस उपयोग में लाएं।
13. यदि ग्राहक के साथ कुछ गलत होता है तो ऑनलाइन लेनदेन की जानकारी तुरंत अपनी शाखा में दें।
14. शाखाओं को भी ऑनलाइन लेनदेन संबंधी धोखाधड़ी की सूचना तत्काल नियंत्रक कार्यालय को देनी चाहिए।
15. एटीएम मशीनों तथा शाखा परिसरों में साइबर अपराधों के बारे में जागरूकता संबंधी सूचनाएं प्रदर्शित की जानी चाहिए ताकि आम जनता जागरूक हो सके।
16. विभिन्नि अखबारों, टीवी, रेडियो, सिनेमाहॉल, सार्वजनिक बस अड्डों, स्टेशनों, एयरपोर्टों एवं सोशल मीडिया पर साइबर अपराध संबंधी जागरूकता फैलायी जानी चाहिए जिससे इस प्रकार के मामलों में कमी हो सके।
17. **''इलाज से बचाव बेहतर''**: साइबर अपराध से बचाव हेतु सतर्कता और सावधानी ही मुख्य उपाय है।
18. **साइबर अपराध सतर्कता संबंधी टीम** : बैंकों में साइबर अपराधों से निपटने के लिए अलग टीम का गठन किया जाए और उस टीम को निरंतर तत्संबंधी अद्यतन जानकारी प्रदान की जानी चाहिए। साइबर अपराधों के मामलों को देख रहे कार्मिकों को निरंतर तकनीकी ज्ञान प्रदान करते रहना चाहिए और उनसे नित नई प्रौद्योगिकी के संबंध में जानकारी साझा की जानी चाहिए। अपराधी आजकल जिन तकनीकों का उपयोग ज्यादा कर रहे हैं साइबर अपराधों से निपटने वाले अधिकारियों इत्यादि को भी उन तकनीकों की पूर्ण जानकारी होनी चाहिए ताकि वे ऐसे मामलों से और अधिक सतर्कता, सावधानी एवं तत्परता से निपट सकें।
19. **सोशल मीडिया** : आज के समाज में ज्यादातर लोग सोशल मीडिया यथा वाट्सअप, फेसबुक,

ISSN No. : 0970-9398

इंस्टाग्राम, ट्विटर आदि जुड़े हुए हैं। उनमें से अधिकांश लोग अपनी हर प्रकार की गतिविधि यथा कहीं बाहर घूमने के लिए विदेश यात्रा पर जाना, किसी शादी समारोह में जाना, किसी जन्मदिन पार्टी में जाना, किसी शोक संतप्त परिवार से मिलना, कोई उपलब्धि प्राप्त करना, या अन्य किसी भी अवसर आदि की सूचना या जानकारी या फोटोज सोशल मीडिया पर तत्काल अपलोड कर देते हैं जिससे उनकी लाइव लोकेशन अपराधियों को पता चल जाती है। वे इन लोगों से तरह तरह की धोखाधड़ियाँ करते हैं। सोशल मीडिया का दुरुपयोग करने वाले लोगों से भी सावधान एवं सतर्क रहें और विभिन्न धोखाधड़ियों से बचें।

निष्कर्ष:

एक ओर जहाँ आज की नित नई बदलती प्रौद्योगिकी ने मनुष्य को त्वरित बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध कराई हैं, वहीं ऑनलाइन लेनदेनों में जोखिम भी बढ़ता जा रहा है। लेकिन, हम सभी को अपने बैंकिंग तंत्र को इतना मजबूत बनाना होगा कि कोई भी व्यक्ति सहज रूप में ऑनलाइन बैंकिंग कर सके। संयुक्त राष्ट्र संघ (यूएनओ) द्वारा साइबर अपराध को बहुत ही गंभीर खतरा बताया गया है जो कि वास्तुव में सत्य बात है। इसके साथ ही, साइबर अपराधियों द्वारा आजमाए जा रहे किसी भी प्रकार के हथकंडे को शुरू में ही ध्वस्त करना होगा। साइबर अपराधों से बचने के लिए सतर्कता एवं सावधानी ही एक मात्र अचूक बाण है। थोडी–सी लापरवाही आपके खाते को पूरी तरह से खाली करा सकती है। उदाहरण के लिए, नागपुर शहर के रहने वाले एक व्यक्ति का बाजार में शॉपिंग करते समय किसी व्यक्ति ने स्मार्ट मोबाइल फोन चुरा लिया। उस फोन में उनके अलग–अलग बैंकों के बैंक खातों के इंटरनेट बैंकिंग यूजर आईडी एवं पासवर्ड, ट्रांजेक्शन पासवर्ड आदि भी स्टोर थे। मोबाइल चुराने वाले ने इंटरनेट बैंकिंग का उपयोग करते हुए उसी रात्रि में उनके विभिन्न बैंकों के बैंक खातों से लगभग 3 लाख रुपए निकाल लिए। पुलिस में एफआईआर भी दर्ज हो गई लेकिन न तो मोबाइल फोन ही मिला और न ही पैसा वापस मिला। आपने देखा कि उनके द्वारा बैंकिंग की संपूर्ण जानकारी अपने मोबाइल फोन में सुरक्षित रखी गई थी जिसका फायदा मोबाइल चुराने वाले व्यक्ति ने उठाया। इसके साथ ही, आजकल ओटीपी मांगकर एवं क्यूआर कोड स्कैन करवाकर भी काफी साइबर धोखाधड़ी की जा रही है। इसमें आम जनता को सतर्क रहने की बहुत अधिक आवश्यसकता है।

अतः हमें इस बात से सीख लेनी चाहिए कि अपना इंटरनेट बैंकिंग यूजर आईडी/पासवर्ड कभी भी मोबाइल फोन, लैपटॉप या कम्प्यूटर इत्यादि में सेव नहीं करना चाहिए। साथ ही, अपनी इस तरह की जानकारी किसी अन्य व्यक्ति से भी साझा नहीं करनी चाहिए। हमारी थोड़ी सी लापरवाही हमें काफी नुकसान पहुंचा सकती है। इस प्रकार, कहा जा सकता है कि साइबर अपराधों से बचने के लिए संबंधित बैंकों को पूरी सतर्कता के साथ अपनी इंटरनेट बैंकिंग को सुरक्षित करना चाहिए तथा समय–समय पर इसकी समीक्षा भी करते रहना चाहिए ताकि उसमें निरंतर सुधार किया जा सके। इसके साथ ही, बैंकों को अपने ग्राहकों को भी ऊपर बताई गई विभिन्न अपेक्षित सावधानियों को बरतने के संबंध में जानकारी प्रदान करनी चाहिए ताकि आम जनता का पैसा सुरक्षित रहे। किसी भी प्रकार के संदेह वाले लेन–देन के बारे में बैंक कार्मिकों द्वारा ग्राहकों से उनके द्वारा दिए गए मोबाइल पर एक बार बातचीत अवश्य कर ली जानी चाहिए जिससे तथ्यपरक जानकारी प्राप्त हो सके। इस प्रकार, ग्राहकों के साथ होने वाली धोखाधड़ी को भी रोका जा सके और बैंकों में ग्राहकों का विश्वास भी हमेशा की तरह बना रहे। अंत में, मैं बस यही कहना चाहूंगा कि–

सभी प्रकार के बैंकिंग लेनदेन करते समय,
सदैव रहें सतर्क और सावधान।
साझा न करें खाते आदि की जानकारी,
वरना हो सकता है भारी नुकसान।।

–मुख्य प्रबंधक (राजभाषा)
बैंक ऑफ़ इंडिया, आंचलिक कार्यालय,
नागपुर–440001

ISSN No. : 0970-9398

हिंदी भारत की राजभाषा से विश्वभाषा की ओर

–सुजीत कुमार मेहता

राजभाषा से विश्व भाषा का विश्वव्यापी आधार
हिंदी का चतुर्दिक करना होगा अब विस्तार

हिंदी वैश्विक स्तर पर देशों में भारतीय संस्कृति को जिंदा रखने के लिए मातृभाषा या मूल भाषा ही नहीं, प्राण भाषा भी है। हिंदी, विश्वभर में बस रहे भारतवासियों की सांस्कृतिक भाषा है, जिसकी लंबी ऐतिहासिक परंपरा है और यही 'हिंदी भाषा' की शक्ति है जो कई बोलियों के रूप में विश्व में विकसित हो रही है। हिंदी ही वह शक्ति है जो विश्वभर में रह रहे भारतीयों को संस्कृति के आधार पर जोड़ सकती है और 'विश्व हिंदी सम्मेलन' के आयोजनों की यही सार्थकता है कि हिंदी की जड़ें विश्व भर में फैले और दूसरी ओर शाखा–दर शाखा विकास हो जिससे यह एक महावृक्ष बन सके। आज संयुक्त राष्ट्र संघ में हिंदी की मान्यता को लेकर जो प्रयास हो रहा है यदि उसमें हिंदी के वैश्विक योगदान को ले लिया जाए तो उसके समर्थन में उपयोगी तत्व स्वतः ही मिल सकते हैं। सदियों से हिंदी विश्व स्तर पर अपने अस्तित्व एवं महत्व का पताका फहरा रही है।

किसी भी भाषा की वैश्विकता को देखने के तीन संदर्भ होते हैं उस भाषा का अपना क्षेत्रीय संदर्भ, उस भाषा का अपना राष्ट्रीय संदर्भ और उसका अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ। भूमंडलीकरण के इस दौर में, हिंदी भाषा ही एक ऐसे भाषा परिवार की आधुनिक भाषा है जिसके बोलने वालों की संख्या विश्व में सबसे अधिक है। संसार की भाषाओं में हिंदी भाषा को तृतीय स्थान प्राप्त है। डॉ. सुशील कुमार चटर्जी ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'Indoaryan and Hindi में कहा था, "जहाँ तक बोलने वालों की संख्या का प्रश्न है, हिंदी भाषा विश्व में तीसरे नंबर पर है। विश्व में सबसे अधिक बोलने वालों की संख्या चीनी की है, दूसरे नंबर पर अंग्रेजी है और तीसरे नंबर पर हिंदी।" हिंदी भाषा की बोलियाँ उपबोलियाँ तथा उसके स्थानीय रूप भी विश्व में किसी अन्य भाषा से कहीं अधिक है। अतः हिंदी का अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपना महत्व है।

भारत एशिया महादेश का एक प्रमुख देश है और यहाँ की राष्ट्रभाषा हिंदी है। एशिया महाद्वीप की भाषाओं में हिंदी ही एक ऐसी भाषा है, जो अपने देश के साथ–ही–साथ अंतर्राष्ट्रीय देशों में भी बोली और लिखी जाती है। विश्वकवि रवींद्रनाथ ठाकुर ने हिंदी भाषा के संदर्भ में लिखा है कि भारतीय भाषाएँ नदियाँ हैं और हिंदी महानदी यदि और नदियों का पानी आना बंद हो जाए तो हिंदी स्वयं सूख जाएगी और यह नदियाँ भी भरी–पूरी नहीं रह सकेंगी। आज भूमंडलीकरण के इस दौर में देखा जाए तो भारतीय संस्कृति ने क्रमशः विश्व संस्कृति में अपनी एक अलग पहचान बनाई है। विश्व संस्कृति आज भारतीय संस्कृति से जुड़े हुई हैं तथा 'हिंदी' ही वह कड़ी है जिसने विश्व–संस्कृति एवं भारतीय संस्कृति के बीच की समन्वय की एकता को मजबूत बनाया है। आज से लगभग कई वर्ष पूर्व 'विश्व हिंदी सम्मेलन' में 11 जनवरी, 1975 को नागपुर के मुख्य पंडाल में जो गोष्ठी हुई थी, उस गोष्ठी का प्रारंभ करते हुए मॉरीशस के युवा क्रीड़ा मंत्री श्री दयानंदलाल वसंतराय ने जो कामना की वह बहुत ही महत्वपूर्ण है। उन्होंने कहा "हिंदी की गंगा द्वारा प्रदान की गई यह विश्वव्यापी भावात्मक एकता अमर रहे और संसार के विभिन्न भागों में बसे हुए हिंदी भाषा–भाषी लोग सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं भावात्मक स्तर पर एक–दूसरे के अधिक से अधिक समीप आकर एक ऐसे भाईचारे में बंध जाएँ जो सद्भाव, सहयोग, संवेदना, सहिष्णुता तथा मैत्री पर आधारित हो।"

उन्होंने मॉरीशस में हिंदी की स्थिति पर प्रकाश डालते हुए कहा था, "मॉरीशस में हिंदी के प्रति बहुत उत्साह है। हिंदी हमारी संस्कृति और धर्म की भाषा है। हमारे उन्मुक्त चिंतन की भाषा है। इसके द्वारा हम विश्व के एक बहुत बड़े जनसमुदाय के साथ जुड़े हैं। उससे कटना हमारे लिए संभव नहीं। हिंदी भारत की राजभाषा है। हमें भारत से सहज स्वाभाविक प्रेम है। उसकी उन्नति हमें सुख देती है और विपन्नता दुःख!"

भूमंडलीकरण मूल रूप से दो बातों से जुड़ी हुई है "निजीकरण एवं उदारीकरण।" आज के इस वैश्वीकरण युग में भारत की राजभाषा' 'हिंदी' ने स्वराष्ट्र के साथ साथ अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी अपना संबंध स्थापित किया है।

भूमंडलीकरण का तात्पर्य है–आर्थिक उदारीकरण। भूमंडलीकरण के दौर में आज विश्व की अर्थव्यवस्थाओं का उदारीकरण हो रहा है। भारत में 1983 में प्रौद्योगिकी नीति का निर्माण हुआ था। भारत के भूमंडलीकरण की बुनियादी मान्यता यह है कि अमेरिका की राजनीतिक आर्थिक चौधराहट और यूरोप की सभ्यतामूलक विश्व दृष्टि के तहत संचालित यह प्रक्रिया भारतीय लोकतंत्र के संस्थापक मूल्यों और संरचनाओं को बेहद रफ्तार और निर्ममता से बदल रही है।

भूमंडलीकरण के इस दौर में जिस तेजी के साथ विश्व में परिस्थितियाँ बदलती जा रही है भारत उनसे अछूता नहीं है। दरअसल आज भारत इस बदलाव के पटल पर एक सशक्त नायक के रूप में उभर रहा है। विभिन्न क्षेत्रों में नए इतिहास की रचना की जा रही है। आज भारत अंतरिक्ष कार्यक्रम, कंप्यूटर, सूचना प्रौद्योगिकी, प्रतिरक्षा, नाभिकीय कार्यक्रम, कृषि, मानव स्वास्थ्य, महासागर विकास जैसे क्षेत्रों में विश्व मानचित्र पर एक सशक्त पहचान बना चुका है। भारतवर्ष आज एक सशक्त विश्व शक्ति के रूप में उभर रहा है।

आज हिंदी तकनीक एवं सूचना प्रौद्योगिकी के साथ कदम मिलाकर चलने में समर्थ है जिससे वह 'ग्लोबल विलेज' में प्रवेश कर चुकी है। प्राचीन भारतीय संस्कृति में ज्ञान का महत्व था। वर्तमान युग में सूचना प्रौद्योगिकी ज्ञान की केंद्र–बिंदु है। आवश्यकतानुसार, विभिन्न दिशाओं में ज्ञान का संप्रेषण करना प्रौद्योगिकी का मुख्य उद्देश्य है।

आज भारत प्रौद्योगिकी उन्नति को अपनाकर द्रुत गति से विकास कर रहा है और जापान, अमेरिका जैसे विकसित देशों की श्रेणी में खड़ा होने जा रहा है। भूमंडलीकरण के इस दौर में आज भारत के बाहर भी हिंदी का व्यापक प्रचार–प्रसार हो रहा है। हिंदी अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मात्र विचाराभिव्यक्ति का साधन नहीं, बल्कि राजनीतिक और सांस्कृतिक उद्देश्यों की प्राप्ति का भी एक समर्थ साधन सिद्ध हो चुकी है। हिंदी का अंतर्राष्ट्रीय संबंध में सबसे महत्वपूर्ण प्रसंग हिंदी के विश्व–मैत्री की एक कड़ी होने का है।

'द्वितीय विश्व हिंदी सम्मेलन' में 'धर्मयुग' के यशस्वी संपादक डॉ. धर्मवीर भारती ने कहा था, "मैं संसार में मॉरीशस का विशेष महत्व इस दृष्टि से भी मानता हूँ कि यह एक ऐसा देश है जिसने अपनी आजादी की लड़ाई हिंदी भाषा के सहारे लड़ी और उन मूल्यों की, मानव अस्मिता की उस स्थापना के लिए अपनी भाषा के माध्यम से प्रयास किया।"

भारत में देश की आजादी की लड़ाई में महात्मा गांधी ने हिंदी के अस्त्र का ही सहारा लिया। वे प्रायः 1910 से ही कहा करते थे कि राष्ट्रभाषा हिंदी का सवाल मेरे लिए देश की स्वतंत्रता से कम महत्वपूर्ण नहीं। वेस्टइंडीज, गुयाना, त्रिनिदाद, सूरीनाम या कुछ अन्य देशों में हिंदी सांस्कृतिक एकता का एक समर्थ साधन है।

14 सितंबर, सन् 1949 भारतीय इतिहास की एक गौरवपूर्ण तिथि है। क्योंकि इसी दिन स्वतंत्र भारत की संविधान सभा ने हिंदी को राजभाषा और देवनागरी को राष्ट्रलिपि घोषित किया था। "एक हृदय हो भारत जननी" यही मूलमंत्र राजभाषा हिंदी के प्रचार प्रसार का मूल ध्येय है।

भूमंडलीकरण के इस दौर में, हिंदी के विश्व

ISSN No. : 0970-9398

विस्तृत फैलाव को देखते हुए यह नारा लगाया जा सकता है कि – "एक हृदय हो विश्व जननी।" अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर देखा जाए तो वहाँ हिंदी पढ़ने वाले लोग दो तरह के हैं – विदेशी एवं प्रवासी भारतीय। विदेशों में हिंदी अधिकतर हमारे मजदूर भाइयों बहनों के साथ गई। उनकी यह सांस्कृतिक धरोहर रही और अपने सत्त्व से वहाँ कायम रही। हिंदी का जन्म संस्कृत और जनता की आम भाषा के मिलने से हुआ। इस भाषा को अहिंदी भाषा भाषियों ने संवारा और बढ़ाया। केशवचंद्र सेन, राजा राममोहन राय, स्वामी दयानंद सरस्वती, बाल गंगाधर तिलक, महात्मा गांधी जैसे अहिंदी भाषा–भाषी महान पुरुषों ने इसका प्रचार किया और इसे बल दिया। विदेशी विद्वानों ने भी इसकी सेवा की और ग्रियर्सन जैसे व्यक्तियों ने हिंदी में ज्ञान का खजाना बढ़ाया। महात्मा गांधी ने कहा कि यदि भारत को एक राष्ट्र बनना है तो चाहे कोई माने या न माने, राजभाषा तो हिंदी ही बन सकती है। तमिल के महाकवि सुब्रह्मण्यम भारती ने भी राष्ट्र की एकता के लिए राजभाषा हिंदी पर ही बल दिया।

विदेशियों के लिए हिंदी प्रेम और सद्भाव की वाहिका है। विदेशी लोग हिंदी सीखते हैं, जिनके प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं।

1. भारत से अपने को आर्थिक, व्यापारिक, सामाजिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक दृ ष्टि से जोड़ना।
2. हिंदी में बातचीत करना।
3. हिंदी फिल्मों और उनके गीतों को समझना।
4. अपनी भाषा में अनुवाद

विदेशों में आज हिंदी भाषा के समाचारपत्र और पत्र–पत्रिकाएँ प्रकाशित होते हैं। फिजी और मॉरीशस में हिंदी को संवैधानिक मान्यता प्राप्त है। मॉरीशस में हिंदी के अनेक लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यकार हैं। वहाँ के विद्यालयों में अधिक संख्या हिंदी माध्यम स्कूलों की है। स्पष्टतः हिंदी केवल भारत की ही नहीं, अपितु एशिया तथा अन्य कई देशों के सांस्कृतिक स्पंदन की भाषा है।

हिंदी आज विश्व भाषा के रूप में अनेक देशों में तेजी से लोकप्रिय होती जा रही है। अस्तित्व को आकार दे रही हिंदी मात्र एक भाषा ही नहीं, विदेशी हिंदी विद्वानों ने हिंदी में साहित्यिक रचनाएँ की हैं। हिंदी भारतीय संस्कृति की सबल, समर्थ और सशक्त संवाहिका है। हिंदी आज विश्व भाषा के रूप में अनेक देशों में तेजी से लोकप्रिय होती जा रही है। हिंदी मात्र एक भाषा ही नहीं, भारतीय संस्कृति की सबल के रूप में काम करती है। मॉरीशस, फिजी, त्रिनिदाद और करोड़ों की संख्या में प्रवासी भारतीयों और भारत समाज भारतीय प्रवासियों का है; और उन्हें भारत, भारतीयता से सहज संपर्क बनाने के लिए आज भी हिंदी संस्कृति से निरंतर जोड़े रखने में एक सशक्त माध्यम है। वहीं स्कूलों में हिंदी की पढ़ाई में वे अपनी अस्मिता की पहचान के लिए हिंदी सीखने के लिए उत्सुक रहते हैं और पहचान भी पाते हैं।

चीन के बाद विश्व का बहुसंख्यक जन मूल के लोगों के बीच आत्मीयता के संबंध–सूत्र स्थापित सबसे बड़ा बाजार होने के कारण आज हिंदी का बाजारीकरण हो रहा है एवं भूमंडलीकरण के फलस्वरूप भारत से कई देश आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक क्षेत्रों से जुड़ गए हैं। जिसमें मॉरीशस, फिजी, हॉलैंड, जर्मनी, अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस, ऑस्ट्रेलिया, थाईलैंड, उजबेकिस्तान, ताकिस्तान, क्रोएशिया, कनाडा, चीन, जापान, रोमानिया, बल्गारिया, रूस, हंगरी और पोलैंड आदि देश प्रमुख हैं। जिन देशों में हिंदी शिक्षण को औपचारिक शिक्षा व्यवस्था में स्थान नहीं मिला, वहीं भारतीय समुदाय की स्वयंसेवी संस्थाएँ हिंदी का अध्यापन करती हैं। स्वाधीन भारत को राजभाषा और बहुसंख्यक समाज की संपर्क भाषा होने के कारण हिंदी का विश्व परिदृश्य बहुत व्यापक हो रहा है। भारतवर्ष के अहिंदी भाषी प्रदेशों मैं भी हिंदी का व्यापक प्रचार–प्रसार हो रहा है।

यूरोप का कोई ऐसा देश नहीं जहाँ हिंदी भाषी लोग बहुत संख्या में न बसे हों। इसलिए इन

देशों में न्यूनाधिक रूप में हिंदी के पठन–पाठन की भी व्यवस्था है। रूस, जर्मनी, इंग्लैंड, फ्रांस, इटली, चेकोस्लोवाकिया, रूमानिया आदि देशों के विश्वविद्यालयों में एम.ए. और पी.एच.डी. स्तर तक हिंदी के अध्ययन–अध्यापन की समुचित व्यवस्था है। अमेरिका के अनेक विश्वविद्यालयों में भी एम. ए. स्तर तक हिंदी को नियमित कक्षाएँ चलती है।

भूमंडलीकरण के कारण जहाँ अंग्रेजी का दायरा व्यापक हुआ है, वहीं हिंदी की भी आवश्यकता बढ़ी है। देश की बहुत बड़ी जनसंख्या हिंदी बोलती है। भारत के बाहर भी कई देशों में हिंदी भाषियों का बाहुल्य है, इसलिए व्यापारिक कंपनियाँ चाहे देशी हों या विदेशी अपना माल बेचने के लिए हिंदी की उपेक्षा नहीं कर सकती। अतः व्यापारिक संस्थानों में हिंदी की जानकारी रखनेवालों की आवश्यकता तो रहेगी ही विश्व बाजार ने तो हिंदी की ताकत को पहचाना है, किंतु हिंदी अपनी इस ताकत को कब पहचानेगी। निश्चय ही इसके लिए राष्ट्रीय सोच की आवश्यकता है, मानसिकता बदलने की आवश्यकता है और आवश्यकता है राजनीतिक इच्छा शक्ति की। राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन ने कहा था–" भाषा और संस्कृति से खिलवाड़ करने वाले राजनीतिज्ञ आते हैं और चले जाते हैं। भारतीय संस्कृति का प्रतीक हिंदी सदा अमर रहेगी।"

निष्कर्षतः आधुनिक युग विज्ञान और तकनीकों का है। इसमें मानव की प्रगति की बहुत आवश्यकता है। ज्ञान दिन–प्रतिदिन तीव्र गति से बढ़ रहा है। हिंदी में विज्ञान और तकनीकी के साहित्य को बहुत बड़े पैमाने पर बढ़ाना चाहिए। आजकल बच्चों के कार्यक्रम में हिंदी का ही अधिक उपयोग हो रहा है। हिंदी तब बढ़ेगी जब उसमें विज्ञान और ज्ञान का ऐसा साहित्य रचा जाए, जिसे विश्व की अन्य भाषाएँ भी ग्रहण करने के लिए उत्सुक हो। हिंदी को गुणों से भरना है और ऐसे विचार से भरना है कि यह जनता के हित में अधिक–से–अधिक ज्ञान दे सके।

शब्द को तो भारत में ब्रह्म कहते हैं। शब्दों का तो बहुत बड़ा खजाना है किंतु यह खजाना उपयोगी तभी होगा जब यह शब्दकोशों में बंद न रहे और इसका प्रयोग हो, हमारे प्रतिदिन के जीवन में भाषा आदान–प्रदान का माध्यम है। राजनीतिक भेदभाव लाने से उसका महत्व घटता है।

हिंदी में नवीन विचार, ज्ञान एवं मनुष्य के दुःख–दर्द का साहित्य बढ़ाना चाहिए ताकि लोगों को उससे संतुष्टि और अपनापन दिखे। हमारे देश में त्रिभाषा सूत्र है। मातृभाषा तो आवश्यक है ही, राजभाषा अन्य भाषाओं के बीच कड़ी है और एक बाहरी भाषा अंतर्राष्ट्रीय कड़ी के रूप में चाहिए इससे राष्ट्र की एकता को बल मिलेगा, अंतर्राष्ट्रीय मैत्री बढ़ेगी और संसार से ज्ञान लेने और देने के लिए दरवाजे खुले रहेंगे।

आज भूमंडलीकरण के इस दौर में हिंदी ने विश्व मैत्री स्थापित करने में अपना शाश्वत पहचान बनाई है। आज भूमंडलीकरण के कारण ही हिंदी के अंतर्राष्ट्रीय संबंध भी जुड़े हैं। सात्विक हृदय द्वारा विश्व मानव हिंदी को आगे बढ़ाएँ एवं हिंदी भाषा भी अपनी भव्यता से आगे बढ़े। जैसे–जैसे वैश्वीकरण बढ़ेगा, हिंदी भी बढ़ेगी। जितना बाजारवाद बढ़ेगा हमारी भाषाएँ उतनी ही आगे बढ़ेगी।

अंत में, भव्य भारत की राजभाषा हिंदी विश्वभाषा पर अपनी वैश्विक सोच को स्थापित कर सके ऐसा ही हम सबका प्रयास होना चाहिए।

सतरंगी इन्द्रधनुष सा–अंबर पर
अब छाएगी हिंदी
बिखरेगी इसकी किरणें
जन–जन तक जाएगी हिंदी

–सहायक निदेशक (रा.भा.)
रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन
डीआरडीओ भवन, नई दिल्ली

ISSN No. : 0970-9398

यूरेशिया और भारत में हिंदी का वर्तमान और भविष्य

–प्रोफेसर सुधीर प्रताप सिंह

भारतीय सभ्यता विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक है। अपनी सभ्यता के निरंतर विकास के लिए यहाँ के लोगों ने जिस ज्ञान परम्परा की निर्मिति की है, वह हमारी निजी आवश्यकता और तर्कों पर आधारित है। यह ज्ञान परम्परा अपने धार्मिक–सांस्कृतिक आग्रह के कारण विशिष्ट है। भारतीय ज्ञान और संस्कृति का आदि स्रोत वेद हैं। वैदिक संहिताएँ न केवल भारतीय ज्ञान परम्परा अपितु विश्व साहित्य के भी आदि स्रोत हैं। सनातन भारतीय मनीषा वेद वाणी को सृष्टि के आदि में स्वयम्भू परमात्मा से उत्कृष्ट मानती है, जो नित्य नाश रहित और दिव्य है, जिससे सभी प्रवृत्तियों का अविर्भाव हुआ है–

अनादिनिधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयंभुवा।
आदौ वेदमयी दिव्या यतः सर्वा प्रवृत्तयः।।[1]

वेद ही विश्व शांति, विश्व बंधुत्व, विश्व कल्याण एवम् सर्वोच्च ज्ञान के प्रथम उद्घोषक ग्रन्थ हैं। भारतीय संस्कृति चराचर जगत के प्रति अभेद्यता एवम् एकता का भाव लेकर चलती है–

ईशावास्यम इदम् सर्वम
यत् किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः मा
गृधः कस्यस्विद् धनम्।।[2]

अर्थात् जड़–चेतन प्राणियों वाली यह समस्त सृष्टि परमात्मा से व्याप्त है। मनुष्य इसके पदार्थों का आवश्यकतानुसार भोग करे, परन्तु 'यह सब मेरा नहीं है के भाव के साथ' उनका संग्रह न करे।

इस सूत्र को व्यावहारिक अर्थ देने वाली संकल्पना है–

अयं निजः परोवेति गणना लघु चेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।[3]

अर्थात् यह मेरा है, यह उसका है; ऐसी सोच संकुचित चित्त वाले व्यक्तियों की होती है; इसके विपरीत उदारचरित वाले लोगों के लिए तो यह सम्पूर्ण धरती ही एक परिवार जैसी होती है। इसी बात को रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदास कुछ इस प्रकार कहते हैं–

मैं अरु मोर तोर तैं माया।
जेहिं बस कीन्हे जीव निकाया।।[4]

इसी बात को एक नवीन अर्थ में जयशंकर प्रसाद कामायनी में चित्रित करते हुये कहते हैं–

हम अन्य न और कुटुम्बी,
हम केवल एक हमीं हैं;.
तुम सब मेरे अवयव हो
जिसमें कुछ नहीं कमी है।[5]

इस विराट दृष्टिकोण का वाहक ऋग्वेद का मन्त्र–'एकम् सत् विप्रा बहुधा वदन्ति'[6] (अर्थात् सत्य एक है, विद्वान उसे विभिन्न नामों से पुकारते हैं) है। हिंदी के कवि मलिक मुहम्मद जायसी ने भी लिखा है–

"विधिना के मारग हैं ते ते।
सरग नखत तन रोवाँ जेते"।।[7]

स्पष्ट है कि जो ज्ञान परम्परा प्राचीन काल से आज तक अनवरत गति से प्रवाहमान है, हिंदी उसकी स्वाभाविक उत्तराधिकारिणी है।

वैदिक काल से लेकर गुप्त शासकों के समय तक भारतीय संस्कृति और ज्ञान परम्परा अपने स्वर्णिम रूप में विकसित होती रही है। इस ज्ञान की भाषा संस्कृत थी। इन्हीं सदियों में भारत को विश्व गुरु की ख्याति प्राप्त थी। गुप्त युग के बाद राजनीतिक अस्थिरता के कारण ज्ञान और अन्वेषण की गति थोड़ी मंद जरूर हुई लेकिन वह कभी रुकी नहीं। भारतीय ज्ञान और संस्कृति की ख्याति विश्वभर में फैली। भारतीय दर्शन, अध्यात्म और ज्ञान–विज्ञान को समझने हेतु विभिन्न विदेशी विद्वान यात्री बनकर ज्ञान की खोज में भारत आए। यहाँ की ज्ञान परम्परा और संस्कृति को देखकर वे आश्चर्यचकित रह गये।

ISSN No. : 0970-9398

'ह्वेनसांग (चीन) ने नालंदा विश्वविद्यालय में बौद्ध धर्म के साथ ही चिकित्सा शास्त्र, दर्शन शास्त्र, गणित, ज्योतिर्विज्ञान और व्याकरण का अध्ययन किया। इसी प्रकार अलबेरुनी ने भारत में संस्कृत, विज्ञान, साहित्य और धर्म का अध्ययन किया।[8]

महान विद्वान मैक्स मूलर भारतीय संस्कृति के महत्त्व पर बात करते हुये लिखते हैं– "यदि मैं संसार में किसी ऐसे देश की तलाश करूँ जहाँ प्रकृति ने पृथ्वी के किसी हिस्से में सम्पत्ति, शक्ति और सुन्दरता का वरदान दिया है तो मैं भारत की ओर इंगित करूँगा। ...यदि मुझसे कोई पूछे हम यूरोप में रहने वालों को जिन्हें यूनानियों, रोमनो और यहूदियों के विचारों पर लगभग पूरी तरह से पोषित किया गया है, उन्हें किस साहित्य से ऐसी सीख मिलेगी जिसकी बहुत जरूरत है, ताकि हम अपना आंतरिक जीवन अधिक पूर्ण, अधिक व्यापक, अधिक वैश्विक, वास्तव में अधिक मानवीय और न सिर्फ वर्तमान जीवन, बल्कि एक शाश्वत जीवन बना सकने वाली सीख प्राप्त कर सकते हैं तो मैं फिर से भारत की ओर इशारा करूँगा।[9]

यूरोप के महान कवि टी.एस. इलियट अपनी प्रसिद्ध कविता वेस्टलैंड का उपसंहार बृहदारण्यक उपनिषद् के इस उद्धरण से करते हैं–

'दत्त। दयध्वम्। दमयत।
शांतिः शांतिः शांतिः।'

भाषा में संस्कृति के अवयव घुले–मिले होते हैं। इसलिए किसी भी भाषा पर विचार करते हुये उस भाषा की बुनियादी संस्कृति पर बात करना जरूरी है। संस्कृति की उपेक्षा करके हम भाषा की आत्मा और उसकी विकास यात्रा को नहीं समझ सकते हैं। इसलिए हिंदी भाषा के वर्तमान और भविष्य पर विचार करने से पहले उस भाषा की बुनियादी संस्कृति पर बात करना मुझे जरूरी लगा।

किसी भी देश की ज्ञान सम्पदा उस देश के बौद्धिक चिन्तन–मनन और अन्वेषण का सुपरिणाम होती है। यद्यपि हिंदी आधुनिक भारतीय भाषा है, बावजूद इसके हिंदी की जो ज्ञान सम्पदा है, वह विश्व की प्राचीनतम भाषाओं में से एक संस्कृत के उद्गम स्थल से शुरू होकर पालि और प्राकृत में अर्जित ज्ञान सम्पदा से स्वयं को निखारते हुए अपभ्रंश से आधुनिक भारतीय भाषा हिंदी का रूप लेती है। इस प्रकार वह भारत की लम्बी भाषिक यात्रा की समृद्ध शक्ति के साथ उसकी सांस्कृतिक पूँजी और ज्ञान कोश को भी पूरी ताकत से ग्रहण करती है। हिंदी नवजागरण के दौरान जब साम्राज्यवादी ताकतें भारतीयों को पिछड़ा साबित कर अपने ज्ञान–विज्ञान की ताकत से उपनिवेशवाद को उचित ठहराने में लगे हुये थे, तब हिंदी नवजागरण के अग्रदूत राजा शिवप्रसाद सिंह 'सितारेहिन्द', भारतेंदु हरिश्चन्द्र, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी आदि ने भारतीय ज्ञान परम्परा के उस विस्मृत ज्ञान कोश को भारतीय जन के सामने रखा, जिससे भारतीय जन में गौरव की भावना का संचार हुआ। विश्व का इतिहास इस बात का साक्षी है कि जब कोई देश अपनी ज्ञान परम्परा से विच्छिन्न हो जाता है, तब बाहरी ताकतें अपनी ज्ञान–परम्परा और संस्कृति को श्रेष्ठ बताकर दूसरे देश पर अपने साम्राज्य को जायज ठहराने की कोशिश करती हैं। लगभग 200 वर्षों का औपनिवेशिक शासन हम सबके लिए एक सबक है कि हम अपनी ज्ञान सम्पदा को छोड़कर समृद्ध और सम्पन्न देश नहीं बन सकते।

किसी भी भाषा की संजीवनी और उसकी ऊर्जा उसकी व्यावहारिक उपयोगिता है। ज्यों–ज्यों किसी भाषा को बोलने वालों की संख्या कम होती जायेगी, उस पर अस्तित्त्व का संकट मंडराने लगेगा। यूनेस्को की एक रिपोर्ट के अनुसार सन् 2000 तक विश्व में लगभग 7000 भाषाएँ थीं, जिनमें से लगभग 2500 भाषाएँ संकटापन्न थीं। ऐसी आशंका है कि सन् 2050 तक लगभग 90% भाषाएँ लुप्त हो जायेंगीं। इसके विपरीत हिंदी भाषा बोलने वालों की संख्या में विश्व स्तर पर तीव्र गति से वृद्धि हुई है। इसकी बड़ी वजह हिंदी भाषा का लचीलापन, उसकी ग्राह्यता, व्यापारिक माँग और समृद्ध भारतीय संस्कृति का दाय है। जिस तरह से लैटिन भाषा की सांस्कृतिक विरासत अंग्रेजी भाषा को मिली उसी तरह से संस्कृत भाषा की सांस्कृतिक पूँजी हिंदी को मिली है। हिंदी भाषा ने परम्परा से प्राप्त सांस्कृतिक पूँजी को अपने भीतर समाहित करते हुये समकालीन आवश्कतानुसार शब्दावलियाँ निर्मित कर स्वयं को समृद्ध किया है। हिंदी भाषा में अरबी, फारसी, अंग्रेजी, तुर्की आदि कई भाषाओं के अनेक शब्द मिल जायेंगे जो हिंदी भाषा में रच–बस गये हैं। ऐसे में हिंदी को विश्व बंधुत्व की

ISSN No. : 0970-9398

भाषा कहना उचित होगा।

हिंदी भाषा की ग्रहणशीलता पर विचार करते हुये समाजशास्त्री अभय कुमार दुबे ठीक ही कहते हैं– "हिंदी की दुनिया में विभिन्न आबादियों का आना–जाना बहुत हुआ है। यहाँ बाहर की हवाएँ बहुत आयीं हैं, इसलिए यहाँ एक ऐसा लचीलापन है, जो दूसरे भाषा भाषियों की दुनिया में नहीं दिखाई पड़ता।"[10] समृद्ध भाषा की पहचान केवल उसकी ग्रहणशीलता से नहीं है, बल्कि ग्रहण–देय के अन्योन्याश्रित सम्बन्धों से है। अंग्रेजी, उज्बेक, सिंहली, नेपाली आदि कई भाषाओं में ऐसे अनेक शब्द मिल जायेंगे जो भारतीय संस्कृति की उपज हैं।

भाषा अपने भौगोलिक विस्तार, सांस्कृतिक सम्बद्धता, ज्ञान–विज्ञान की ग्रहणशीलता और संचार माध्यम के सक्षम रूप से विश्व भाषा के तौर पर स्थापित होती है। यह हर्ष का विषय है कि हिंदी विश्व की तीसरी सबसे ज्यादा बोली और समझी जाने वाली भाषा है। हिंदी भाषा को यह स्थान जनसंख्या की बहुलता की वजह से नहीं, बल्कि विश्व स्तर पर उसकी उपयोगिता, लोकप्रियता और अर्थग्राह्यता के कारण मिला है। वर्तमान में विश्व भर में हिंदी बोलने वालों की संख्या 80 करोड़ से अधिक है।[11]

भाषा का कोई एक रूप नहीं होता है, बल्कि यह कई रूपों में जीवित रहकर अपने स्वरूप को समृद्ध करती है। अनुप्रयोग और व्यावहारिक आवश्यकता की दृष्टि से वैश्विक स्तर पर हिंदी का वर्तमान स्वरूप कुछ इस प्रकार है–

1. परिमार्जित अथवा अकादमिक हिंदी
2. राजभाषा हिंदी
3. बाजार की हिंदी
4. बोल–चाल की शिष्ट हिंदी
5. बोल–चाल की टूटी–फूटी हिंदी
6. लोक–भाषा हिंदी
7. रोमन में लिखी हिंदी
8. A.I. द्वारा अनूदित कृत्रिम हिंदी
9. विभिन्न अनुशासनों की पारिभाषिक शब्दावली
10. प्रवासी हिंदी

संस्कृति के बनने की प्रक्रिया बहुत सूक्ष्म होती है। इस प्रक्रिया में भाषा का निर्वाह भी शामिल होता है। जिस तरह संस्कृति की अनेक भाषाएँ होती हैं, वैसे ही भाषा की अनेक संस्कृतियाँ हो सकती हैं। हिंदी भाषा के जो उपरोक्त रूप हैं, उसमें मुख्य संस्कृति एक होने के बावजूद अलग–अलग संस्कृतियों के रूप दिखाई पड़ते हैं। यह बात भाषा की दृष्टि से भी उतनी ही सही है। उदाहरण के तौर पर मॉरिशस और फिजी में बसे प्रवासी भारतीयों की हिंदी भाषा को देखा जा सकता है। उनकी भाषा और संस्कृति का जो मुख्य हिस्सा है वह हिंदी और भारतीय संस्कृति है, किन्तु वहाँ की भौगोलिक प्रकृति के हिसाब से प्रवासी हिंदी ने एक नई हिंदी का रूप भी ग्रहण किया। ठीक इसी तरह लोक की हिंदी और उसकी संस्कृति पूरी तरह वही नहीं है, जो शिष्ट समाज की भाषा और संस्कृति है। बावजूद इसके हिंदी भाषा के रूप हिंदी भाषा में अलगाव नहीं पैदा करते बल्कि अपनी उपस्थिति और विशिष्टता से हिंदी भाषा को समृद्ध करने का काम करते हैं। आज हिंदी अगर विश्व भाषा के रूप में अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही है, तो इन सबकी सहकारी भूमिका निः संदेह महत्त्वपूर्ण है।

भाषा शिक्षण के दो आयाम हैं– पहली मातृ–भाषा और दूसरी अर्जित–भाषा। मातृभाषा भाषा का वह रूप है, जिसे हम स्वतः ही सीख जाते हैं। पर अर्जित–भाषा को सीखने के लिए औपचारिक शिक्षा लेनी पड़ती है। विश्व भाषा की दृष्टि से किसी भाषा की सफलता इस बात पर निर्भय करती है कि अर्जित–भाषा के रूप में उसे कितनी सफलता मिली है। जयंती प्रसाद नौटियाल द्वारा दी गयी शोध–रिपोर्ट के अनुसार हिंदी अर्जित–भाषा के रूप में विश्व में पहले स्थान पर है। "2015 की शोध–रिपोर्ट के अनुसार विश्व में हिंदी बोलने वालों की संख्या 18%है।"12

(आँकड़े मिलियन में)

शोध रिपोर्ट का वर्ष	विश्व में हिंदी जानने वाले	विश्व में चीनी जानने वाले	अंतर
1997	800	730	+70
2005	1022	900	+122
2007	1023	920	+103
2009	1100	967	+133
2012	1200	1050	+150
2015	1300	1100	+200

स्रोत : डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल द्वारा किया गया शोध अध्ययन 2015 (अनुमानित आँकड़े)

ISSN No. : 0970-9398

(संख्या मिलियन में)

क्र. सं.	भाषा	मातृ भाषा	अर्जित भाषा	कुल भाषा भाषी
1.	अरबी	235	225	460
2.	चीनी	950	150	1100
3.	अंग्रेज़ी	350	650	1000
4.	फ्रेंच	70	60	130
5.	रूसी	148	112	260
6.	स्पेनिश	332	63	395
	कुल	2035	1260	3345
हिंदी की स्थिति				
	हिंदी	619	681	1300

स्रोतः डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल द्वारा किया गया शोध अध्ययन 2015 (अनुमानित आँकड़े)

हिंदी की उपस्थिति भारतीयों के विदेश प्रवास से लगातार बढ़ रही है। विदेशों में भारतीय जन–समुदायों के बीच परस्पर संवाद की भाषा हिंदी स्वाभाविक रूप से इसलिए प्रचलन में आई है, क्योंकि वह विभिन्न भारतीय भाषाओं के अंतर्मिलन का मुख्य आधार है साथ ही उसमे विभिन्न भाषाओं और लोक–बोलियों के ग्रहण करने कि अद्भुत क्षमता निहित है।

वैश्विक संस्थानों में प्रयुक्त हिंदी ने भी हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार में प्रमुख योगदान दिया है। आज हिंदी विश्व के लगभग 190 देशों में पढ़ी–लिखी और बोली जाती है। सिर्फ अमेरिका में ही 100 से अधिक विश्वविद्यालयों और कॉलेजों में हिंदी पढ़ाई जाती है। हिंदी अपनी इसी खासियत के कारण आज विश्व में दक्षिण एशियाई मुल्कों की पहचान और सम्पर्क की भाषा का स्थान प्राप्त कर चुकी है।"[13]

भाषा एक सामाजिक क्रिया के साथ आर्थिक क्रिया भी है। इस युग ने इस निहित आर्थिक क्रिया को प्रकट रूप से सामने ला दिया है। भाषा का असल उपांग अर्थ व्यवस्था रूपी पैर होते हैं, जिन पर भाषा की साहित्य–संस्कृति रूपी कलगी सज्जित होती है। इसलिए हिंदी को विश्व भाषा बनाने में बाजार की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। विश्व की पाँच प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में से एक भारत, मुक्त बाजार का बड़ा केन्द्र है। संयुक्त राष्ट्र की ताजा रिपोर्ट के अनुसार भारत दुनिया का सबसे युवा देश है। विश्व बाजार की जरूरत को देखते हुये युवा वर्ग को केन्द्र में रखकर इंटरनेट ने हिंदी अनुवाद के माध्यम से विश्व को भारत से जोड़ने में मुख्य भूमिका निभाई है। इंटरनेट ने गूगल ट्रांसलेशन, अमेजन, यूट्यूब आदि विभिन्न माध्यमों से हिंदी को विश्व बाजार के साथ मजबूती से जोड़ा है। जहाँ विश्व बाजार में पहले अंग्रेजी का वर्चस्व था, वहाँ अब हिंदी भाषा ने अंग्रेजी के वर्चस्व को तोड़ते हुये अपनी विशेष जगह बना ली है। आज विभिन्न कम्पनियाँ अपने विज्ञापन तथा सूचनाओं का प्रचार–प्रसार हिंदी भाषा में करती हैं क्योंकि उनका मानना है कि आज हिंदी भाषा का फलक विस्तृत है और अगर उन्हें अपनी सूचनाओं को बहुसंख्यक लोगों तक पहुँचाना है तो वही भाषा चुननी होगी जिसके पाठक वर्ग अधिक हों तथा ग्राहक सहज और पारिवारिक अपनत्व महसूस करें। इसके लिए हिंदी से अच्छा विकल्प हो ही नहीं सकता। पहले सिनेमा, फिर टीवी और अब इन्टरनेट ने हिंदी के अथाह बाजार के कारण उसे 'कमर्शियल लैंग्वेज' बना दिया है। हिंदी सिनेमा के बाद अब हिंदी के टी. वी. चैनल, अख़बार, इन्टरनेट कम्पनियाँ भी विज्ञापनों के माध्यम से अरबों रुपये सालाना कमा रहे हैं। अब मोबाइल पर इन्टरनेट के लगातार प्रसार के कारण हिंदी और भी मजबूत और वैश्विक हो रही है, क्योंकि जो भी विशाल हिंदी भाषी बाजार से पैसा कमाना चाहेगा, उसे हिंदी सोशल मीडिया को अपनाना पड़ेगा।

संचार–माध्यम अपने समय के साथ अनुकूलित विधा चुन लेते हैं। संचार माध्यमों के परिवर्तन से कुछ पुरानी विधाएँ विलुप्त हो जाती हैं, और कुछ नई विधाओं का जन्म होता है। इन्टरनेट आने के बाद हिंदी में पत्र और यात्रा–साहित्य लिखना बहुत कम हो गया। किन्तु इंटरनेट के इस दौर में नये तरह से ब्लॉग, ट्रैवल ब्लॉगिंग, फूड ब्लॉगिंग की शुरुआत हुई। आज साहित्यकार भी इंटरनेट से जुड़कर व्हाट्सअप, यूट्यूब और ट्विटर पर अपनी रचनाओं का प्रचार–प्रसार कर रहे हैं। आज यूट्यूब पर हिंदी भाषा में कहानियों/कविताओं के कई ऑडियो–वीडियो प्रतिदिन अपलोड किये जा रहे हैं, जिन्हें सुनने– देखने वाले पाठकों की निरंतर वृद्धि हो रही है। निस्संदेह यह कहा जा सकता है कि सोशल मीडिया आज हिंदी भाषा के

ISSN No. : 0970-9398

प्रचार–प्रसार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। हिंदी भाषा को भारतीय फिल्मों ने भी वैश्विक पहचान दिलाई है। अखंड रूस, जापान, दक्षिण कोरिया, थाईलैंड, सिंगापुर, आस्ट्रेलिया सहित पड़ोसी देशों में तो पचास वर्ष पूर्व से ही भारतीय हिंदी फिल्मों की लोकप्रियता रही है। इसके अलावा रेडियो सिलोन और श्रीलंकाई सिनेमाघरों में चल रही हिंदी फिल्मों के माध्यम से हिंदी भाषा की उपस्थिति समझी जा सकती है। पिछले एक दशक से चीन, दक्षिण कोरिया, पाकिस्तान, अफगानिस्तान सहित दुनिया के अनेक देशों में भारतीय हिंदी फिल्मों व गीतों का रीमेक सोशल मीडिया में दिखाई देने लगा है।

"संस्कृति, परम्पराओं की दृष्टि से अत्यंत सम्पन्न एशिया महाद्वीप अपने देशों, राष्ट्रीयताओं और स्वायत्त–स्वतंत्र क्षेत्र से सदियों से संवादरत रहा है। एशियाई देशों के बीच सांस्कृतिक संबंधों का इतिहास अत्यंत प्राचीन है। ...कुछ अपवादों को छोड़ दें तो युद्धों की अपेक्षा व्यापारिक और सांस्कृतिक विनियमों का अधिक फैलाव एशिया के ज्यादातर भागों में दिखाई देगा।"[14] इन स्थितियों में सांस्कृतिक आदान–प्रदान के लिए भाषा की भूमिका प्रासंगिक रूप में उभर कर आती है। ऐसे में प्रश्न यह उठता है की दो भिन्न भाषाई पक्षों के बीच संवाद किस भाषा में हुआ होगा? इसमें कुछ विद्वानों का यह मानना है कि "मध्यकाल के व्यापारिक संबंधों के चलते व्यापारिक मार्गों का विकास हुआ, संवाद हेतु अनेक भाषाओं के परिमिश्रण से एक संपर्क भाषा का विकास हुआ। संस्कृत भाषा और उसकी उपभाषाओं की व्यापक रूप से स्वीकृति भी एक ऐसा तथ्य है... ।"[15]

एशिया महाद्वीप की विविधता में एकता को बनाने में धर्म की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। एक तरफ भारतवर्ष कुछ धर्मों का उद्‌गम स्थल रहा है तो दूसरी तरफ कुछ धर्मों का प्रचार–प्रचार एशिया के अन्य देशों से भारत में भी हुआ है। बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार ने भारत, चीन, जापान, म्यांमार, भूटान, तिब्बत, श्रीलंका आदि देशों में निकटता लाने का कार्य किया है। बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रचार की मुख्य भाषा पाली थी, जिसका विकास संस्कृत से हुआ है। इस तरह भारतीय संस्कृति बौद्ध धर्म के माध्यम से पाली भाषा में एशिया के विभिन्न देशों में पहुँची। भले ही अपनी भौगोलिक प्रकृति के अनुरूप इन देशों ने बौद्ध धर्म को अपने अनुरूप ढाल लिया हो पर इसकी आत्मा में मौजूद 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के भाव को इन देशों ने भी बनाये रखा।

भारत की संस्कृति राम की संस्कृति है। यहाँ रामकथा की कई धाराएँ हैं। आध्यात्मिक धारा, सांस्कृतिक धारा और अकादमिक धारा इनमें प्रमुख है। भारत के बाहर के देशों में राम कथा का प्रसार इन्हीं धाराओं के रूप में मिलता हैं। राम कथा की आध्यात्मिक धारा प्रवासियों द्वारा, मुख्य रूप से रामचरितमानस के माध्यम से फिजी, मॉरिशस, त्रिनिदाद, गुयाना, सूरीनाम आदि देशों में पहुँची। सांस्कृतिक धारा भारत के पड़ोसी दक्षिण–पूर्व एशियाई देशों में प्रवाहमान हुई। बौद्ध और मुस्लिम बहुल संस्कृति होने के बावजूद दक्षिण पूर्व एशिया में रामकथा पर आधारित नाटकों का मंचन बहुत लोकप्रिय है। अकादमिक धारा भारतीय सांस्कृतिक परम्परा में रुचि रखने वाले विद्वानों द्वारा यूरोपीय–अमेरिकी देशों में पहुँचीं। राम कथा का यह विस्तार महज रामकथा का विस्तार न होकर भारतीय दर्शन, अध्यात्म, संस्कृति और भाषा का विस्तार है। दक्षिण पूर्व एशिया के अनेक देशों में रामकथा पर आधारित अपनी–अपनी रामायण हैं– जैसे– मलेशिया में 'हिकायत सिरी राम', थाईलैंड में 'रामकियेन, कम्बोडिया में 'रामकेर' और इंडोनेशिया में काकविन। यही नहीं एशिया के अन्य देशों यथा नेपाल और भूटान, श्रीलंका और बर्मा आदि देशों में भी रामकथा का विस्तार है।

इस्लाम धर्मावलम्बी सूफी संतों और कवियों ने भी एशिया महादेश की भाषिक एकता बनाए रखने में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उन्होंने हिंदी भाषा और संस्कृति को समृद्ध करने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। अमीर खुसरो, जायसी, रहीम, रसखान आदि इसके प्रमुख उदाहरण हैं। आज हिंदी में अरबी–फारसी के शब्द इस तरह रच बस गए हैं कि उन्हें विलग करना सहज नहीं रह गया है।

सांस्कृतिक समानतायें अलग–अलग देशों के आपसी रिश्तों को भ्रातृत्व के सूत्र में बांधने का कार्य करती हैं। भारत, उज्बेकिस्तान और कजाकिस्तान की सांस्कृतिक परिस्थितियों में कई प्रकार की समानतायें हैं। विशेष रूप से उज्बेक–जीवन प्रणाली से भारत के विवाह समारोह, बच्चे के जन्म की रस्में, दुल्हे के प्रति आदर, दुल्हन की जिम्मेदारियाँ, बच्चों के प्रति ममता, माता–पिता के प्रति श्रद्धा आदि मिलते–जुलते हैं।

इस प्रकार हम इन देशों की ऐतिहासिक – धार्मिक निकटता को पहचान सकते हैं। एशियाई एकता को बनाने में भारतीय सिनेमा का भी प्रमुख योगदान है। उज्बेकिस्तान में छठे दशक से ही हिंदी फिल्मों को पसंद किया जाता रहा है। इनमें राज कपूर की फिल्मों और उनके गानों को सबसे ज्यादा लोकप्रियता मिली। एशियाई देशों में इस आपसी निकटता को देखते हुये यह कहा जा सकता है कि एशिया के पड़ोसी देशों के बीच प्रेरणा और बढ़ावा देने वाला सुदृढ़ सामाजिक–सांस्कृतिक सम्बन्ध है।

यूरेशियाई देशों में अध्ययन–अध्यापन हिंदी भाषा के प्रचार प्रसार का एक प्रमुख कारक रहा है। अनेक भारत–प्रेमी, छात्र भारत आकर हिंदी पढ़ते और सीखते हैं। अपने देश वापस जाकर अपने हिंदी ज्ञान का लाभ उठाते हैं। हिंदी सीखकर वे आधुनिक भारत की सांस्कृतिक सम्पदा से जुड़े रहना चाहते हैं। यूरेशियाई देशों में हिंदी भाषा और साहित्य के अध्ययन–अध्यापन को धार्मिक सांस्कृतिक संस्थाओं, वहाँ की सरकारों द्वारा प्रोत्साहन और सहयोग मिलता है। सर्वप्रथम हम कुछ प्रमुख यूरोपीय देशों में हिंदी भाषा और साहित्य के पठन–पाठन को देखेंगे जिसके कारण वहाँ आज भी हिंदी फल–फूल रही है।

हमारा सबसे निकटतम पड़ोसी यूरोपीय देश रूस है, जिसके साथ हमारे सम्बन्ध बहुत प्रगाढ़ रहे हैं। यूरोप में हिंदी भाषा और साहित्य को सर्वाधिक सम्मान रूस ने दिया। रूसी विद्वान भारत के अंतर्मन को समझने के लिए हिंदी को अनिवार्य मानते हैं। रूस में प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च स्तर तक हिंदी शिक्षण की व्यवस्था है। मास्को की मास्को स्टेट यूनिवर्सिटी के एशिया अफ्रीका संस्थान, मास्को अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्ध संस्थान तथा लेनिनग्राद स्टेट यूनिवर्सिटी में छः वर्षीय हिंदी पाठ्यक्रम की व्यवस्था है। मास्को और लेनिनग्राद की इन संस्थानों को हिंदी के प्रमुख विद्यापीठ कहा जाता है। विश्वविद्यालय स्तर पर हिंदी भाषा के अध्ययन–अध्यापन में श्री अलेक्सेई पेत्रोविच बरान्निकोव का अप्रतिम योगदान है। हिंदी भाषा में शिक्षण सामग्री तैयार करने वाले बरान्निकोव ही थे। उन्होंने लेनिनग्राद विश्वविद्यालय में हिंदी के अध्यापन की व्यवस्था की और हिंदी भाषा सीखने के लिए पुस्तकें तैयार कीं। इस दिशा में उनकी पुस्तक 'हिन्दुस्तानी' का विशेष महत्त्व है। रूस के हिंदी जगत में बरान्निकोव के यश का आधार रामचरितमानस का रूसी भाषा में अनुवाद है। उनके परिवार की तीन पीढ़ियों ने रूस में हिंदी की सेवा और प्रचार–प्रसार का कार्य किया। रूस में हिंदी भाषा और साहित्य के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण कार्य करने वालों में बरान्निकोव के अतिरिक्त येवेगेनी पेत्रोविच चेलीशेव, अलेक्सान्द्र सेंकेविच, वी. एम. बेस्क्रोवनी, ए.सी. बरखूदारोव, दीमशित्स, उलात्सिफेरोव आदि का नाम लिया जा सकता है।

पोलैण्ड के वार्सा विश्वविद्यालय में प्राच्य विद्या संस्थान है जिसमें हिंदी भाषा और साहित्य के शिक्षण की व्यवस्था है। यहाँ डॉक्टर तत्याना रुत्कोवस्का ने हिंदी पाठ्यक्रम का आरम्भ किया। वार्सा विश्वविद्यालय में हिंदी का पंचवर्षीय पाठ्यक्रम है। यहाँ के हिंदी प्राध्यापकों ने पोलिस भाषा में हिंदी की साहित्यिक रचनाओं का अनुवाद करके, शिक्षण सामग्री तैयार करके हिंदी भाषा और साहित्य पर पुस्तकें लिखकर पोलैण्ड में हिंदी के प्रचार–प्रसार में महत्त्वपूर्ण योग दिया। पोलिस भाषा में (हिंदी साहित्य की रूपरेखा) पुस्तक लिखने वाले डॉ.रुत्कोवस्का व डॉ. स्ताशिक, रेणु के 'मैला आंचल' और प्रेमचंद की कई कहानियों का पोलिश भाषा में अनुवाद करने वाले युल्युष पार्नोवस्की का नाम हिंदी के प्रसार में उल्लेखनीय है।

बल्गारिया में पहले हिंदी के शिक्षण की नियमित व्यवस्था नहीं थी। बीसवीं सदी के आठवें दशक में भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद तथा बल्गारिया सरकार के बीच हुये समझौते के फलस्वरूप सोफिया विश्वविद्यालय में हिंदी के व्यवस्थित अध्ययन अध्यापन की शुरूआत हुई। वर्तमान में सोफिया विश्वविद्यालय में हिंदी का चार वर्षीय पाठ्यक्रम है। बल्गारिया के कई अध्यापक हिंदी भाषा और साहित्य के अध्ययन– अध्यापन के माध्यम से हिंदी के प्रसार में योगदान दे रहे हैं।

रोमनिया के बुखारेस्ट विश्वविद्यालय में हिंदी शिक्षण का कार्य 1965 ई. से व्यवस्थित रूप से चल रहा है। यहाँ हिंदी ऐच्छिक पाठ्यक्रम के रूप में पढ़ाई जा रही है। हंगरी में हिंदी भाषा–साहित्य के अध्ययन– अध्यापन की व्यवस्था बुडापेस्ट के ओत्वोश लोरान्द विश्वविद्यालय के भारोपीय भाषा विज्ञान विभाग में तथा कोरोशिचोमा तारशशाग में है। हंगरी में हिंदी प्राथमिक और माध्यमिक

दोनों स्तरों पर पढ़ाई जाती है।

युगोस्लाविया के जागरेब और बेलग्रेड विश्वविद्यालयों में हिंदी भाषा का व्यवस्थित अध्ययन–अध्यापन होता है। जागरेब विश्वविद्यालय में हिंदी शिक्षण की व्यवस्था स्नातक स्तर की है। चेकोस्लोवाकिया के चार्ल्स विश्वविद्यालय में हिंदी का शिक्षण बहुत पहले से चल रहा है। यहाँ चार भारतीय भाषाओं में हिंदी भाषा का अध्ययन प्रमुखता से होता है। यहाँ हिंदी का अध्यापन प्राथमिक से लेकर उच्च स्तर तक होता है। यूक्रेन के कीव विश्वविद्यालय में स्नातक स्तर उज्बेकिस्तान के ताशकंद विश्वविद्यालय में स्नातक स्तर का पंचवर्षीय पाठ्यक्रम तथा तजाकिस्तान के ताजिक स्टेट यूनिवर्सिटी में स्नातकोत्तर स्तर पर हिंदी भाषा और साहित्य का अध्ययन–अध्यापन होता है।

इंग्लैण्ड में हिंदी अध्ययन अध्यापन की बहुत ही सुदृढ़ परम्परा रही है। यहाँ के कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय, लंदन विश्वविद्यालय और यार्क विश्वविद्यालय में हिंदी के अध्ययन की व्यवस्था है। कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के हिंदी के प्रोफेसर आर.एस. मैकग्रेगर का इंग्लैण्ड में हिंदी के प्रसार में उल्लेखनीय योगदान है। उन्होंने 'एन आउट लाइन ऑफ़ हिंदी ग्रामर' तथा 'एक्सरसाइजेज इन स्पोकेन हिंदी' जैसी हिंदी शिक्षण की दृष्टि से उपयोगी पुस्तकें लिखीं। उन्होंने श्रेष्ठ अनुवाद भी किये, जो इंग्लैण्ड ही नहीं भारत में भी बहुत चर्चित रहे।

फ्रांस आधुनिक कला और दर्शन में अपने योगदान के लिए जाना जाता है। हिंदी भाषा और साहित्य के अध्ययन में भी फ्रांस के विद्वानों ने विशेष रुचि दिखाई है। वर्तमान समय में फ्रांस के सोबर्न विश्वविद्यालय में हिंदी का त्रिवर्षीय पाठ्यक्रम है। पेरिस में प्राच्य भाषाओं एवं सभ्यताओं का राष्ट्रीय संस्थान है जहाँ से हिंदी के द्विवर्षीय, त्रिवर्षीय, छःवर्षीय सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम व डिप्लोमा की व्यवस्था है।

जर्मनी भारतीय धर्म, दर्शन, साहित्य, संस्कृति या भारत विद्या पर काम करने वाले देशों में अग्रणी था। जर्मन विद्वान् भारत के गौरव को जानने की जिज्ञासा से यहाँ आये, अन्य यूरोपीय देशों की तरह उपनिवेशवादी इरादे से नहीं। जर्मनी ही नहीं, यूरोपीय विद्वानों और लेखकों ने भारतीय धर्म, संस्कृति, साहित्य और भाषाओं पर अध्ययन मुख्य रूप से दो तरह से किया। एक तो यहाँ की प्रमुख कृतियों का अनुवाद व मिथकों–मान्यताओं पर विचार करके और दूसरा भारतीय भाषाओं के व्याकरण और शब्दकोश तैयार करके। योआन जेसुआ केटलर ने 1698 में सम्भवतः पहला हिन्दुस्तानी व्याकरण और फ्रांस्वा मारी द तूर ने 1703 ई. में 'हिन्दुस्तानी शब्दकोश' एवम् 1704 में 'हिंदी (हिन्दुस्तानी) व्याकरण' लिखा। ईसाई मिशनरियों ने भारतीय भाषाओं के दस्तावेजीकरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारतीय साहित्य के यूरोपीय भाषाओं में अनुवाद को गति मुख्य रूप से 1784 ई. में सर विलियम जोन्स द्वारा कोलकाता में 'द एशियाटिक सोसाइटी' की स्थापना के बाद मिली। इसके पहले भी विलियम जोन्स ने 'मनु स्मृति' का अंग्रेजी अनुवाद 'जेंटू लॉज' नाम से किया था। 1785 में चार्ल्स विल्किंस द्वारा भगवत गीता तथा सर विलियम जोन्स द्वारा अभिज्ञानशाकुन्तलम् के अंग्रेजी अनुवाद के बाद अठारहवीं सदी के अंत में यूरोपीय विद्वानों एवम् लेखकों की भारतीय भाषाओं एवम् साहित्य में रूचि और भी प्रखरता से बढ़ी।

देखा जाए तो यूरोप के बहुत से ऐसे विद्वान हमें मिल जायेंगे जिनकी हिंदी भाषा साहित्य और संस्कृति में विशेष दिलचस्पी रही है। अपनी विशेष रूचि के कारण इन्होंने हिंदी भाषा और साहित्य के इतिहास को समृद्ध करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इन विद्वानों में पहला नाम फ्रेंच विद्वान गार्सां द तासी का है जिन्होंने हिंदी साहित्य का पहला इतिहास लिखने का प्रयास किया। इसी कड़ी में जार्ज ग्रियर्सन, फादर कामिल बुल्के और फ्रेंचेस्का ओर्सेनी आदि का महत्त्वपूर्ण योगदान है, जिन्होंने विभिन्न रूपों में हिंदी भाषा और साहित्य को समृद्ध करने का काम किया।

एशिया महाद्वीप के देशों में भी हिंदी भाषा और साहित्य के अध्ययन–अध्यापन की व्यवस्था हिंदी के प्रचार–प्रसार में महत्त्वपूर्ण योगदान दे रही है। एशिया में छोटे–बड़े बहुत से देश हैं। इन देशों के साथ भारत के बनते–बिगड़ते राजनीतिक सम्बन्धों का प्रभाव हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार पर भी पड़ता रहा है। यहाँ प्रत्येक देश के हिंदी भाषा और साहित्य के प्रचार–प्रसार के आंकड़े प्रस्तुत करना कठिन है इसलिए कुछ चुने हुये देशों में ही हिंदी की स्थिति का विवरण दिया जा रहा है।

नेपाल और भारत सांस्कृतिक रूप से एक–दूसरे के बहुत निकट रहे हैं। यहाँ की जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग अपने दैनिक जीवन में हिंदी भाषा का व्यवहार करता है। हिंदी भाषियों की बहुत बड़ी संख्या नेपाल की तराई में रहती है। वहाँ इन्हें मधेशी कहा जाता है। किन्तु नेपाल में राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी की स्थिति बहुत सम्मानजनक नहीं है। नेपाल में हिंदी की दशा और दिशा को डॉ. विमलेश कांति वर्मा के विवेचन से हम अच्छी तरह समझ सकते हैं– "1961 ई. तक नेपाल की तराई के सभी स्कूलों में तथा कॉलेजों में हिंदी माध्यम भाषा के रूप में प्रयुक्त होती थी, हिंदी भाषा और साहित्य पढ़ने–पढ़ाने की व्यवस्था थी। हिंदी शिक्षकों की अलग से नियुक्ति भी होती थी और हिंदी का सामान्य और विशेष दोनों ही रूपों में अध्ययन होता था। त्रिचंद कॉलेज, काठमांडू रामस्वरूप सागर कॉलेज, जनकपुर तथा मोरंग कॉलेज, विराट नगर में तो हिंदी माध्यम से ही पठन–पाठन होता था, पर आज नेपाल में हिंदी के अध्ययन–अध्यापन की स्थिति चिंताजनक है। स्कूलों में अब कहीं भी हिंदी की पढ़ाई नहीं होती है। हिंदी का अध्ययन केवल उच्य स्तर पर ही नेपाल में है।"[16]

भारत–विभाजन के पूर्व पाकिस्तान के पंजाब विश्वविद्यालय में हिंदी और संस्कृत की अच्छी व्यवस्था थी। किन्तु भारत–विभाजन के बाद कुछ दशकों तक यह कार्य बाधित रहा। सन् 1985 में डॉ. शाहिदा हबीब के लाहौर विश्वविद्यालय के अध्यक्ष बनने के साथ ही लाहौर में पुनः हिंदी के पठन–पाठन की व्यवस्था शुरू हुई। आज लाहौर विश्वविद्यालय तथा इस्लामाबाद के स्कूल ऑफ मॉडर्न लैंग्वेज में हिंदी भाषा और साहित्य के अध्ययन की व्यवस्था है। पाकिस्तान के लोक सेवा आयोग में हिंदी एक वैकल्पिक विषय के रूप में स्वीकृत है। पूर्वी पाकिस्तान यानि आज के बांग्लादेश के इण्डिया इंटरनेशनल स्कूल में हिंदी का शिक्षण स्कूल स्तर पर चल रहा है। अफगानिस्तान के एम्बेसी किंडरगार्टेन स्कूल, असमई स्कूल तथा शहीद जोगिन्दर सिंह स्कूल में हिंदी भाषा का अध्ययन प्राथमिक स्तर पर होता है।

भूटान में हिंदी को आपसी वार्तालाप में प्रयोग करने वाले और समझने वाले पर्याप्त लोग हैं। वहाँ के कई स्कूलों में हिंदी पढ़ाई जाती है। थाईलैण्ड में भी हिंदी बोलने और समझने वाले काफी लोग हैं। वहाँ पिछले कई वर्षों से सनातन धर्म तथा आर्य समाजी संस्थाओं के प्रयास से हिंदी की पढ़ाई की व्यवस्था की जा रही है। बैंकाक के थाई–भारत संस्कृति आश्रम में भी हिंदी के अध्ययन की व्यवस्था है। भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद का भी थाईलैण्ड में हिंदी के प्रसार में महत्त्वपूर्ण योगदान है। शिल्पकोन विश्वविद्यालय के डॉ. चालोङ् सारबदलूक पहले हिंदी अध्यापक थे। डॉ. बारदनूक थाईलैंड के प्रमुख हिंदी सेवी हैं जिन्होंने यहाँ के विद्यार्थियों के लिए हिंदी शिक्षण सामग्री तैयार की। म्यांमार में हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार में श्रीहरिबदन शर्मा का नाम अविस्मरणीय है। उन्होंने म्यांमार में हिंदी शिक्षण की वृहद योजना बनाई। इसके लिए उन्होंने श्री ब्राह्मण महासभा और अखिल ब्रह्म देशीय हिंदी साहित्य सम्मेलन की स्थापना की। महात्मा गाँधी की स्मृति में उन्होंने ब्राह्मण महासभा का नाम श्री गाँधी महाविद्यालय कर दिया। यह महाविद्यालय म्यांमार में हिंदी के प्रचार का प्रमुख केन्द्र बन गया।

श्रीलंका में हिंदी का अध्ययन–अध्यापन व्यापक स्तर पर हो रहा है। यहाँ के लोग भारत को समझने के माध्यम के तौर पर हिंदी के महत्त्व को जानते हैं। श्रीलंका की शिक्षण व्यवस्था में हिंदी काफी बड़े स्तर पर समाई है। यहाँ के परीक्षा विभाग द्वारा संचालित उच्चतम पाठशाला प्रमाणपत्र परीक्षा के लिए हिंदी भी एक विषय के रूप में स्वीकृत है। श्रीलंका के कई विश्वविद्यालयों में उपाधि स्तर पर हिंदी विषय लेनी की सुविधा है। कलणिय विश्वविद्यालय में हिंदी विभाग की स्थापना हुई है। जहाँ हिंदी भाषा साहित्य और संस्कृति का अध्ययन अध्यापन होता है। यहाँ बी.ए., बी.ए. ऑनर्स तथा एम.ए. हिंदी की व्यवस्था है। यहाँ की सिंघली भाषा में भी हिंदी की शिक्षण सामग्री स्वीकार की गई है जिससे हिंदी के शिक्षण व प्रचार–प्रसार को विशेष गति मिली है।

चीन में हिंदी शिक्षण की गतिविधि बीसवीं सदी के पाँचवें दशक के आरम्भ से ही है। 1949 में पेइचिंग विश्वविद्यालय में हिंदी का पाठ्यक्रम आरम्भ हुआ। आज केवल इसी विश्वविद्यालय में हिंदी शिक्षण की व्यवस्था है। पेइचिंग विश्वविद्यालय के अतिरिक्त दक्षिण एशियाई अध्ययन संस्थानों में हिंदी विद्वान चीनी विद्यार्थियों को हिंदी पढ़ा कर हिंदी का प्रचार–प्रसार

ISSN No. : 0970-9398

कर रहे हैं। पेइचिंग विश्वविद्यालय में अध्यापक रहे श्री यिन होंग यूएन ने चीनी भाषा में हिंदी का पहला व्याकरण लिखा और हिंदी की कई पुस्तकों का हिंदी भाषा में अनुवाद किया। रामचरितमानस के अनुवादक प्रोफेसर जिन दिंङ् हान का चीन में हिंदी के विकास में प्रमुख योगदान है। इन्होंने चीनी विद्यार्थियों के लिए हिंदी की पाठ्य–पुस्तकें तैयार करने के साथ–साथ हिंदी चीनी मुहावरा कोश भी तैयार किया। चीनी–हिंदी अध्येताओं के बीच प्रेमचंद काफी लोकप्रिय हैं इसलिए प्रेमचन्द के कथा–साहित्य पर आलोचनात्मक ग्रन्थ और उनके कई उपन्यासों का चीनी भाषा में अनुवाद भी किया गया है। इससे हम चीन में हिंदी की लोकप्रियता और प्रगति का सहज ही अनुमान लगा सकते हैं।

जापान में भी हिंदी काफी लोकप्रिय है। यहाँ के कई विश्वविद्यालयों में उपाधि के स्तर पर और ऐच्छिक विषय के रूप में हिंदी का पठन–पाठन होता है। जापान से काफी संख्या में छात्र भारत आकर हिंदी विषय में उच्च शिक्षा ग्रहण करते रहे हैं और अपने देश वापस जाकर वहाँ के विश्वविद्यालयों में अध्यापन का कार्य किया है। प्रोफेसर क्यूया दोई जिन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में हिंदी भाषा और साहित्य का अध्ययन किया, प्रो. तोशियो तनाका ने दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रोफेसर काजुहिको माचिदा तथा डॉ. तोमिओ मिजोकामी ने इलाहबाद विश्वविद्यालय में अध्ययन कर हिंदी भाषा में विशेज्ञता हासिल की। डॉ. टोमोको कीकूकी ने जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में प्रो. मैनेजर पाण्डेय के शोध निर्देशन में महादेवी वर्मा के साहित्य पर पीएचडी की। जापान में हिंदी साहित्य का अनुवाद भी पर्याप्त मात्रा में हुआ है।

कोरिया में हिंदी के अध्ययन–अध्यापन की व्यवस्था हांकुक यूनिवर्सिटी ऑफ फॉरेन स्टडीज और पूसान कॉलेज ऑफ फॉरेन स्टडीज में है। फिलिपींस में हिंदी शिक्षण की व्यवस्था मनीला की यूनिवर्सिटी ऑफ फिलिपींस के एशिया सेंटर में है। सिंगापुर में हिंदी शिक्षण का आरम्भ रामकृष्ण मिशन द्वारा संचालित विद्यालयों से हुआ। यहाँ की हिन्दू सोसायटी हिंदी के प्रचार–प्रसार के लिए प्रतिबद्ध है। आज सिंगापुर में हिंदी का अध्ययन–अध्यापन प्राथमिक कक्षाओं से लेकर प्री यूनिवर्सिटी तक होता है। यहाँ हिंदी शिक्षण की नींव सुदृढ़ हो रही है।

हिंदी को विश्व भाषा का रूप देने में प्रवासी भारतीयों का प्रमुख योगदान है। भारतीयों के प्रवास का दौर मॉरिशस– 1834 ई., त्रिनिदाद –1845 ई., दक्षिण अफ्रीका –1860 ई., गुयाना–1870 ई., सूरीनाम–1873 ई. तथा फिजी– 1879 ई. में रहा है। इन देशों में जाने वाले अधिकतर भारतीय मूलतः उत्तर प्रदेश तथा बिहार के थे। उनकी बोलचाल की भाषा अवधी, भोजपुरी व मैथिली थी। उनमें से कुछ हिंदी खड़ी बोली का भी प्रयोग करते थे। विश्व के विभिन्न देशों में जा पहुँचे इन भारतीयों की मूल भाषा से अनेक भाषा शैलियों का विकास हुआ तथा उनके नए–नए नाम रखे गए। फिजी में बोली जाने वाली हिंदी को वहाँ के प्रवासी भारतीय 'फिजीबात' कहते हैं, दक्षिण अफ्रीका की हिंदी को नैतली/नैटाली तथा सूरीनाम की हिंदी को 'सरनामी हिंदी' या 'सरनामी' कहा जाता है। इन शैलियों का व्यावहारिक रूप अधिकतर प्रवासी भारतीयों के घर या औपचारिक बातचीत में मिलता है।"[17] वर्तमान में विदेश में रह रहे प्रवासी भारतीयों की जनसंख्या करीब 2 करोड़ है, जिसमें अधिकांशतः हिंदी भाषी हैं।

एक भाषा के रूप में हिंदी न सिर्फ भारत की पहचान है बल्कि यह हमारे जीवन मूल्यों, संस्कृति एवं संस्कारों की सच्ची संवाहक, संप्रेषक और परिचायक भी है। बहुत सरल, सहज और सुगम भाषा होने के साथ हिंदी विश्व की संभवतः सबसे वैज्ञानिक भाषा है। हिंदी हमारे पारम्पजरिक ज्ञान, प्राचीन सभ्यकता और आधुनिक प्रगति के बीच एक सेतु भी है। हिंदी भारत संघ की राजभाषा होने के साथ ही ग्यारह राज्यों और तीन संघ शासित क्षेत्रों की भी प्रमुख राजभाषा है। भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल अन्य इक्कीस भाषाओं के साथ हिंदी को एक विशेष स्थान प्राप्त है। वर्तमान में हमारे देश के अधिकांश सरकारी व गैर सरकारी संगठनों के कामकाज की भाषा हिंदी ही है। हमारे देश के सरकारी विद्यालयों में शिक्षा का मुख्य माध्यम हिंदी ही है।

भाषा का 'वर्तमान और भविष्य' किसी देश की सरकार की भाषागत नीतियों से भी तय होता है। भारत सरकार ने हिंदी भाषा की सुदृढ़ता के लिए कई

कदम उठाये हैं। भारत सरकार के राजभाषा विभाग द्वारा हिंदी भाषा को समृद्ध करने के लिए 'हिंदी शब्द सिंधु' शब्दकोश का निर्माण किया गया है। इसके साथ ही राजभाषा विभाग द्वारा सी डैक के सहयोग से तैयार किये गये लर्निंग इंडियन लैंग्वेसज विद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (लीला) मोबाइल ऐप देश भर में विभिन्न भाषाओं के माध्यम से जन सामान्य को हिंदी सीखने में सुविधा और सुगमता प्रदान कर रहा है।

विश्व–भाषा के रूप में हिंदी ने पिछले कुछ वर्षों में कई महत्त्वपूर्ण उपलब्धियाँ हासिल की हैं। भारत सरकार के अथक प्रयासों के बाद संयुक्त राष्ट्र ने 2018 में हिंदी में ट्विटर अकाउंट और न्यूज पोर्टल शुरू किया। संयुक्त राष्ट्र महासभा (UNGA) ने जून' 2022 में पहली बार हिंदी भाषा से जुड़े भारत के प्रस्ताव को मंजूरी दी है। इस प्रस्ताव में कहा गया है कि संयुक्त राष्ट्र (UN) के सभी जरूरी कामकाज और सूचनाओं को इसकी आधिकारिक भाषाओं के अलावा दूसरी विश्वभाषाओं जैसे हिंदी आदि में भी जारी किया जाये।

भारत के विदेश मंत्रालय द्वारा विदेशों में हिंदी की पढ़ाई को प्रोत्साहित करने के लिए कई कदम उठाए गए हैं। विदेशी विश्वविद्यालयों में भारतीय भाषा–संस्कृति के अध्ययन को प्रोत्साहित करने के लिए 30 से अधिक हिंदी पीठ स्थापित किये गये हैं। वतर्मान समय में 100 देशों के करीब 670 शिक्षण संस्थानों में हिंदी पढ़ाई जाती है।

मातृ–भाषा और शिक्षा का बहुत गहरा सम्बन्ध है। भारत में मातृ–भाषा की स्थिति को मजबूत करने के लिए भारत सरकार ने नई शिक्षा–नीति 2020 के तहत कई प्रावधान किये हैं। नई शिक्षा नीति 2020 भारतीय भाषाओं में शिक्षण तथा उसके संरक्षण के लिए कटिबद्ध है। बहुभाषिक, समावेशी और समान गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सुनिश्चित करने हेतु नई शिक्षा–नीति के अध्याय चार के 4.1.1 में यह सुनिश्चित किया गया है कि कम से कम पाँचवीं और हो सके तो आठवीं कक्षा तक शिक्षा का माध्यम मातृ–भाषा हो। मातृ–भाषा में शिक्षा का उद्देश्य स्थाई तरीकों के माध्यम से पारम्परिक ज्ञान और संस्कृतियों को संरक्षित करना है। इसमें संविधान की 22 भाषाओं में विद्यालयी शिक्षा से लेकर विश्वविद्यालयी शिक्षा तक की पढ़ाई को बढ़ावा देने की बात की गई है। त्रिभाषा फार्मूले के तहत कम से कम 2 भारतीय भाषाओं के साथ किसी भी एक विदेशी भाषा चुनने की उदारता भी दी गईं है। इससे हिंदी न केवल भारत में बल्कि विश्व में भी बहुत मजबूती से अपनी पहचान बनायेगी। द लैंग्वेजेज ऑफ़ इंडिया प्रोजेक्ट के तहत भारत की विभिन्न भाषाओं, भौगोलिक क्षेत्र, आदिवासी भाषाओं की प्रकृति और संरचना (आवश्यकतानुसार अनुवाद के माध्यम से) को जानने और समझने का भी प्रावधान है।

नई शिक्षा–नीति के तहत वर्तमान सरकार व्यावसायिक पाठ्यक्रमों (विभिन्न प्रोफेशनल कोर्सेज) को भी हिंदी भाषा में ही पढ़ाने पर जोर दे रही है। भारत सरकार द्वारा मेडिकल और इंजीनियरिंग की पढ़ाई भी अब हिंदी भाषा में करवाई जा रही है। वर्तमान में भारत के कुछ राज्यों के सरकारी मेडिकल कॉलेजों में हिंदी माध्यम से पढ़ाई की शुरुआत की जा चुकी है।

हिंदी भाषा के पास वैश्विक होने की गुणधर्मिता की लम्बी परम्परा है। कहना न होगा यह गुणधर्मिता उसे संस्कृत से विरासत में मिली है। हिंदी भाषा में उसके लचीलेपन और उदारता के कारण आत्मसातीकरण की अपूर्व क्षमता विद्यमान है। अपने इन गुणों के कारण वह विश्व भाषा के वृहत् अंतर्जाल में अपना अलग अस्तित्व बनाये रखने में सक्षम है। हिंदी की इस ताकत को देखते हुये महात्मा गाँधी ने ठीक ही कहा है 'हिंदी सिर्फ भारत की राष्ट्रभाषा ही नहीं होनी चाहिए बल्कि उसे अंतर्राष्ट्रीय भाषा का दर्जा मिलना चाहिए।' आज गाँधी जी का सपना साकार हो चुका है। अपनी जीवन यात्रा में हिंदी ने संस्कृत भाषा की विरासत को सँभालते हुये विश्व भाषा के रूप में अपनी विशिष्ट उपस्थिति दर्ज करा दी है। 'दिसम्बर 2016 में विश्व आर्थिक मंच ने विश्व की 10 सर्वाधिक शक्तिशाली भाषाओं की एक सूची जारी की जिसमें हिंदी को भी जगह दी थी।'[18]

भारत हिंदी फ़िल्मों, भारतीय योग, भारतीय कला, आयुर्विज्ञान से विश्व भर में अपनी पहचान बना चुका है। हिंदी भाषा का प्रयोग आज ज्ञान, व्यापार, तकनीक, सूचना–प्रौद्योगिकी के विविध क्षेत्रों में भरपूर हो रहा है। भारत में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की शिक्षा

हिंदी में प्रदान करने की पहल हो चुकी है। रोजगार मिश्रित कला के विविध क्षेत्रों– शिक्षण, पुस्तक–लेखन, अनुवाद, प्रूफ–रीडिंग, स्क्रिप्ट–लेखन, संवाद–लेखन, कंटेंट–लेखन के साथ हिंदी डबिंग जैसे अनेक काम–काज आज हिंदी भाषा में हो रहे हैं।

हिंदी भाषा के समक्ष कुछ चुनौतियाँ भी हैं। सबसे बड़ी चुनौती तो इसे 'राष्ट्रभाषा की स्वीकार्यता' का न मिलना ही है। हिंदी भारत की सार्वभौमिक संवाद भाषा बने यह भी एक चुनौती है। इसके अतिरिक्त एक उच्च शिक्षित आभिजात्य वर्ग ऐसा भी है जो हिंदी बोलने में शर्म और हिचकिचाहट महसूस करता है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की 41 फीसदी आबादी की ही मातृभाषा हिंदी है। इसके अलावा लगभग 75 फीसदी भारतीयों की दूसरी भाषा हिंदी है जो इसे बोल और समझ सकते हैं।

इंटरनेट के बढ़ते इस्तेमाल ने हिंदी भाषा के भविष्य के संबंध में नई राहें दिखाई हैं। गूगल के अनुसार भारत में अंग्रेजी भाषा में जहाँ विषयवस्तु निर्माण की रफ्तार 19 फीसदी है तो हिंदी के लिए यह आंकड़ा 94 फीसदी है। इसलिए हिंदी को नई सूचना–प्रौद्योगिकी की जरूरतों के अनुसार ढाला जाए तो यह इस भाषा के विकास में बेहद उपयोगी सिद्ध हो सकती है। इसके लिए सरकारी और गैर सरकारी संगठनों के स्तर पर तो प्रयास किए ही जाने चाहिए, निजी स्तर पर भी लोगों को इसे खूब प्रोत्साहित करना चाहिए। इसके अतिरिक्त हिंदी भाषियों को भी गैर हिंदी भाषियों को खुले दिल से स्वीकार करना होगा। उनकी भाषा–संस्कृति को समझना होगा तभी ये हिंदी को खुले मन से स्वीकार करने को तैयार होंगे।

जीवंत भाषा की एक विशेषता यह भी है कि ग्रहणशीलता की उसकी भुभुक्षा बनी रहती है, यह भुभुक्षा ही उसे चलायमान करती है। विश्व भाषा के रूप में हिंदी को अभी और यात्रा करनी है। हिंदी अभी भी ज्ञान की मुख्य भाषा नहीं बनी है, चिन्तन–मनन के अथाह सागर में ज्ञान के मोती के लिए हिंदी भाषा को अभी और गोते लगाने हैं।

–अध्यक्ष
भारतीय भाषा केन्द्र,
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय,
नई दिल्ली– 110067

संदर्भ

1. महाभारत, 12.233.24
2. ईशोपनिषद्, 1.
3. महोपनिषद, 4.71
4. गोस्वामीतुलसीदास, रामचरितमानस, अरण्यकाण्ड, 1.15.
5. जयशंकर प्रसाद, कामायनी, आनंद सर्ग
6. ऋग्वेद, 1.164.46
7. मलिक मुहम्मद जायसी, अखरावट, सोरठा– 24,
8. अमर्त्यसेन, भारतीय अर्थतंत्र, इतिहास और संस्कृति, पृष्ठ– 140– 160,
9. मैक्समूलर, भारत हमें क्या सीखा सकता है?, पृष्ठ संख्या– 20–21, राजकमल प्रकाशन
10. अभय कुमार दुबे, हिंदी में हम, पृष्ठ संख्या– 65, वाणी प्रकाशन
11. राजभाषा भारती, (अक्टूबर– दिसम्बर 2014), पृष्ठ संख्या– 23
12. राजभाषा, जयंती प्रसाद नौटियाल, भारत सरकार,

    https://www.google.com/url?sa=t&source=web&rct=j&opi= 89978449&url=https://rajbhasha.gov.in/sites/default/files/drjpnautiyal.pdf&ved= 2ahUKEwjhl-L5tr-EAxXLyqACHQU1D0UQFnoECBgQAQ&usg= AOvVaw3D_-2bW9fvFMUpqtIcwpx3
13. राजभाषा भारती, जनवरी, 2023, पृष्ठ संख्या– 62
14. गंगाप्रसाद विमल, पृष्ठ संख्या 50
15. गंगाप्रसाद विमल, पृष्ठ संख्या 51
16. विमलेश कांति वर्मा, विश्व में हिंदी रू अध्ययन और अध्यापन की स्थिति (राजभाषा हिंदी सम्पादित पुस्तक का आलेख)

    प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
17. राजभाषा भारती, जनवरी, 2023, पृष्ठ संख्या– 12
18. राजभाषा भारती, जनवरी, 2023, पृष्ठ संख्या– 66

ISSN No. : 0970-9398

लोक कथा में लोकमन- संदर्भ : भोजपुरी लोक कथाएँ

डॉ. साक्षी

साहित्य समाज के मनोविज्ञान को अभिव्यक्ति देने का एक भावनात्मक व तार्किक माध्यम माना जा सकता है। इसके साथ ही समाज के मनोविज्ञान को अकृत्रिम अभिव्यक्ति देने वाला मनोरंजक प्रकल्प लोक साहित्य–लोक मनोविज्ञान है। दोनों ही एक दूसरे के सामानांतर चलती धाराएं हैं। साथ ही यह देखा भी गया है कि ये दोनों ही एक–दूसरे से प्रेरणाएं भी लेने का कार्य करती हैं। संभवतः इसी कारण लोक साहित्य व शिष्ट साहित्य की चर्चा में लगभग समान भावनात्मक प्रेरणाएं काम करती दिखती या प्रतीत होती हैं। राम कथा इसका परिपुष्ट उदाहरण है। इसमें लौकिक और आध्यात्मिक जीवन ऐसा रच बस गया है कि लोक और शिष्ट साहित्य दोनों ही परम्पराओं में इनको अलगाना बेहद मुश्किल है। वास्तव में 'लोक' शब्द संस्कृत के 'लोक दर्शने' धातु से 'ध' प्रत्यय करने पर निष्पन्न हुआ है। इस धातु का अर्थ 'देखना' होता है, जिसका लट लकार में अन्य पुरुष एक वचन का रूप 'लोकते' है। अतः 'लोक' शब्द का अर्थ हुआ 'देखने वाला'। इस प्रकार वह समस्त जन समुदाय जो इस कार्य को (देखने का कार्य) करता है 'लोक' कहलायेगा'। 'लोक' शब्द अत्यंत प्राचीन है साधारण जनता के अर्थ में इसका प्रयोग ऋग्वेद में अनेक स्थानों पर किया गया है। ऋग्वेद में 'लोक' के लिए 'जन' शब्द का भी प्रयोग उपलब्ध होता है।[1]

डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'लोक' के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करते हुए लिखा है कि 'लोक' शब्द का अर्थ 'जन–पद' या 'ग्राम्य' नहीं है बल्कि नगरों और गावों में फैली हुई वह समूची जनता है जिनके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं हैं। ये लोग नगर के परिष्कृत, रूचि संपन्न तथा सुसंस्कृत समझे जाने वाले लोगों की अपेक्षा अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं और परिष्कृत रूचि वाले लोगों कि समूची विलासिता और सुकुमारिता को जीवित रखने के लिए जो भी वस्तुएं आवश्यक होती हैं उनको उत्पन्न करते हैं।[2]

डा. कृष्णदेव उपाध्याय के मत के अनुसार 'लोक' की परिभाषा निम्नलिखित है–

"आधुनिक सभ्यता से दूर, अपनी सहज प्राकृतिक अवस्था में वर्तमान, तथाकथित असभ्य अशिक्षित एवं असंस्कृत जनता को 'लोक' कहते हैं जिनका जीवन–दर्शन और रहन–सहन प्राचीन परम्पराओं, विश्वासों तथा आस्थाओं द्वारा परिचालित एवं नियंत्रित होता है।"[3]

इससे ज्ञात होता है कि जो लोग संस्कृत तथा परिष्कृत लोगों के प्रभाव से मुक्त रहते हुए अपनी पुरातन स्थिति में वर्तमान हैं उन्हें 'लोक' कि संज्ञा प्राप्त होती है। वस्तुतः अहंकार–भाव (साहित्य को निजी रचना न समझना) से रहित इन्हीं लोगों के साहित्य को लोक साहित्य कहा जाता है। यह साहित्य प्रायः मौखिक होता है तथा परम्परागत रूप से चला आता है। यह साहित्य जब तक मौखिक रहता है तभी तक इसमें नित नूतनता, प्रवाहमान जलधारा के सामान ऊर्जा वर्तमान रहती है जो कि इसे कालजयी बनाती है। लिपिबद्ध होने के उपरांत इसका लोकोन्मुख स्वभाव समाप्त हो जाता है। वस्तुतः "लोक संस्कृति का सृजनधर्मी संस्कार शिष्ट संस्कृति में अंतरगमन करता है, उसे प्रभावित करता है।"[4]

इस अर्थ में बहुतरे लोक संस्कृति और नागर संस्कृति पूरक एवं अन्योनाश्रित होते हैं। ये एक दूसरे से शक्ति ग्रहण करते रहते हैं। किसी देश के धार्मिक विश्वासों, अनुष्ठानों तथा क्रिया–कलापों के पूर्ण परिचय के लिए दोनों संस्कृतियों में परस्पर सहयोग अपेक्षित रहता है और उसके लोक को समझना अत्यंत आवश्यक है। इसका बीज भाव हमें 'वेद' में दृष्टिगोचर होता है तथा इसका सर्वोतम उदाहरण महाभारत है। जहाँ एक साथ लोक और अभिजात्य दोनों ही संस्कृतियों का समुच्य मिलता है। इसके कारण महाभारत में लोक कथाओं की बहुलता है। आप तत्कालीन (महाभारत कालीन) जीवन के किसी भी प्रसंग का उदाहरण

ISSN No. : 0970-9398

महाभारत में खोज सकते हैं। इसके साथ ही लोक और आभिजात्य के पृथकता की स्थिति का भी परिचय आप यहाँ पा सकते हैं। इसे महाभारत के नायक योगपुरुष श्री कृष्ण ने वेद से पृथक लोक की सत्ता को स्वीकार किया है। वे कहते हैं कि मैं क्षर से अतीत हूँ और अक्षर से भी उत्तम हूँ, इसलिये लोक में और वेद में 'पुरुषोत्तम' नाम से प्रसिद्ध हूँ।

"यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः।।15.18।।"[5]

लोक साहित्य का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। विभिन्न विद्वानों ने लोक साहित्य का वर्गीकरण लगभग थोड़े बहुत परिवर्तन के साथ समान रूप से किया है।

लोक साहित्य को डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय ने प्रधानतया पांच भागों में विभक्त किया हैः–

1. लोक–गीत (Lock–lyrics),
2. लोक–गाथा (Lock–ballads),
3. लोक–कथा (Lock–tales),
4. लोक–नाट्य (Lock–drama),
5. लोक–सुभाषित (Lock–sayings)[6]

लोक साहित्य के इसी प्रकार का वर्गीकरण डॉ सुरेश गौतम ने किया है। इन्होंने स्पष्ट रूप से लोक साहित्य का वर्गीकरण तो नहीं किया है किन्तु विभिन्न अध्यायों में लोकसाहित्य के विभिन्न प्रकारों का विश्लेषण किया है जिससे यह स्पष्ट हो जाता है –1– लोकगीत, 2–लोककथा, 3–लोकगाथा, 4–लोकनाटक, 5–प्रकीर्णक साहित्य या लोकोक्ति साहित्य।[7]

इस उपरोक्त वर्गीकरण से थोड़ा भिन्न स्वरूप डॉ. सत्येन्द्र के यहाँ मिलता है। डॉ सत्येन्द्र ने सम्पूर्ण वार्ता को दो भागों में बांटा है– 1–लोकवाणी विलास, 2–लोक कला विलास। यहाँ पर लोक साहित्य से तात्पर्य 'लोकवाणी विलास' से है। लोक वाणी विलास के तीन भेद हैं– 1–बात (सामान्य व्यवहार विषयक), 2–कथात्मक, 3–गेय। इसमें कथात्मक के इन्होने छह भेद किये हैं–

1–धर्मगाथा (myth), 2–परीकथा (fairy tales), 3–अवदान (legend), 4–लोक कहानी (folk tale), 5–तंत्राख्यान (fable), 6–लोककथा (ballad)।[8]

"लोक कथाओं का जन्म कब–कहाँ–कैसे हुआ और इसका आदि प्रणेता कौन था, यह बता पाना निश्चित रूप से बहुत मुश्किल है। लोक कथाओं की परंपरा तो ढूंढ़ी जा सकती है लेकिन उसका कोई निश्चित इतिहास निर्धारित नहीं किया जा सकता। यह एक सबसे प्राचीन और घुमंतू विधा है लेकिन इसके यात्रा पथ को निश्चित कर पाना बहुत मुश्किल है। यह वेदों की तरह ही एक श्रुति विधा है। इसे लोक जीवन की स्मृति भी कह सकते हैं।" (पृष्ठ 168, लोकसाहित्य व्याप्ति और यथार्थ, डॉ सुरेश गौतम)

प्राचीन समय में ज्ञान को सहेजने के लिए, ज्ञान को स्मृति आधार पर स्मरण रखने व चलायमान स्थिति हेतु अनायास ही ऐसे दृष्टान्तों–लोक अनुभवों को संरक्षित करने की मौखिक प्रक्रिया में लोक कथा का जन्म हुआ होगा। बंजारों व घुमंतू वृत्ति ने इसे स्थान स्थान तक पहुँचाया होगा। ऐसे ही लोक सम्मत ज्ञान के विनिमय द्वारा लोक ज्ञान सहित लोक कथा में भी श्रीवृद्धि हुई होगी। इसे सुरेश गौतम जी 'लोककथा की 'अचछत' परंपरा की गत्यात्मक और सातत्य परम्परा' पुकारते हैं। लोक साहित्य के वर्गीकरण में लोक कथाओं का प्रमुख स्थान है। ये अपनी सरसता और लोकप्रियता के कारण महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। हमनें बचपन में अपनी दादी, नानी, माँ या अन्यों से इस प्रकार की कई कहानियां सुनी हैं जैसे– 'चंदा मामा', 'राजकुमारी फूलकुमारी'आदि। वस्तुतः अपनी बोधगम्यता के कारण ये अचूक प्रभाव रखती है। ये बालकों हेतु प्रथमतः शिक्षा एवं समाज से जोड़ने का माध्यम हैं। इनकी भारत में एक लंबी परम्परा दिखती है जैसे– पंचतंत्र, हितोपदेश आदि।

लोक कथाओं के वर्ण्य–विषय की दृष्टि से इन्हें छः वर्गों में विभाजित किया गया हैः–

1. उपदेश–कथा,
2. व्रत–कथा,
3. प्रेम–कथा,
4. मनोरंजन–कथा,
5. सामाजिक–कथा,
6. पौराणिक–कथा।[9]

भारतवर्ष कहानियों का देश है। "ऐसा अनुमान किया जाता है कि यहाँ लगभग तीन सहस्त्र लोक–कथाएँ

हैं। उनका विधिवत संकलन लोकवार्ता शास्त्र का महत्वपूर्ण अंग है।"[10] यहाँ हिंदी लोक कथाओं की प्रवृतियों के विश्लेषण हेतु राजस्थानी, हरयाणवी और भोजपुरी लोककथाओं का उपयोग किया है। इनमें दीर्घ और लघु–कथा दोनों ही है। अपने स्वरूप में सरल, सहज और मूल अर्थों में यह उपदेशात्मक है किन्तु हम इन्हें सामाजिक और मनोरंजन कथा के वर्ग में भी रख सकते हैं।

इस के कथा निष्कर्ष या उद्देश्य के आधार पर जो वर्ग श्रेणियाँ बनती है वो निम्नाकिंत है –

1. व्यवहारकुशलता या बुद्धि की कीमत,
2. लोभ और निजी स्वार्थ के परिणाम,
3. कर्त्तव्य की उपेक्षा एवं व्यसन का दुष्परिणाम,
4. जाति का प्रभाव,
5. कर्मठता का प्रभाव,
6. पारब्ध्य (भाग्य),
7. कपटी पर कभी विश्वास न करें या जैसे को तैसा
8. अविश्वास सम्बन्ध हेतु विष सामान
9. परोपकार का महत्व
10. राजनैतिक दांवपेंच
11. गुण कभी व्यर्थ नहीं जाते
12. दुष्टता का परिणाम बुरा
13. दुनिया पर नहीं अपने कार्य पर ध्यान दें।

व्यवहारकुशलता या बुद्धि सर्वश्रेष्ठ हैः इस वर्ग में'राजा और घूसखोर' (भोजपुरी),[11] 'बुद्धि की कमाई' (भोजपुरी),[12] 'चतुर लड़की' (भोजपुरी),[13] 'लेनी की देनी' (भोजपुरी)[14] आदि रखे जा सकते हैं। इस वर्ग कि कहानियों में लोक में प्रचलित संबंधो और व्यवहारों के माध्यम से व्यक्ति को व्यवहारकुशल होने कि सीख दी गई है। इनमें से कुछ लोककथा आज भी लोक गीत की तरह विभिन्न अंचलों में गाई जाती हैं।[15]

लोभ और निजी स्वार्थ के दुष्परिणामः इस वर्ग की कथा में मुख्यतः 'मणिवाला सांप' (भोजपुरी[16]) कहानी है। इस कहानी में पाँव भर दूध के बदले गरीब किसान को एक मणि प्रत्येक दिन मिल जाती थी। पर किसान की अनुपस्थिति में किसान के बेटे ने अधिक लालच में सांप को मार दिया और सांप ने किसान के बेटे को डस लिया। इस लालच के कारण वरदान अभिशाप बन गया और सांप रूपी मित्र शत्रु हो गया। लोभ और निजी स्वार्थ किसी भी समाज या संगठन के पतन का कारण बनता है। इसी तरह 'चार चोर' (भोजपुरी)[17] कहानी समाजिक जीवन या मनुष्य मात्र की इसी कमजोरी को दर्शाता है। 'चोर–चोर' जो एक साथ अनेक कार्यों में अत्यंत प्रवीण थे स्वार्थ ग्रस्त बन सभी एक दूसरे की मृत्यु का कारण बनते हैं। हमें बचपन से सिखाया जाता है कि एकता में बल है और एक से एक मिलकर ग्यारह बनते हैं लेकिन जैसे जैसे समाज आगे बढ़ रहा है सभी असंगठित हो एकाकी जीवन जीने को अभिशप्त है। भारतीय समाज के असंगठित एवं क्षुद्र स्वार्थ युक्त जीवन चरित्र को यहां दर्शाया गया है। हमारी दासता के प्रमुख कारणों में से यह भी एक रहा है। हमारे आपसी संघर्ष ने ही विदेशी आक्रान्ताओं के आने की जगह बनाई। इसी मानसिक कमजोरी के प्रति हमारे पूर्वज व सद्पुरुष इंगित करते रहे हैं। मनुष्य मात्र के लिए लिए जिजीविषा एवं जुझारूपन एक सकारात्मक गुण है। किन्तु यही गुण जब किसी के नुकसान पर अपने लाभ की बात करता है तो दुष्टकर प्रवृत्ति वाला कहलाता है। 'बटेर और कौवा' (भोजपुरी)[18] इसी तरह की कहानी है, जिसमें कौवा स्वार्थ की पराकाष्ठा पर जाकर बटेर के बच्चों को मारकर खाना चाहता है। लेकिन जैसी करनी वैसी भरनी कहावत अनुसार स्वयं उसी की मृत्यु हो जाती है।

कर्त्तव्य की उपेक्षा एवं व्यसन का दुष्परिणाम : इसमें व्यसन में लिप्तता का दुष्परिणाम गौ–पालन और कृषि कार्य या कर्तव्य का महत्व बताया गया है। मानव हेतु कर्तव्य को धार्मिक अनुष्ठान से ऊपर होने की बात कही गयी है।

जाति का प्रभाव : जैसे एक लोकोक्ति है– "आदत जात कभी ना छूटे कुत्ता टांग उठाके मूते"। लोक के अन्दर इस प्रकार की जातिवादी मानसिकता एक नकारात्मक और रूढ़िवादी स्वभाव के रूप में रहती है, भारतीय ग्राम इसका सबसे जीवंत उदहारण है। वस्तुतः यह सामंतवादी जीवन मूल्य का प्रभाव है जिसके कारण शोषण आधारित जातिवादी व्यवस्था को बढ़ावा मिलता है। मनुष्य अपनी प्रवृत्ति एवं आदत के अनुरूप

ISSN No. : 0970-9398

जीवन जीता है। इस तरह एक भिन्न कलेवर की कहानी है 'राजा और लकडहारा' (भोजपुरी)।[19] इसमें लकडहारा अपने स्वभाव के अनुसार लकड़हारा ही रहता है। वस्तुतः मनुष्य अपनी मूल प्रवृत्ति के अनुसार ही व्यवहार करता है। 'सियार और सारस' (भोजपुरी)[20] कहानी इस सन्दर्भ में महत्वपूर्ण है। सियार यदि अपने जातिगत स्वभाव हिंसा को नहीं छोड़ सकता तो सारस को भी अपने जातिगत स्वभाव व्यक्तिगत सुरक्षा को नहीं छोड़ना चाहिए।

भारतीय जनजीवन की जिजीविषा या कर्मठता का प्रभावः 'जो अपनी सहायता करता है ईश्वर भी उसी की सहायता करते है।' इसी तरह जीवन में अथक परिश्रम या जिजीविषा की कथा है 'चिड़िया का संघर्ष' (भोजपुरी)।[21] यह कहानी भारतीय जन जीवन की जिजीविषा की कहानी है। एक छोटी सी चिड़िया बूंट (चना) के दाने के लिए या अपने अधिकार हेतु सम्पूर्ण दुनिया से लड़ गयी। उसके इस संघर्ष के सामने राजा से लेकर ऐरावत हाथी तक को भी झुकना पड़ा। अंततः चिड़िया ने अपना स्वत्व प्राप्त किया। इस कहानी में एक दृष्टिकोण और उभरता है–

"बिनय न मानत जलधि जड़ गए तीनि दिन बीति।
बोले राम सकोप तब भय बिनु होइ न प्रीति।"[22]

चिड़िया ने एक एक कर सभी को अपना पक्ष बताया किन्तु अंततः दबाव से ही व्यवस्था उसके पक्ष में आई। हम इस कहानी में देखते हैं कि लाठी, आग, समुन्दर जैसे निर्जीव तत्वों का भी मानवीकरण किया गया है।

पारब्ध्य (भाग्य) : भारतीय जन समाज का भाग्य और कर्मफल पर अटूट विश्वास रहा है। ऐसी ही एक कहानी 'अभी कुछ बाकी है' (भोजपुरी)[23] है। इसी प्रकार एक कहानी 'संयोग' (भोजपुरी)[24] है। इसी तरह की अन्य एक कथा है जो कुछ लम्बी भी है – 'अबूझ पंडिताई' (भोजपुरी)[25]। किन्तु 'अबूझ पंडिताई' भाग्य और ज्योतिष के कलेवर में मनुष्य मात्र के बुद्धिमान होने के कारक को विश्लेषित करती है। समझदार एवं नासमझ व्यक्ति के अंतर को बताया गया है– "जो कोई बात सुनकर मन ही मन गुनता है, विचार करता है, बात को पचा कर रखता है, वह समझदार आदमी होता है और जो इधर की बात उधर करता है, एक कान से सुनकर दूसरे कान से निकाल देता है, वह नासमझ होता है।"[26] इस तरह की कुछ कहानियों में पारब्ध्य की सर्वोच्चता को स्वीकार किया गया है। वस्तुतः भाग्य का सम्बन्ध पूर्वजन्म के कर्म से जोड़ा गया है और इस अर्थ में यह अटल है इसमें कोई बदलाव नहीं हो सकता। सामान्य भारतीय जनता भाग्यवादी है इन्हीं धारणा का परिचय यहाँ मिलता है। इस कर्म के विधान हेतु शकुन–अपशकुन की अवधारणा निर्मित हुई है। जिसके लिए हम ईश्वर से 'मनोती' (मान्यता) करते हैं। यदि निष्पक्ष रूप से देखें तो यह ईश्वर को घूस ही देना तो हुआ जिसमें ईश्वर को हमारे काम पूरा करने पर उपहार स्वरूप देते हैं। इसी भांति 'जंबूक बोला यह गति, तू क्या बोला काग' (भोजपुरी) कहानी है।[27] इसमें लड़की पशु–पक्षियों की भाषा समझ सकती है। किन्तु भाग्यवश वह अपने ससुराल में राक्षसी कहलाती है और बाद में सुमंगला हो जाती है।

कपटी पर कभी विश्वास न करें या जैसे को तैसा– 'ऊँट, फुंट और सियार' (भोजपुरी)[28] कहानी में ऊंट एक कपटी सियार से मित्रता करता है फिर धोखा भी देता है। लेकिन ऊँट ने अपनी समझ बुझ से सही समय पाकर अपना बदला पूरा किया। इसी क्रम में 'बन्दर और मगरमच्छ' (भोजपुरी)[29] और'जोड़ का तोड़' (भोजपुरी)[30] कहानी हैं।

अविश्वास सम्बन्ध हेतु विष सामान– 'निहोरा का नेवला' (भोजपुरी)[31] एक सुप्रसिद्ध लोक कथा है। इसमें एक दंपत्ति ने विश्वास के अभाव में अपने भाई सामान नेवले की हत्या कर दी और बाद में पछताते रहे। इसी तरह एक 'माहूर फल' (भोजपुरी) कहानी है।[32] इन कहानियों से हमें यह सीख मिलती है जब किसी अपने पर अविश्वास उत्पन्न हो तो थोड़ा धैर्य रखकर जांच परख कर लेनी चाहिए फिर ही किसी निर्णय पर आना चाहिए।

परोपकार का महत्व–'चिड़िया का उपकार' (भोजपुरी)[33] कथा में चिड़िया ने बाढ़ में चूंटा की जान बचाई बाद में उसने चिड़िया को बघेलिये से बचाया। यह एक अच्छे सम्बन्ध का परिणाम है।

राजनैतिक दांवपेंच : 'कौवा हंकनी' (भोजपुरी)[34] एक दिलचस्प कहानी है, कथातत्त्व से भरपूर। इसमें राजपरिवार के अंदर व्याप्त षड़यंत्र को बताया गया है।

इसके साथ ही सामान्य व्यक्ति की स्वामी भक्ति और सहज बुद्धि के द्वार बिगड़े काम को ठीक करना दिखाया गया है।

गुण कभी व्यर्थ नहीं जाते: 'रोहिणी आई धरती नाहीं (भोजपुरी),[35] कहानी किसान के उचित ज्ञान और योग्यता के अनुसार पुरस्कार मिलने की कहानी है।

स्त्री अस्मिता: 'जैसे को तैसा' (भोजपुरी)[36] स्त्री अस्मिता की कथा है। इसका अंतिम वाक्य अत्यंत कठोर है। राजकुमारी का जवाब "नांव चढ़ाई पांच–पांच लात, तब भी न गई चुम्मे की बात"।[37] स्त्री अस्मिता को लेकर 'बुढ़िया की लड़की' (भोजपुरी)[38] कहानी है। इसमें एक बुढ़िया और उसकी बेटी है। जब बेटी जवान हुई तो गलत मंशा रखकर तीन गुंडे उसके घर में रात में घुस आए। बुढ़िया की बेटी ने बड़ी समझदारी से उन तीनों गुंडों को मार डाला। यह लोक कथा स्त्री जाति की बहादुरी और उनकी बुद्धिमत्ता की ओर इंगित करता है। विपत्ति में कभी घबराना नहीं चाहिए बल्कि विपत्ति का सामना करना चाहिए, यही इस कहानी की सीख है।

दुष्टता का परिणाम बुरा: 'बुढ़िया और पागल' (भोजपुरी)[39] कथा में बुढ़िया पागल से परेशान होकर रोटी में जहर मिला देती है। प्रारब्ध उस बुढ़िया का बेटा शहर से आ रहा था, वह रोटी उसी को खाने को मिली और वह मर गया। अतः दुष्टता कभी भी फलदायक नहीं हो सकती।

दुनिया पर नहीं अपने कार्य पर ध्यान दें:

हिंदी की इन लोक कथाओं में जीवन के विविध प्रसंग आए हैं इसी कारण प्रवृतिगत बहुलता दिखती है। यहाँ पर इनका एक सामान्य प्रवृतिगत व्याख्या करने का प्रयास किया गया है। ये हमें जीवन को देखने समझने का एक नजरिया देते हैं। यहाँ पर हमने विस्तृत हिंदी भाषी क्षेत्र के विभिन्न जनपदों से प्रसिद्ध लोक कथाओं को लेकर लोक कथाओं के स्वरूप एवं प्रभाव क्षेत्र को विश्लेषित करने का प्रयास किया है।

–हिंदू महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

संदर्भ–

1. पृष्ठ–9, लोक साहित्य की भूमिका : डा. कृष्णदेव उपाध्याय, साहित्य भवन (प्रा.) लिमिटेड, 2003।
2. पृष्ठ–11, लोक साहित्य की भूमिका : डा. कृष्णदेव उपाध्याय, साहित्य भवन (प्रा.) लिमिटेड, 2003, जनपद, वर्ष 1, अंक–1, पृष्ठ–65।
3. पृष्ठ–22, वही। लोक साहित्य की भूमिका : डा. कृष्णदेव उपाध्याय, साहित्य भवन (प्रा.) लिमिटेड, 2003।
4. पृष्ठ– गप, लोक साहित्य अर्थ और व्याप्ति, डॉ सुरेद गौतम, प्रथम संस्करण–2008, संजय प्रकाशन, दिल्ली।
5. पृष्ठ– 667, श्लोक संख्या 18, अध्याय 15, श्रीमद्भगवद्गीता, गीताप्रेस गोरखपुर।
6. पृष्ठ–53, लोक साहित्य की भूमिका : डा. कृष्णदेव उपाध्याय, साहित्य भवन (प्रा.) लिमिटेड, 2003।
7. अध्याय विभाजन,लोक साहित्य अर्थ और व्याप्ति, डॉ सुरेद गौतम, प्रथम संस्करण–2008, संजय प्रकाशन, दिल्ली।
8. पृष्ठ–99–106, लोकसाहित्य विज्ञान, राजस्थानी ग्रंथागार,जोधपुर, प्रथम संस्करण– 1962, द्वितीय संशोधित संस्करण– 2006
9. पृष्ठ–131, वहीं। लोक साहित्य की भूमिका : डा. कृष्णदेव उपाध्याय, साहित्य भवन (प्रा.) लिमिटेड, 2003।
10. पृष्ठ – 5, भूमिका, वासुदेव शरण अग्रवाल, राजस्थानी लोक कथाएँ (प्रथम खंड), श्री गोविन्द अग्रवाल, प्रथम संस्करण– विक्रम संवत् 2021, भारती भंडार लीडरप्रेस, इलाहबाद।
11. पृष्ठ–53, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।
12. पृष्ठ– 58, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।
13. पृष्ठ–62, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय

पुस्तक न्यास, भारत।

14. पृष्ठ–64, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

15. राजस्थान की लोककथाएँ, https://www.youtube.com/watch\v¾ZilKfBX8jjQ

16. पृष्ठ–15, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

17. पृष्ठ–5, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

18. पृष्ठ–33, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

19. पृष्ठ–36, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

20. पृष्ठ–89, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

21. पृष्ठ–1, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

22. दोहा संख्या 57, सुन्दरकाण्ड, रामचरितमानस, तुलसीदास, गीताप्रेस, गोरखपुर।

23. पृष्ठ–20, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

24. पृष्ठ–23, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

25. पृष्ठ–28, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

26. पृष्ठ–32, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

27. पृष्ठ–73, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

28. पृष्ठ–10, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

29. पृष्ठ–42, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

30. पृष्ठ–47, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

31. पृष्ठ–10, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

32. पृष्ठ–39, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

33. पृष्ठ– 17, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

34. पृष्ठ–69, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

35. पृष्ठ–76, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

36. पृष्ठ–87, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

37. पृष्ठ–88, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

38. पृष्ठ–105, भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

39. पृष्ठ–96,भोजपुरी लोककथा–पुनर्रचना, मिथिलेश्वर, पहला संस्करण 2008, चौथी आवृत्ति 2014, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, दिल्ली (उपक्रम–2) द्वारा आयोजित 'राजभाषा उत्सव एवं प्रदर्शनी' का दीप प्रज्ज्वलित कर उद्घाटन करते हुए सचिव, राजभाषा विभाग सुश्री अंशुली आर्या जी।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, दिल्ली (उपक्रम–2) द्वारा आयोजित 'दो दिवसीय राजभाषा उत्सव एवं प्रदर्शनी' में उपस्थित सचिव, राजभाषा विभाग सुश्री अंशुली आर्या जी एवं अन्य अतिथिगण।

ISSN No. 0970-9398

भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग, एन डी सी सी -II भवन, नई दिल्ली-110001
के लिए डॉ. धनेश द्विवेदी, उप संपादक द्वारा प्रकाशित तथा इन्दु कार्ड एण्ड ग्राफिक्स, चावडी बाजार, दिल्ली द्वारा मुद्रित